पुस्तक
खूब कवितावली

प्रकाशन
सन्मति ज्ञानपीठ
लोहामडी, आगरा–२

द्वितीय परिष्कृत सस्करण
वीर निर्वाण सवत् २४९९
विक्रम सवत् २०३०
ईस्वी सन् १९७३

पुण्य प्रसग .
रचनाकार आचार्य देव की प्रथम जन्मशताब्दी

मूल्य .
पाच रुपये

मुद्रक · रामनारायन मेडतवाल
श्री विष्णु प्रिंटिंग प्रेस
राजा की मंडी, आगरा–२

प्रकाशकीय

जैन-जगत् के एक महान ज्योतिर्धर आचार्य के अन्त स्रोत से नि सृत काव्य-वाणी का सयोजन करके प्रवर्तक प० मुनि श्री हीरालालजी महाराज ने धुँधले और मिटे जा रहे काव्य-चिह्नो को श्रद्धा से, श्रम से, सतर्कता से समेट कर सेफ (Safe) मे रख लेने का एक भगीरथ प्रयत्न किया है। इसके लिए समाज श्रद्धेय प्रवर्तक श्री जी का चिर ऋणी रहेगा।

इतना तो अवश्य कहना होगा कि कविता केवल आकाश में उडने का नाम नही है। वस्तुत वही 'कविता' कविता है, जो सब ओर से जन-जीवन को स्पर्श करे, सोई हुई मानवता के भाग्य जगाए, जीवन की सच्ची राह बताए। आचार्य श्री जी की अन्तर्वाणी इसी कसौटी का खरा नमूना है। वह हमे जीवन की विडम्बना से बचाती है और जीवन को स्वस्थ और सही राह बताती है।

प्रस्तुत प्रकाशन कवितावली का द्वितीय सस्करण है, इसी पर से अनुमान लगाया जा सकता है कि कवितावली सहृदय जनता मे कितनी अधिक लोकप्रिय रही है। प्रस्तुत सकलन के प्रकाशन के लिए जिन महानुभावो ने द्रव्य सहायता प्रदान की है, हम हृदय से उनका आभार मानते हैं।

आशा है, सहृदय पाठक प्रस्तुत काव्य-सग्रह का हृदय से स्वागत करेंगे और परमाराध्य आचार्य देव श्री खूबचन्द्रजी महाराज की अमृत-वाणी का रसास्वादन करके अधिक से अधिक लाभ उठाएँगे।

सोनाराम जैन

मन्त्री सन्मतिज्ञान पीठ

परम श्रद्धेय गुरुदेव आचार्यश्रेष्ठ, पूज्य श्री खूबचन्द्रजी महाराज की रचनाओ के सम्बन्ध मे मैं क्या कहूँ। उनके सम्बन्ध मे तो प्रबुद्ध साधुओ एव श्रावको का भावविमुग्ध हृदय ही बोलता है। गुरुदेव की रचनाएँ मालवा, मेवाड, उत्तरप्रदेश और पजाब आदि सुदूर प्रदेशो तक मे जनता के कठ पर मुखरित होती रही हैं, और अनेक मुनिवरो के प्रवचनो की आधारभूमि भी।

धर्म प्रेमी सज्जनो के आग्रह पर मैंने यत्र तत्र बिखरी हुई कविताओं का विषयविभाग के रूप मे 'यावद् बुद्धि बलोदय' सकलन किया है। प्रथम सस्करण काफी लोकप्रिय रहा। और वह जल्दी ही समाप्त हो गया। दूसरे सस्करण की वर्षों से माँग चली आ रही थी। अत पूज्य गुरुदेव की पुनीत जन्म शताब्दी की मगल स्मृति मे यह द्वितीय सस्करण का सम्पादन किया गया है। प्रथम सस्करण की अपेक्षा यह सस्करण अधिक उत्कृष्ट हुआ है, सहृदय पाठक स्वय इसकी अनुभूति करेंगे।

मानव के श्रम की फिर भी एक सीमा है। अत प्रस्तुत सम्पादन मे यदि भ्रान्तिवश कही कोई भूल रही हो तो तदर्थ क्षमायाचना है।

—हीरा मुनि
कमला नगर, दिल्ली

खूब कवितावली के प्रकाशन के सहयोगी उदार दान दाता

५००) प्राणिमित्र, पद्मश्री श्री आनन्दराजजी सुराणा ।
५००) वर्द्धमान जैन स्थानक वासीश्रावक सघ, दरियागज, देहली
५०१) वीरसेन जी, अशोका पार्क रोहतक रोड, देहली—३५
२०१) सलफा एम्ब्रायडरी लाहौर वाले, नई सडक, देहली—६
२५१) टेकचन्द जी मदनलाल जी, वीरनगर, देहली—७
२५१) अमरनाथ जी, १०३ वीरनगर, देहली—७
२५१) रोशनलाल जी दुग्गड, वीरनगर, देहली—७
२५१) रामलालजी सर्राफ, वीरनगर, देहली—७
२५१) जम्बू प्रसाद जी सुदर्शन लाल जी, मोत्याखान, देहली—५५
२५१) मोहनलालजी चमन लाल जी, नया कटरा, चादनी चौक, दिल्ली
२५१) सुदर्शन लाल जी, कूँचा मीरासीका, चावडी बाजार "
२०१) दुष्यत कुमार जैन, वीरनगर, देहली—७
१०१) सुदर्शन लाल जी जैन, प्रोफेसर वीरनगर, देहली,
१०१) वीर शरणजी जैन, वीरनगर, देहली—७
१०१) वनारसीदास जी पूरनचन्द जी सोनी, 51/524 A जवाहरनगर, दिल्ली
१०१) प्राणलाल जी दोसी, कमलानगर, देहली ७
१०१) हेमचन्द्र जी लोढा, कटरा नवाब साहब, देहली ६
१५१) जवाहरलाल जी तिलोक चन्द्र जी, चावडी बाजार, दिल्ली
१०१) चुन्नीलालजी नाथालाल जी राज सोनी, खम्बात, गुजरात
१२५) गोपाल चन्द्रजी सतोप कुमार जी, कटरा प्यारेलाल, चाँदनी चौक, दिल्ली
१०१) हुक्मचन्द्र जी सूरजभान जैन, १८, ६ शक्तिनगर, दिल्ली
१०१) विनोद कुमार गोपाल जी जोसा, १०३ डी कमलानगर, देहली,

१०१) चौ० वेदप्रकाश जी विनोदकुमार जी, कटरा सुभापचन्द्र, दिल्ली,
१०१) वख्शीराम विजय प्रकाश, कटरा भगी, चाँदनी चौक ,,
१०१) सूवालाल जी हरदयाल जी, कटरा मारवाडी, देहली—६
१०१) श्री चन्द्र जी जैन द्वारा जैन वन्धु एच, पार्क माडेल टाउन, देहली
१००) एस. एम जैन श्रावक सघ, कैलाशनगर, मा सलेखचन्द्र जी जैन ,,
५१) हीरानन्द विशम्वरलाल, कटरा सुभाप, चाँदनी चौक, देहली
५१) वनारसी दास जी रामअवतार, कटरा नया, चाँदनी चौक, देहली
५१) दीवान चन्द्र जी जैन, ८२६ तिलक गली, कश्मीरी गेट, देहली
५१) खैरातीलाल जी तपस्वी, १२६ वीरनगर, देहली,
३१) श्रीमती कमलावाई, C/o ला० सतोष कुमार, नई देहली
२५) प्रमोदकुमार जैन, २६ कमलानगर, देहली—७
२५) मगतराम जी जैन, १४० वीरनगर, देहली—७
२१) योगेन्द्र लाल जी, ३०१ डाकखाना गली, शाहदरा देहली—३२
२१) वैजनाथ जी, वीरनगर, देहली—७
१०१) कश्मीरी लाल जी गुड वाले, १७/२६ शक्तिनगर, देहली—७
१०१) लाला फतहचन्द्र जी जैन C/o लक्ष्मण दास मोतीराम, चाँदनी चौक, वैक ऑफ इन्डिया के पास, दिल्ली
५१) लाला लोटन मल सूरजमल सचेती, मकान न० ७ किशनदत्त जी, मालीवाडा, देहली—६

पूज्य आचार्य श्री खूबचन्दजी महाराज की संक्षिप्त

जीवन-झाँकी

वाग्जन्मवैफल्यमसह्यशल्यं,
गुणाद्भुते वस्तुनि मौनिता चेत् ।
—महाकवि हर्ष

विश्व के इस विराट् पुष्पोद्यान के आँगन मे प्रतिदिन लाखो-करोडो निर्गन्ध फूल खिलते हैं और मुरझा जाते हैं। उनसे प्रकृति की सुन्दरता और मोहकता मे कोई श्रीवृद्धि नही होती। बहुतो के सम्बन्ध मे तो ससार यह भी नही जान पाता कि वे कब खिले और कब मुरझा गये ! न जनता की आँखो ने उनका खिलना जाना और न मुरझाना ! वे केवल कहने मात्र को फूल थे। उनके अन्दर जन-मन-नयन के आकर्षण के लिए न अपनी कोई मादक गन्ध थी, और न कोई मोहक रूपाकृति।

पर गुलाब का फूल जब डाल पर खिलता है, तो क्या होता है ? वह आंख खोलते ही अपने दिव्य सौरभ दान से प्रकृति की गोद को अपनी मोहक सुगन्ध से भर देता है ! हजार-हजार हाथो से सुगन्ध लुटाकर भूमण्डल के कण-कण को महका देता है।

इसी प्रकार इस धराधाम पर न मालूम कितने मानव जन्म लेते हैं और मरते हैं। ससार न उनका पैदा होना जानता है और न मरना। वे स्वार्थ-वासना के पतगे और भोग-विलास के कीडे ससार की अँधेरी गलियो मे कुछ दिन रेंगते हैं और आखिर काल-लीला के ग्रास हो जाते हैं। उनके जीवन का अपना कोई ध्येय नही होता, कोई लक्ष्य नही होता। उनका जीवन इस साढे तीन हाथ के पिंड या अधिक से अधिक एक छोटे-से परिवार की सीमा तक ही महदूद रहता है। इसके आगे वे न सोच सकते हैं और न समझ सकते हैं।

परन्तु, कुछ महामानव धरतीतल पर गुलाब का फूल बनकर अवतीर्ण होते हैं। जिनके आंख खोलते ही घर एव परिवार का बगीचा खिल उठता है। समाज

का सूना आँगन मुस्कराहट से भर जाता है और राष्ट्र प्रसन्नता तथा आशाओ की हिलोरें लेने लगता है। वे स्वय जागरण की एक गहरी अँगडाई लेकर सोई हुई मानवता के भाग्य जगाते हैं। उनको पाकर मानव-जगत् एक नयी चेतना, एक नयी स्फूर्ति का अनुभव करता है।

पूज्य आचार्य श्री खूबचन्दजी महाराज ऐसे ही एक महान् दिव्य आत्मा थे, जो २२ वर्ष की इठलाती हुई तरुणाई मे भोग-विलास और धन-वैभव को ठोकर मारकर त्याग-वैराग्य तथा सयम के पुण्य-पथ पर चले। उनके साधना-जीवन का हर पहलू इतना स्वच्छ, निर्मल और उज्ज्वल था कि आज भी वरबस वह हमे अपनी ओर आकर्षित कर रहा है।

उनका जन्म चिरस्मरणीय माता श्री गेंदीवाई की कोख से कार्तिक शुक्ला ८ बुधवार वि० स० १९३० को निम्बाहेड़ा (राजस्थान) मे सेठ टेकचन्द जी जेतावत ओसवाल के घर हुआ था। जब उन्होने पृथ्वीतल पर आँखें खोली तो धन-वैभव उनके चारो ओर विखरा पडा था। कीर्ति और यश उनके आँगन मे छम-छम खेलते थे। सुख-समृद्धि उन्हे पालना झुलाते थे। एक भरे-पूरे और समृद्ध वातावरण में उनका लालन-पालन हुआ। ये वचपन से सौम्य और शान्त स्वभाव के धनी थे। १६ वर्ष की उम्र मे अठाना गाँव के सेठ देवीचन्द जी वोहरा की सुशीला कन्या साकरवाई के साथ वि० स० १९४६ मृगशिरशुक्ला पूनम शनिवार को उनका पाणिग्रहण सस्कार सम्पन्न हुआ। पत्नी वडी धर्मशीला, पतिपरायणा, सुन्दरी एव आज्ञाकारिणी थी।

वाल्य-काल से ही खूबचन्दजी को सत्सग करने और सन्त-वाणी सुनने का वडा शौक था। साधु-सन्तो के आगमन का समाचार सुनकर उनका मन-मयूर नाच उठता था। मदमाता यौवन भी उनकी धर्म-चेतना और साधु-सग की भावना को मन्द न कर सका। आसपास कही भी सन्त-समागम होता तो वे सब काम-काज छोडकर दौडे जाते और उपदेशामृत का पान करके फूले न समाते।

शादी के चार वर्ष वाद यानी २० वर्ष की भरी जवानी मे सन्तवाणी श्रवण कर उनके अन्तर्मन मे वैराग्य की एक लहर जागी। जिस दीवानी जवानी मे झूम कर कुछ मनचले युवक अपनी यह वासना-मूलक वेसुरी तान छेडा करते हैं कि —

'ऐश कर दुनिया मे गाफिल, जिन्दगानी फिर कहाँ !
जिन्दगानी गर मिली भी, नौजवानी फिर कहाँ !'

परन्तु, हमारे प्रबुद्ध चरित नायक पर मदमाते यौवन का नशा अपना वह विकृत रग न चढा सका। वहाँ तो उसे अपना दीवाना रूप छोड कर यह सुहावना राग ही अलापना पडा —

"कुछ कर लो नौजवानो ! उठती जवानियां हैं।
खेतो को दे लो पानी यह बह रही है गगा।"

भोग-विलास के सारे साधन चारो ओर अपनी मादकता बिखेर रहे थे ! पत्नी प्रेम-पुजारिणी के रूप मे चरणो की चेरी बनी हुई थी। चहुँ ओर से मन को गुदगुदा देने वाला परिवार का प्यार और स्नेह बरस रहा था। इतना होते हुये भी उनका मन ससार की वासनाओ और प्रपचो से उत्तप्त हो उठा ! अन्तर्हृदय में वैराग्य की जलती हुई चिनगारी सुलग उठी ! आखिर, मन मे ठान ही तो लिया कि वासना के जाल को तोड कर, आत्म-चिन्तन एव साध्वाचार की धूनी रमाकर, सयम तथा तपश्चरण के तपते हुए अग्नि-पथ पर वज्रचरण बढा कर, सोई हुई आत्म-शक्तियो को जगा कर, मुझे जीवन की ऊँचाइयो को पार करना है। वस्तुत ऐसी भरी-पूरी स्थिति मे ही त्याग-भावना का उदय होना सच्चा त्याग है। जिसके लिये हमारे शास्त्रकार ऊर्ध्ववाहु होकर स्पष्ट घोषणा कर रहे हैं :—

'जे य कते पिए भोए, लद्धे विपिट्ठी कुव्वई।
साहीणे चयई भोए, से हु चाइत्ति वुच्चइ।'

मन मे साहस की बिजली भर कर जब उन्होने अपनी बात माता-पिता के सामने रखी तो सारे परिवार मे एक तूफान-सा आ गया। एक क्षुब्ध हलचल सी मच गई। सब परिजन और पुरजन आ-आकर लगे कहने और लगे समझाने—"रहने दो इन वैराग्य की बातो को ! तुम अभी बच्चे हो, तुम्हें क्या पता कि साधुता क्या होती है ? साधुता का मार्ग कितना कठोर और कांटो से भरा है ? यह अभी तुम्हारी शक्ति से बाहर की चीज है। वहां तो हर घडी कठिनाइयां जीवन को चारो ओर से घेरे खडी रहती हैं। होश ठिकाने आजायँगे जब चलोगे उस मार्ग पर !"

पर उनके वैराग्य के दीपक की ज्योति इतनी कच्ची न थी, जो एक फूक से ही बुझ जाती ! साधु जीवन की कठोरता को सुनकर ही वैराग्य का रग काफूर हो जाता। परिवार वालो की इन बहका देने वाली बातो का उनके मन पर तनिक भी असर न हुआ ! पिता ने समझाया। माता ने हुलसाया ! पत्नी ने अपना मोहक जाल बिछाया ! पर, मजाल जो वे अपने सकल्प से जरा भी विचलित हो जाय। जब घर वालो ने देखा कि हमारे सब हथियार भोठे हो गये हैं, सब दलीलें और युक्तियां व्यर्थता मे विलीन हो गई हैं, तो उन्हे शास्त्रमर्यादा के आधार पर एक उपाय सूझा। वह यह कि चाहे कुछ भी हो, हम इसे मुनि-दीक्षा लेने की अनुमति नही देंगे। बिना अनुमति के यह कर भी क्या सकता है ? डूबते हुओ को तिनके का सहारा मिल गया।

लेकिन, खूबचन्दजी भी यथानाम तथा गुण के अनुसार 'खूब' ही थे। दिन पर दिन उनके मन मे यह भावना जोर पकडती गयी कि "जिस सयम के मार्ग पर

चलने का दृढ संकल्प कर लिया है, जिस प्रकाश को आत्मसात् करने के लिए मन वेतरह लालायित हो उठा है, उसकी प्राप्ति के लिए अव कोई कसर न उठा रखूंगा। पीछे कदम हटाने का नाम न लूंगा। अव तो मजिल पर पहुच कर ही दम लेना है। सचमुच सच्चा वीर और साहसी कठिनाइयो के सामने मीना तान कर खडा हो जाता है। पीछे हटना उसकी शान के खिलाफ है, आगे वढना उसका जन्मजात अधिकार है —

'न पीछे हटाया कदम को बढ़ाकर।
अगर दम लिया भी तो मजिल पै जाकर॥'

आज्ञा न मिलने के कारण दो वर्प तक घर मे ही तप साधना का जीवन चलता रहा। आत्म-मन्थन होता रहा। अन्त मे परिवार वालो को उनके वज्र-साहस और अचल धैर्य के सामने झुकना पडा। आखिर, वालू रेत की दीवारें गगा की वेगवती प्रचड धारा को कव तक रोके रह सकती हैं। कृतप्रतिज्ञ वीर के मन सकल्प को कैसे मोडा जा सकता है :—

'क ईप्सितार्थस्थिरनिश्चय मन,
पयश्च निम्नाभिमुख प्रतीपयेत्।'

मजवूर होकर घर वालो को कहना पडा—"अच्छा, जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो। अव तुम्हे रोकना व्यर्थ है। तुम्हारी ज्योति वह ज्योति है, जिसे कोई वुझा नही सकता। जिस राह पर चलने का तुमने पक्का इरादा कर लिया है, उस पर आगे वढने के लिए हमारी तरफ से खुली आज्ञा है।"

अनुमति का स्वर कानो मे पडते ही उनका मन हर्पविभोर होकर उछलने लगा। हृदय मे आनन्द का क्षीर-सागर ठाठे मारने लगा। दरअसल ऐसे दृढप्रतिज्ञ वीर ही सयम की कठोर राह के राहगीर वन सकते हैं, जिनका मन-मेरु वाधाओ के प्रवल झझावातो से जरा भी कम्पित नही होता। क्योकि सयम का मार्ग कोई फूलो का विछौना नही है। वह तो तलवार की नगी धार पर धावन करने का असिधारा व्रत है। जिस पर कनक-कामिनी के जाल को तोडने वाले विरले ही धीर वीर चल सकते हैं, कायर नही :—

'रमणी के चचल नैनो का या लक्ष्मी-वैभव का जाल।
तोड सका है इस पृथ्वी पर विरला ही माई का लाल।'

अस्तु, अनुमति मिलते ही श्री खूवचन्द्रजी ने आपाढ शुक्ला ३ स० १९५२ को सोमवार के दिन नीमच शहर मे सुप्रसिद्ध श्रमणश्रेष्ठ, वादी-मान मर्दक, पं० श्री नन्दलालजी महाराज के चरणो मे वडी धूम-धाम और समारोह के साथ जैनेन्द्री

दीक्षा धारण की। उनके दस वर्ष वाद धर्मशीला पत्नी साकरवाई ने भी सयम के मार्ग पर चल कर छाया की तरह पति का अनुसरण किया।

वैराग्य मूर्ति श्री खूबचन्द्रजी ने मुनि-दीक्षा लेने मात्र से अपने आपको कृत-कृत्य नही समझा। जीवन के समुन्नयन एवं उद्द्योत की तीव्र भावना ने उन्हे तथा-कथित आलसी, निष्क्रिय साधु के रूप मे नही बैठने दिया। उनकी अन्तरात्मा वोल उठी कि "ज्ञान के प्रकाश के विना आचार चमक नही सकता। विना ज्ञान के आचरण अन्धा है, आगे वढने मे असमर्थ है। ज्ञान की ज्योति के अभाव मे साधक कही भी ठोकर खाकर गिर सकता है। जव तक तेरे पास आचार का कवच और ज्ञान की मशाल न होगी, तव तक जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य की ओर निर्भयभाव से गति-प्रगति नही की जा सकती। ज्ञान-सरोवर गुरुदेव की चरण-शरण मे आकर यदि ज्ञान की प्यास न वुझा सका तो इससे वढकर भाग्यहीनता और क्या होगी ?" गुरुदेव के सामने मन के भाव प्रकट किये तो गुरु ने गम्भीर मुद्रा मे कहा—"वत्स ! तुम्हारा विचार विल्कुल ठीक है। विना ज्ञान के तो मनुष्य पशु है। ज्ञान का प्रकाश लिये विना साधक एक कदम भी आगे नही वढ सकता। पहले ज्ञान है और वाद मे आचार है। भगवान महावीर ने कहा है

'पढमं नाण तओ दया।'

गुरुदेव की अन्तर्वाणी ने शिष्य के हृदय मे विद्युत् का काम किया। विनय भाव से गुरु चरणो मे वैठकर ज्ञान-साधना का श्री गणेश किया। जैनागमो और अन्य ग्रन्थो का जमकर अध्ययन तथा चिन्तन-मनन किया। नम्रता, विनय-भाव और कठोर पुरुषार्थ के कारण उनका ज्ञान दिन दूना, रात चौगुना चमकता चला गया। इन-गिने वर्षों मे ही वे एक अच्छे पण्डित, चोटी के आगमज्ञ और विद्वान् बन गये।

आपका जीवन वडा ही तपोमय था। आप प्रतिवर्ष अढाई मास का तपश्चरण अवश्य कर लिया करते थे। वहुत दिनो तक १२ घण्टे का मौन व्रत भी चलता रहा। आपका सयत जीवन, त्याग-वैराग्य का ज्वलत नमूना था। स्वभाव इतना शान्त और मधुर था कि जो एक वार भी आपके सम्पर्क मे आ जाता, वह वैराग्य-भावना तथा शान्त स्वभाव की अमिट छाप लिये विना न लौटता। आपकी व्याख्यान-शैली तथा उपदेश-पद्धति वडी ही वैराग्यमय, रोचक और ओजपूर्ण थी। साथ ही कण्ठ एव स्वर की मधुरता और सरसता जन-मन को मुग्ध कर देती थी। सत्य और अहिंसा का डका वजाते हुए जिधर से भी आप निकल जाते, हजारो की सख्या मे जनता आपके दर्शनो के लिये उमड पडती। आपकी उपदेशधारा इतनी प्रभावशालिनी और चमत्कार पूर्ण थी कि उससे प्रभावित होकर जयपुर-नरेश श्री माधोसिंह तथा अलवर-नरेश श्री जयसिंह ने महापर्व सवत्सरी के दिन हमेशा के लिये अगता रखाया। सचमुच आपकी वाणी मे जादू का असर था।

जिन-वाणी का अमृत-पान कराते हुये, जन-जीवन को जगाते हुये, गाँव-गाँव मे अहिंसा, सत्य, दया, दान, शील और सतोष आदि जीवन सिद्धान्तो की दुन्दुभी वजाते हुए भारत के मालवा, मेवाड, मारवाड, दिल्ली, आगरा, मेरठ, पजाव आदि प्रान्तो और नगरो मे आपका वडा शानदार और मगलकारी विचरण हुआ। सव ओर जनता ने आपका हार्दिक स्वागत किया और आपकी वाणी का सुधा-पान करके अपने को धन्य-धन्य समझा। आपकी आचार-निष्ठा, शान्तिप्रियता एव स्वभाव की मृदुता से इतर सम्प्रदाय वाले विरोधी पक्ष भी प्रभावित थे और सादर सभक्तिभाव आपके चरणो मे शीश झुकाकर अपना हार्दिक सम्मान व्यक्त करते थे।

संसार-क्षेत्र मे जो सम्वन्ध पिता और पुत्र का है, इसी भावना से अनुप्राणित होकर एक चिन्तनशील आचार्य का कहना है कि – 'पुत्ता य सीसा य सम भवित्ता'— अर्थात् पुत्र और शिष्य वरावर होते हैं। हमारे चरित-नायक को भी पुत्र-स्थानीय प० श्री कस्तूरचन्द्रजी, प० श्री केसरीमलजी, पं० श्री सुखलालजी, प० श्री हर्षचन्द्रजी और प० श्री हजारीमलजी पांच योग्य शिष्य-रत्न प्राप्त हुये थे, जिन्होने अपने विनीतभाव, ज्ञान-निष्ठा एव जीवन की सरस मधुरिमा द्वारा सदा गुरु की महत्ता को गौरवान्वित किया।

सम्प्रदायो के रूप मे अलग-अलग विखरी हुई समाज की शक्तियो को सगठित करने, एकता का रूप देने और उदारवृत्ति से मिल-जुलकर रहने के आप प्रमुख और प्रवल पक्षपाती थे। आज के प्रगतिशील युग मे कोई भी समाज पारस्परिक सहयोग और सगठन के विना ससार की समस्याओ के आगे टिक नही सकता—यह महास्वर आपकी वाणी मे गूँजता रहता था। यही कारण था कि जव स० १९९० मे अजमेर मे होने वाले अखिल भारतीय मुनि-सम्मेलन की चर्चा आपके सामने आई तो आपका हृदय हर्षातिरेक से गद्गद् हो उठा। अत्यन्त प्रसन्न भाव से सम्मेलन मे पधारने की स्वीकृति देकर आपने अपने हृदय की उदारता और विशालता का प्रत्यक्ष परिचय दिया और मार्ग की कठिनाइयो से जूझते हुए ठीकसमय पर पधार कर मुनि-सम्मेलन के रगमच की शोभा को चार चांद लगा दिये। आपने अपने सम्प्रदाय की ओर से सफल प्रतिनिधित्व किया। मुनि-सम्मेलन मे आने वाले मुनि-मण्डल पर आपके स्वभाव-माधुर्य तथा शान्त प्रकृति की अमिट छाप पड़ी।

मौन भाव से सघ-सेवा, कर्त्तव्य-पालन तथा निष्काम सयम-निष्ठा—यही आपके जीवन का उज्ज्वल आदर्श था। मान-प्रतिष्ठा या पद-लिप्सा की भूख आपको छू तक न गई थी। पर, खिला हुआ फूल कही पत्तों मे छिपा रह सकता है ? आपके सद्गुणो की मधुर सुगन्ध ज्यो ही समाज के आँगन मे फैली तो प्रतिष्ठा अपने आप पीछे फिरने लगी। अपने पीछे दौडने वालो से प्रतिष्ठा छाया की तरह कोसो दूर भागती

है, और पीठ देकर चलने वालो की वह चरण-चेरी वन कर रहती है—यह एक माना हुआ सार्वभौम सिद्धान्त है। कविता की भाषा भी यही कहती है :—

'भागती फिरती थी दुनिया जब तलब करते थे हम।
अब जो नफरत हमने की वह वेकरार आने को है ॥'

अस्तु, रतलाम मे वि० स० १६६१ फाल्गुन शुक्ला ३ शुक्रवार को आपके समुज्ज्वल व्यक्तित्व और दायित्व-निर्वाह की अपूर्व क्षमता पर मुग्ध होकर सघ ने आपको आचार्य पद प्रदान करके अपना हृदय-सम्राट् स्वीकार किया और समाज का नेतृत्व आपके हाथो मे सौंप कर अपने को भाग्यशाली समझा। आपने सघ के इस महान् गुरुतर दायित्व को भी वडी धीरता, गम्भीरता, कर्तव्य-बुद्धि और निर्मल भाव से जीवन के अन्तिम क्षणो तक सफलतापूर्वक निभाया।

आपका हृदय इतना उदार और विशाल था कि सम्प्रदायविशेष के आचार्य होते हुए भी साम्प्रदायिकता से आप विल्कुल अलग-थलग थे। आपकी इस उदारवृत्ति से दूसरे सम्प्रदाय भी वडे प्रभावित थे। इसका प्रत्यक्ष दर्शन तो तव हुआ जब स० १६६३ मे नारनौल श्री सघ ने पूज्य श्री पृथ्वीचन्द्रजी म. के आचार्य-पद-महोत्सव पर पधारने की आपसे विनम्र विनती की और आचार्य श्री जी ने बिना ननुनच किए प्रसन्न मन से अविलम्ब स्वीकृति प्रदान करके उसे सक्रिय रूप दिया। जव आप नारनौल पधारे तो वहाँ की जनता प्रसन्नता से नाच उठी। वहाँ के स्वागत समारोह का दृश्य वडा ही भव्य था। आचार्य श्री की जय-जय ध्वनि से आकाश गू ज रहा था। तत्रस्थ मुनिराजो और श्रावक-वर्ग ने आपको अपने बीच पाकर हर्षातिरेक की अनुभूति की। नारनौल का जन-वर्ग आपके वैराग्यमय जीवन, सरल सौम्य स्वभाव और प्रभावशील व्याख्यान-शैली से अत्यन्त प्रभावित हुआ।

दिल्ली श्रीसघ के भावपूर्ण आग्रह तथा भक्ति भाव से प्रेरित होकर आचार्य श्री जी दिल्ली मे कई वर्ष विराजमान रहे। आपकी नम्र और प्रभावोत्पादक वाणी से स्थानीय श्रीसघ मे धर्म की अच्छी जागृति रही। वहाँ का युवक-वर्ग भी आपकी शान्त और जादू भरी वाणी पर मुग्ध था।

ब्यावर-सघ की विनम्र विनती को ध्यान मे रखते हुये आपका विहार दिल्ली से व्यावर की ओर हुआ। परन्तु उधर पहुच कर आपका शारीरिक स्वास्थ्य कुछ ठीक नही रहा। जीवन की गोधूलि वेला मे भी आप इतने कर्मठ और धर्मनिष्ठ थे कि स्वाध्याय, ध्यान, चिन्तन आदि मे अपनी ओर से कोई कमी न रखते थे। समाज इस ढलते हुए, अस्ताचल की ओर खिसकते हुए सूर्य के प्रति यही मगल कामना करता रहा कि यह महान् सूर्य अभी कुछ दिनो और जगमगाता रहे। पर, विधि को यह मजूर न था। स० २००२ चैत्र शुक्ला तृतीया को पार्थिव शरीर का

आवरण छोड कर जैन-जगत् की वह प्रदीप्त दिव्य ज्योति समाज की आंखो से ओझल हो गई।

भौतिक शरीर से न सही, पर यश.शरीर से आचार्य श्री जी जन-मन मे आज भी जीवित हैं। जीवन की सही दिशा की ओर मूक सकेत कर रहे है। हमारा कर्तव्य है कि भक्ति भाव से उस महान् ज्योति के दिव्य गुणो को कोटि-कोटि नमन करे और उनके बतलाये मार्ग पर चल कर जगमग जीवन ज्योति जगाएँ।

—मुनि सुरेशचन्द्र शास्त्री

विषय-सूची

१

स्तवन

: १ :

चतुर्विंशति जिन-गुणगान

(तर्ज—आज रग वरसे रे २, म्हारा नेमकु वर बिन जिवडो तरसे रे)

शुभ फल पावो रे, शुभ फल पावोरे।
चौवीस जिनन्दजी का नित गुण गावो रे ॥टेर॥

धर्म जिनेश्वर चन्दा प्रभुजी, ऋषभ प्रथम अवतारी रे।
महावीर कुन्थु जिन जपता, जय-जय कारी रे ॥ १ ॥

शान्ति नाम से साता बरते, अनन्त सुपार्श्व ध्यावे रे।
सुमतिनाथ प्रभु पार्श्व परसतां पाप पलावे रे ॥ २ ॥

अरिष्टनेमि श्री मुनिसुव्रतजी, विमल-निर्मल गुणधारी रे।
पद्म प्रभु, अभिनन्दन, आवागमन निवारी रे ॥ ३ ॥

श्री श्री सम्भव नमि मल्लि, महाराज पाप मल हरिया रे।
वासुपूज्य शीतल जिन सुख, शिवपुर का[1] वरिया रे ॥ ४ ॥

सुविधिनाथ श्री अजित प्रभु पच्चीस भावना पाली रे।
अरहनाथ श्रेयाँस अचल पद लियो सम्भाली रे ॥ ५ ॥

इण विध जाप जपै जिनवर का, पेष्ट[2] तणे परभावे रे।
अरति भय दुःख दूर टले, [3]कमला घर आवे रे ॥ ६ ॥

फरिदकोट पूज्य [4]मुन्नालालजी, नव ठाणा से आया रे।
महामुनि नन्दलाल तणा शिष्य, जिन गुण गाया रे ॥ ७ ॥

---

१. वरण किया-पाया, २ पेंसठिया यत्र, ३ लक्ष्मी, ४ पूज्य हुक्मीचन्द जी म० की सम्प्रदाय के एक आचार्य।

: २ .

वीर-गुण-गान

(तर्ज—सग चलू जी पिया)

मत भूलो कदा रे, मत भूलो कदा, वीर प्रभु के गुण गावो सदा ॥ टेर ॥
जो-जो भाव प्रभु प्रगट किया, गणधर सूत्रो मे गून्थ लिया ॥ १ ॥
प्रभुजी की वाणी को आज आधार, सुन सुन सफल करो अवतार ॥ २ ॥
जल से नहाया तन मैल हटे, प्रभुजी की वाणी से पाप कटे ॥ ३ ॥
तुरत फुरत सव विपत टले, जिहाँ तिहा वंछित आश फले ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलालजी हुकुम दिया, जद रावलपिंडी चौमास किया ॥ ५ ॥

: ३ :

जिन-गुण

(तर्ज—पूर्ववत्)

जिनराज ऐसा रे, जिनराज ऐसा, निस दिन म्हारे मन मे बसा ॥ टेर ॥
जगत मे जहाज सहाज[1] जगदीश, शत्रु मित्र पर राग न रीश ॥ १ ॥
गुण तो अनन्त दीठा नेण ठरे, इन्द्रादिक सुर पाय परे ॥ २ ॥
वाणी तो वरसे ज्यो अमृत धार, भव जीव सुणो जाँके हर्ष अपार ॥ ३ ॥
जिहां तिहाँ विचरे श्री भगवान, धर्म को उद्योत करे जिम भान[2] ॥ ४ ॥
माडलगढ मे मुनि नन्दलाल, तस शिष्य जोड बनाई रसाल ॥ ५ ॥

: ४

जिन-वाणी

(तर्ज पूर्ववत्)

जिनवाणी ऐसी रे, जिनवाणी ऐसी, कुमति गई ने म्हारे सुमति वसी ॥ टेर ॥
सुनत मिटत दुष्ट कर्म अरी, जो भव[3] जीव सुने भाव धरी ॥ १ ॥

---

१. सहायक २. सूर्य ३. भव्य

जोजन वाणी परकाशे जिनराज, इन्द्रादिक आवे सुणवा के काज ।। २ ।।
सुन सुन उत्तम जीव अनेक, उतर गया भव-सागर देख ।। ३ ।।
काम क्रोध मद लोभ की झाल[1], शीतल होय सुनता तत्काल ।। ४ ।।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य जान, गायो चित्तौड मे करिये प्रमान ।। ५ ।।

: ५ :

परमेष्ठी-स्तुति

(तर्ज—अवधू सो जोगी गुरु मेरा)

आछो आनन्द रंग बरसायो, मैं तो देख सभा हुलसायो ।। टेर ।।
अरिहन्त नमूं पद पहले, भव जीवा ने शिवपुर मेले,[2]
लोकालोक को स्वरूप बतायो ।। १ ।।
दूजे पद श्री सिद्ध ध्याऊं, कर जोडी ने शीश नमाऊं ।
जनम मरणको दुःख मिटायो ।। २ ।।
आचारज तीजे पद सोहे, चारो तीरथ के मन मोहे ।
ज्ञान ध्यान मे चित्त रमायो ।। ३ ।।
उपाध्याय मेरे मन भावे, कई सन्तो को ज्ञान भणावे ।
जा की बुद्धि को पार न पायो ।। ४ ।।
सर्व साधुजी गुण का दरिया, जाने पाप सहु पर हरिया ।
मोक्ष मुक्ति को पथ बतायो ।। ५ ।।
ये तो पाचो ही पद भज भाई, नित एक चित्त ध्यान लगाई ।
कारज सिद्ध हुवे मन च्हायो ।। ६ ।।
नन्दलाल मुनि गुणधारी, तस शिष्य कहे हितकारी ।
मैं तो मगलिक आज मनायो ।। ७ ।।

: ६ :

गौतम-गुणगान

(तर्ज—रे जीवा ! जिनधर्म कीजिए)

गौतम गणधर वदीए, पूरण लब्धि-भण्डार ।।टेर।।
चौवीसमा वर्धमान के, चेला चतुर सुजान ।
सब साधाँ मे शिरोमणि, ऊगा जगत मे भान ।। १ ।।

---

१ ज्वाला २ भेजे-स्थापित करे

चवदे पूर्वना[१] पाठीया, ज्ञान चार वखान।
तपस्या करी चित निर्मली, नहीं मन्न[२] गिल्यान ॥ २ ॥
परवत में मेरु वड़ो, सीता[३] नदियां के मांय।
स्वयंभूरमण दविया[४] विषे, ऐरावत[५] गज मांय ॥ ३ ॥
सब रस में इक्षु रस वड़ो, दान में वड़ो अभय दान।
एम अनेक हैं ओपमा, कहाँ लग करूँजी वखान ॥ ४ ॥
सर्व वाण्[६] वर्ष नो आऊखो, दश जुग रया घर मांय।
पीछे एवा गुरु भेटिया, चौवीसमां जिनराय ॥ ५ ॥
तीस वरस छद्मस्त[७] रया, पीछे केवल ज्ञान।
द्वादश वर्ष नो पालने, पाया पद निर्वान ॥ ६ ॥
अनन्त सुखां मे विराजिया, माता पृथ्वी के नन्द।
'खूबचन्द' कहे थारा नाम से, भयो मगन आनन्द ॥ ७ ॥

: ७ :

सुधर्मा गणधर का स्तवन

(तर्ज—संग चन्दजी पिया)

कर कुमति विदा ! कर कुमति विदा !
स्वामी सुधर्माजी ने वंदूं सदा ॥ टेर ॥

वीरजी के विराज्या परथम पाट, सुखी बताई[८] जाने सुगति की वाट ॥ १ ॥
सो वर्ष को आऊखो पाया तास, पच्चास वर्ष रहीया गृहवास ॥ २ ॥
संजम लियो धारनी के अंगजात, गुरु भेट्या जाने त्रिलोकी नाथ ॥ ३ ॥
मति श्रुत अवधि मनपर्यव ज्ञान, चवदा पूरव विद्या को प्रमान ॥ ४ ॥
बयालीस वर्ष ध्याता निर्मल ध्यान, प्रकट हुओ पीछे केवलज्ञान ॥ ५ ॥
रुप दीपे जांको जगमग ज्योत, देवता से पण अधिक उद्योत ॥ ६ ॥
जम्बू सरिखा जाके शिष्य है विनीत, रात दिवस जांको चरणां में चित ॥ ७ ॥
वाणी प्रकाशी जैसे अमृतधार, सूत्र रचा जांको आज आधार ॥ ८ ॥
आठ वर्ष केवल परवर्ज्या[९] पाल, सुगति विराज्या पीछे दीनदयाल ॥ ९ ॥

---

१. द्वादशांगी के बारहवें अंग का एक भाग २. मन ३. भरत क्षेत्र की चौदह नदियों में से सातवीं ४. उदधि-समुद्र ५. देवराज इन्द्र का हाथी ६. बानवे ७. अल्पज्ञ ८. सीधो ९. प्रव्रज्या-दीक्षा।

पाट विराजे जांके जम्बू अणगार, परम वैरागी घणो कियो उपकार ।। १० ।।
चम्मालीस वर्ष पाल्यो केवलज्ञान, ते पण पाया प्रभु शिवपुर स्थान ।। ११ ।।
सुधर्मा स्वामी ने जम्बू अणगार, चरण नमूं जाके बारम्बार ।। १२ ।।
'खूबचन्द' कहे मेरे गुरु नन्दलाल, तिण प्रसादे गायो त्रेपन के साल ।। १३ ।।

८

जिनेश्वर-जन्म की स्तुति

(तर्ज--हरिश्चन्द्र राजाजी)

जिनेश्वर रायाजी, स्वर्ग थकी चव आवे ।
प्रजा सुख पावे हो, जिनेश्वर रायाजी ।। १ ।।
जिनेश्वर रायाजी, गगन निर्मलो दर्शे ।
वर्षा सम वर्षे हो, जिनेश्वर रायाजी ।। २ ।।
जिनेश्वर रायाजी, शाखा निपजे सारी ।
पुन्याई थारी हो, जिनेश्वर रायाजी ।। ३ ।।
जिनेश्वर रायाजी, लाभ व्योपारी पूरा ।
पखी वोले रूडा हो, जिनेश्वर रायाजी ।। ४ ।।
जिनेश्वर रायाजी, आछी बधाया आवे ।
के हर्ष मनावे हो, जिनेश्वर रायाजी ।। ५ ।।
जिनेश्वर रायाजी, शकुन मिले सब ताजा ।
आदर देवे राजा हो, जिनेश्वर रायाजी ।। ६ ।।
जिनेश्वर रायाजी, गुरु नन्दलाल जी ध्याऊ ।
सदा गुण गाऊं हो, जिनेश्वर रायाजी ।। ७ ।।

९

जिन-जन्म-महिमा

(तर्ज—तू सुन म्हारी जननी आज्ञा देवो तो सजम आदरू)

जिन—जन्म की महिमा, करवा ने आया देवी देवता ।। टेर ।।
शक्र इन्द्र ईशान इन्द्रजी, तीजा सनत्कुमार ।
महेन्द्र ब्रह्म लतक महाशुक्र, बलि इन्द्र ससार ।।
पाण[1] इन्द्र और अचू[2] इन्द्र आये, लेकर सब परिवारजी ।। १ ।।

---

१. प्राणत २ अच्युत

सहस्र चौरासी अस्सी बहोतर, सीतर साठ बखान ।
पचास चाली तीस बीस दश, सामानिक सुर जान ।।
चार गुणा सामानिक सुर से, आतमरक्ष परमानजी ।। २ ।।

बारा सहस्र चवदा वलि सोला, तीन परिषदा माय ।
दो दो सहस्र कम करके ऊपर, दो दो सहस्र वढाय ।।
छै इन्द्र तक इणविध लीजो, चतुर हिसाब लगायजी ।। ३ ।।

सहस्र पाँन से ढाई से अजी, फेर सवा सो थाय ।
दुगुणा-दुगुणा तीन दफे तुम, लीजो जोड लगाय ।।
इतने सुर एक एक इन्द्र के, तीन परिषदा माँयजी ।। ४ ।।

लक्ष जोजन का लम्बा चौड़ा, आया रच विमान ।
एक सहस्र जोजन को सबके, महिन्द्र ध्वजा परिमान ।।
सुघोषा महाघोषा घण्टा, पाच पॉच के जानजी ।। ५ ।।

चमरिन्द्र वलइन्दर प्रमुख, भवनपति के वीस ।।
काल और महाकाल आदि दे, व्यंतर के वत्तीस ।।
चन्द्र सूर्य इन्द्र मिल हो गए चार बीस चालीसजी ।। ६ ।।

अध लक्ष जोजन लम्बा चौडा, असुरॉ का विमान ।
धरणिन्द्रादिक अष्टादश के, सहस्र पच्चीस प्रमाण ।
व्यतरिन्द्र और रवि शशि के, सहस्र जोजन का मानजी ।। ७ ।।

वैमानिक से आधी ऊची, जानो असुर कुमार ।
नवनिकाय के ढाई से की, महिन्द्र ध्वजा विस्तार ।
सौ जोजन ऊपर पच्चीस जोजन की, व्यतर जोतिषी धार जी ।।८।।

इण विध हुओ समागम सुर को, जिन महिमा के काज ।
मेरे गुरु गुण आगर मानूं, नन्दलाल महाराज ।।
रावलपिण्डी जोड वनाई, सरिया[1] वछित काजजी ।। ९ ।।

---

१. सिद्ध हुआ

१०

झूलना

(तर्ज—जिनन्द जश जग मे)

माता जी हुलरावे, पुतर ने राग सुनावे रे ।। टेर ।।

रतन जडित पालनियो, जाने रेशम सेती बनियो ।
धन जननी नन्दन जनियो रे ।। १ ।।

सोना की साकल बाधी, फिर पालणिया मे फाधी ।
जाँ के अध बीच झूमर बाँधी रे ।। २ ।।

कोई चकरी भंवरा लावे, कोई नृत्य करी रीझावे ।
कोई घूघरिया घमकावे रे ।। ३ ।।

कोई सिर पर टोपी मेले, कोई अधर हाथ मे झेले ।
ईं ज्यूं ज्यूं बालक खेले रे ।। ४ ।।

कोई कान मे बाँता केवे, कोई गोदी माही लेवे ।
कोई काजल टीकी देवे रे ।। ५ ।।

जब चमक नीद से जागे, तब रमझम करता भागे ।
जा की सूरत सोहनी लागे रे ।। ६ ।।

माता अचला देवीजी का नन्दा, अश्वसेन राय कुल-चन्दा ।
जाने सेवे सुर—नर—वृन्दा रे ।। ७ ।।

'खूबचन्द' कहे पुन योगे, या ऋद्धि पाई सजोगे ।
यह तो करनी का फल भोगे रे ।। ८ ।।

११ :

जिनेन्द्र-प्रताप

(तर्ज—मुगत पद पाया हो भरतेश्वर मोटा राजवी)

आनन्द वरते हो जिनन्दा, थारा नाम सूं ।। टेर ।।

प्रभु नाम को सुमरण मोटो, जाप जप्या मन माय ।
मन वाछित कारज सिद्ध थावे, पातक दूर पलाय ।। १ ।।

समरथ जान शरण मे आयो, अवर देव कुण जाँचे ।
आम-स्वाद जिण चाख लियो तो, इमली मे कुण राँचे ॥२॥
रत्नाकर मिलियो [1]पुनयोगे, हियो वहुत हुलसावे ।
सफल काज हो गया कहो फिर, कंकर कौन उठावे ॥ ३ ॥
कृपानिधि शिवपुर के वासी, यह मेरी अरदास ।
चार तीर्थ[2] मे कुशल रहे, सुख सम्पत्ति लील विलास ॥ ४ ॥
क्षीर समुद्र भरयो मुख आगे, कुण करे नाडी[3] आस ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे मुझ प्रगटी सुख की रास ॥ ५ ॥

१२ :

मुनिराज

(तर्ज—सोरठ)

धन जग मे मुनिराया, ज्याने कर लीना मन चाया रे ॥ टेर ॥
सुमति गुपति नित डाव तिरन को, तामे चित्त रमाया रे ॥ १ ॥
काम क्रोध मद लोभ तिरसना, दूर तजी मोह माया रे ॥ २ ॥
कर कर ज्ञान प्रकाश हिया मे, वैराग्य रहे नित छाया रे ॥ ३ ॥
कर्म हणी कई शिवपुर पाया, कई सुरलोक सिधाया रे ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य जगमे, जिहाँ तिहाँ जश पाया रे ॥ ५ ॥

: १३ :

वीर-मिलन की भावना

(तर्ज—हो गए नित हीन कितनेक कलि के मानवी)

मैं तो शिवपुर वासी वीर जिनन्दजी से मिलसूं रे ॥ टेर ॥
तिसला दे माता के नन्दन, पिता सिद्धारथ राय ।
वहतर वर्ष की आयुष ज्या की, कंचन वरणी काय ॥ १ ॥
सुर नर के पुजनीक प्रभु रया, तीस वर्ष घर माँय ।
संजम ले फिर कर्म काट कर, मोक्ष विराजा जाय ॥ २ ॥

---

१ पुण्य २ साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका रूप चतुर्विध सघ ३ तलैया

मैं इन भरत क्षेत्र के माहि, आप मोक्ष के मॉय ।
अब अन्तस को लग्यो उमावो[1], दर्श करू' कब आय ॥ ३ ॥
जिन रस्ते प्रभु आप पधारया, शिवपुर आसन ठायो ।
वो रस्तो ढूंढत फिरयो स* पण, ना मुझ कणी[2] बतायो॥ ४ ॥
लुच्चा सौदा बहुत मिल्या मुझ, उलटी राह बताई ।
निर्लोभी सतगुरु मिल्या जब, सूधी बाट दिखाई ॥ ५ ॥
अब मैं बाट कभी नही छोडूं, जल्दी जल्दी दौडू ।
जहाँ होगा वहाँ आन मिलू गा, संग कभी नही छोडूं ॥ ६ ॥
नन्दलालजी महाराज प्रसादे, 'खूबचन्द' इम गावे ।
प्रभु थारा प्रताप से स म्हारे, सदा नवे निध थावे ॥ ७ ॥

: १४ :

वीर की क्षमा

(तर्ज—नाम की निज बूटी निज बूटी)

मेरे प्रभु वीरजी वीरजी, काई क्षम्या करी भरपूर ॥टेर॥

कठिन कर्म को काटवा, गया देश अनार्य मुझार ॥१॥
क्रम से कम छठ तप किया, काँई उत्कृष्ट किया छे मास ॥२॥
मिला उडद का वाकला, काँई बोर[3]-कुटा को आहार ॥३॥
आप खडा जब ध्यान मे, काँई लम्बी भुजा पसार ॥४॥
बाल खेंच धक्का दिया, काँई दी मार अनारज लोग ॥५॥
कुत्ता लगाया काटना, काँई कर छुछुकार अयोग ॥६॥
देव मनुष्य तिर्यंच का, काँई उपसर्ग सहे अपार ॥७॥
अधीक[4] द्वादस वर्ष मे, काँई उपनो केवल ज्ञान ॥८॥
दया धर्म फैलाय के, काँई किया मोक्ष मे वास ॥९॥
गुरु नन्दलालजी का हुक्म से, किया रामपुरे चौमास ॥१०॥

---

१ उत्कंठा २ किसी ने ३ वेरो का चूर्ण ४ पन्द्रह दिवस अधिक
* 'स' पादपूर्ति के लिए है ।

: १५ :

गुरुदेव-दर्शन

(तर्ज—आज रग वरसे)

आज मन भायो रे, आज मन भायो रे।
गुरुदेव आपका दर्शन पायो रे॥ टेर॥

तारन तिरन जहाज आप, शिव-मारग सूवो लीधो रे।
वहुत दिनो से होती[1] आश, भलो दर्शन दीधो[2] रे॥ १॥

कल्पतरु गुरु पारस सम छो, पूरण पर उपकारी रे।
निज गुण की चहुँ दिशि फैल रही, महिमा थारी रे॥ २॥

गुरु ज्ञान के भान अग मे, अभिमान नही दरशे रे।
सजम-रुचि वैराग्य झलक, मुख ऊपर वरसे रे॥ ३॥

आचारी पूरे व्रह्मचारी, छो नव कल्प विहारी रे।
करू कहा तक गुण वरणन, तुच्छ बुद्धि हमारी रे॥ ४॥

मेरे गुरु नन्दलाल मुनि की, चाहूँ निरन्तर सेवा रे।
है यकीन मुक्ति का निश्चय, मिलसी मेवा रे॥ ५॥

१६

गुरु-गुण-गान

(तर्ज—गू थी लावोए फूला मालन म्हारे गेंद गजरो)

म्हारा गुरुजी गुणवन्त आछो ज्ञान सुनायो॥ टेर॥

जीव यो अनादि मोह नीद मे छायो।
ज्ञान को जल छाट मोकू आप जगायो॥ १॥

प्यासीया ने ठार[3] निर्मल नीर ज्यू पायो।
भूखा ने खीर खांड को जिम भात[4] जिमायो॥ २॥

राग सुण ज्यूं नाग रहे बहुत घुमायो।
भादवे बरसात ज्यू झड आप लगायो॥ ३॥

घोर यो संसार सागर आप फरमायो।
डूबता इण मॉय मोकू आप वचायो॥ ४॥

---

१ थी २ दिया ३ ठडा करके ४ भक्त-भोजन

महा मुनि नन्दलालजी तस शिष्य हुलसायो।
उगणीसे तिरेसठ माँय गढ चित्तौड मे गायो ॥५॥

१७

दीक्षार्थी को माता की शिक्षा

(तर्ज—पूर्ववत्)

सुणो लाल सजम पाल वेगा मोक्ष मे जाज्यो ॥टेर॥
विनय करी खूब गुरुदेव रिझाज्यो।
होय तो अपराध बारम्बार खमाज्यो ॥ १ ॥
सीखज्यो वहु ज्ञान परमाद घटाज्यो।
मेघ ज्यू तपस्या की झडी खूब लगाज्यो ॥ २ ॥
आज ज्यू दिनरात थे[1] वैराग्य बधाज्यो।
सार दया धर्म तामे चित्त रमाज्यो ॥ ३ ॥
फेर दूजी मात के मत कू ख मे आज्यो।
जन्म जरा मर्ण का सब दु ख मिटाज्यो ॥ ४ ॥
एतली[2] तुम सीख ऊपर ध्यान लगाज्यो।
महामुनि नन्दलालजी सुख सपति पाज्यो ॥५॥

१८

गुरु की शोभा

(तर्ज—गुरु निर्ग्रन्थ नही जोया जीव तैंने गुरु)

गुरुजी विराज्या सोहे सभा मे, गुरुजी विराज्या सोहे रे ॥टेर॥
समता के सागर गुण-रतनागर, सुर नर का मन मोवे रे।
ज्ञानसरोवर मे करत किलोलाँ, पापतणा[3] मल धोवे रे ॥ १ ॥
नरनारी बहु हिल-मिल आवे, निरख निरख मुंह जोवे रे।
मधुर वचन से भव जीवो का, मिथ्याभर्म[4] सब खोवे रे ॥ २ ॥
ग्राम नगर मेरे गुरुजी पधारे, जहाँ बीज धर्म को बोवे रे।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे मेरो रोम रोम खुश होवे रे ॥ ३ ॥

---

१ तुम २ एटली (गुज०) इतनी ३ पाप का ४ मिथ्यात्व का भ्रम

: १९ :

पूज्य-दर्शन

(तर्ज—चेतन चेतो रे)

दर्शन करसा रे, दरसन करसाँ रे।
म्हारा पुन्य योग से पूज्य पधारचा रे ॥ टेर ॥
गाम नगर पुर पाटन विचरत, पूज्यजी आज पधारचा रे।
सुरतरु सम मन—वांछित म्हारा, कारज सारचा रे ॥ १ ॥
उपकारी गुणधारी जाकी, सुर नर सेवा सारे रे।
भव जीवा ने भव सागर से, पार उतारे रे ॥ २ ॥
कोई कहे मैं दर्शन करसा, कोई कहे सुणसां वाणी रे।
कोई कहे मैं प्रश्न पूछसां, छे बहु नाणी[1] रे ॥ ३ ॥
कोई बैठा गज [2]तुरी ऊपरे, कोई-कोई [3]पाला जावे रे।
कोई चढ्या रथ म्याना मे जाका हिया हुलसावे रे ॥ ४ ॥
कोई जावे कोई आवे पाछा, हगे मगे रह्यो लागी रे।
कोई कहे तू चाल मैं आयो, लेर[4] सु भागी रे ॥ ५ ॥
कोई बैठा निज मन्दिर अपने, पूज्य की भावना भावे रे।
कोई इक दृष्टि जोय रह्या, कोई शकुन मनावे रे ॥ ६ ॥
नन्दलालजी महाराज प्रसादे, 'खूबचन्द' इम गावे रे।
घन जाको अवतार पूज्य की, सेवा पावे रे ॥ ७ ॥

: २० :

गुरु-सेवा

(तर्ज—क्या तन माँजता रे)

गुरुजी आपकी रे गुरुजी आपकी रे मोकू सेवा मिली [5]पुन योग ॥ टेर ॥
क्षमावंत ज्ञानादिक गुण के तुम हो सिन्धु समान।
मिथ्या तिमिर के नाश करन को प्रगट हुवे हो भान ॥ १ ॥
तांता तोड दिया तृष्णा का, नही किसी की दरकार।
अपने दिल मे समझ लिया, कंचन पत्थर इक सार ॥ २ ॥
मन को जीत लिया विषयो से, धर्म ध्यान मे लीन।
निज आतम सम जान जगत को, अभय दान तुम दीन ॥ ३ ॥

---

१ ज्ञानी २ घोडा ३. पैदल ४. पीछे से ५ पुण्य

क्षण मात्र भी तुम पुरुषो का, सग करे नर कोय ।
सच्चा ज्ञान मिले फिर उनकी क्यो नही मुक्ति होय ।। ४ ।।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनीश्वर, बहुसूत्री विद्वान ।
पर उपकार जान हम सब को, दी शिक्षा हित आन ।। ५ ।।

· २१ ·

ज्ञानी गुरु का निर्णय

(तर्ज—फाग)

ज्ञानी गुरु बिना कौन करे निरणा ।। टेर ।।

कुँवर सुबाहु पंचदश भव करने, आखिर मोक्ष गति वरणा ।।१।।
परदेशी नृप का हुआ निस्तारा, केसी स्वामी का भेट्या चरणा ।।२।।
मेघ[1] मुनि युगल भव गज का, न्याय सुनाय के स्थिर करणा ।।३।।
कुंडरिक पुंडरिक[2] दोनो भाई, करणी जैसा दु ख सुख भरणा ।।४।।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, लो देव गरु धरम शरणा ।।५।।

---

१ मेघकुमार मगधसम्राट् श्रेणिक के पुत्र थे और पूर्व के दो भवो मे हाथी थे । भ० महावीर का उपदेश सुन कर विरक्त हुए और दीक्षित हो गये । दीक्षित होने पर पहली रात्रि मे ही उन्हे सोने को ऐसी जगह मिली, जहा से अन्य मुनि आते-जाते थे । ठोकरें लगती रही । रात भर नीद न आई । इस दशा मे उन्होने दीक्षा त्याग कर वापिस घर लौट जाने का विचार किया । प्रात काल भ० महावीर को अपने जाने की सूचना देने के लिए वे भगवान के पास पहुचे । अन्तर्यामी भगवान् पहले ही मेघ मुनि के मनोभावो को समझ चुके थे । उन्होंने पिछले दो हाथी के भवो मे भोगे हुए घोर कष्टो का वर्णन करके कहा—'अब इतना-सा भी कष्ट-सहन नही कर सकते ?' यह सुन कर मुनि मेघकुमार सयम मे स्थिर हो गये ।

२ पुडरीक और कुडरीक दोनो सगे भाई थे,पुडरीक बडे और कुडरीक छोटे थे । पिता के दीक्षा लेने पर पुडरीक राजा बने और कुडरीक युवराज । कुछ दिनो बाद कुडरीक को वैराग्य हो गया और वह साधु बन गये । मगर उनकी भोग-तृष्णा फिर जागृत हो गई और एक बार वे साधुओ का साथ छोडकर घर लौट आये । पुडरीक ने पूछा—क्या तुम्हे राज्य भोगने की इच्छा है ? पुडरीक ने उन्हे अपना राज्य सौंप दिया और आप कुडरीक के उपकरण लेकर साधु बन गये । इस प्रकार साधु राजा हो गया और राजा उसके बदले साधु बन गया । अत मे कुडरीक को भोगो मे आसक्ति होने के कारण सातवें नरक मे जाना पडा और पुडरीक सर्वार्थसिद्ध विमान मे देव हुए । वह महाविदेह क्षेत्र मे मनुष्य होकर मुक्तिलाभ करेंगे ।

: २२ :

ज्ञानी गुरु का उपदेश

(तर्ज—पूर्ववत्)

ज्ञानी गुरु विना कौन कहे साची ॥ टेर ॥
कठिन कहे मुनि जोग मे आवे, टोर[1] के नाय लगे टाँची ॥ १ ॥
चित[2] मुनि कही ब्रह्मदत नही मानी, नर्क गयो भोगो मे राची ॥ २ ॥
जो निज सुख चाहो अहो ! मानव, करणी करो आछी आछी ॥ ३ ॥
आये हो पर भव का दु:ख देखी, अव वो वाट मत लीजो पाछी ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, शुद्ध देव गुरु धर्म लीजो जाँची ॥ ५ ॥

: २३ ·

वीर-वाणी

(तर्ज—मुगत पद पाया हो भरतेश्वर मोटा राजवी)

आछी लागे म्हाने वीर धीर की वाणी रे ॥ टेर ॥
सभा माय जगनाथ विराजे, विस्मयवंत दीदार ।
शुभ लक्षण तन पूरण ज्ञान गुण, करुणा के भंडार ॥ १ ॥
प्रेम सहित वाणी का प्यासा, राजादिक नर-नार ।
आय आय चरणो मे भुके, गुण बोले बारम्बार ॥ २ ॥
पेष्ठ बोल[3] की कहे आस्ती, दो विध धर्म उदार ।
सुर नर इन्द्र विद्याधर सुन-सुन हर्षित होय अपार ॥ ३ ॥

---

१ अतिशय कठोर पाषाण

२ चित्त मुनि और ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती पिछले पाच भवो मे भाई-भाई थे । छठे जन्म मे दोनो अलग-अलग उत्पन्न हुए । चित्त एक सम्पन्न सेठ के परिवार मे और ब्रह्मदत्त राजपरिवार मे जन्मे । ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती राजा हो गया । तत्पश्चात् दोनो का सयोगवश मिलन हुआ । दोनो एक दूसरे को पहचान गये । चित्त मुनि ने ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती को त्याग मार्ग अपनाने का अनुरोध किया, मगर ब्रह्मदत्त ने अपनी असमर्थता प्रगट की । वह भोगोपभोगो मे आजीवन आसक्त रहा और मृत्यु के पश्चात् सातवे नरक मे गया । ।

३. पैंसठ वोल ।

महाव्रत[1] अणुव्रत[2] त्याग नेम कई, धारत है नर नार ।
धर्मकथा खाली नही जावे, अवश्य होय उपकार ॥ ४ ॥
श्रोता चाहे वीर वाणी हम, सुनते रहे हर बार ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य दिल्ली, जोड करी तैयार ॥ ५ ॥

: २४ :

संत

(तर्ज—पजाबी)

संतो मे संत वही है, जो पालक [3]पचाचार का ॥ टेर ॥

आतम सम जाने पर प्राणी, झूठ त्याग बोले सत्य वाणी ।
रज। विना कुछ लहे न जाणी, तज दिया फिकर ससार का ॥
सब जग से निरमोही है ॥ १ ॥

एक जगह स्थिर वास न रहना, सुन दुर्वचन कुछ नही कहना ।
भिक्षा माग गुजर कर लेना, दिल रखे सभी पर सारका ॥
चाहे राजा रक कोई है ॥ २ ॥

माया से मुहब्बत नही जोड़े, विषयो से अपना मन मोडे ।
क्रोध कपट निन्दा को छोड़े, नही सग करे [4]बदकार का ॥
दुर्मति दूर खोई है ॥ ३ ॥

दुनिया से हरदम रहे न्यारा, कुव्यसनो से करे किनारा ।
ऐसा सत ईश्वर को प्यारा, करे धन्धा ज्ञान विचार का ॥
तब सुधरे भव दोई है ॥ ४ ॥

गुरु नन्दलाल महामुनिराया, कृपा कर ज्ञानामृत पाया ।
नयाशहर मे भजन बनाया, गुरु किया काम उपकार का ॥
हिये ज्ञान बेल बोई है ॥ ५ ॥

---

१ पूर्ण अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह २ एक देश अहिंसा आदि पाँच श्रावक व्रत ३ ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपआचार और वीर्याचार या पाच महाव्रत ४ दुराचारी

: २५ :

गुरु महिमा

(तर्ज—पूर्ववत्)

सब मिथ्या भर्म खोते हैं, मुनिराज ज्ञान भंडार है ॥ टेर ॥

छोड दिया गृहस्थी का नाता, जोडे नही फिर प्रेम का नाता ।
करते फक्त धर्म की वाता, उनका यही व्योपार है ॥
नही बुरी नजर जोते हैं ॥ १ ॥

राव रक की रखते नाही, सब को देते साफ सुनाई ।
निर्लोभी और बेपरवाही, दृग्दृष्टि वुद्धि अपार है ॥
समकित का बीज वोते हैं ॥ २ ॥

शम, दम और साँच के सूरे, निशदिन रहे कपट से दूरे ।
तप करके कर्मों को चूरे, जो क्षमावत अनगार हैं ॥
सुमति की सेज सोते हैं ॥ ३ ॥

दोप टाल लेते अन्न-पानी, कभी न बोले सावद्य वानी ।
गुरु हुकुम रखते अगवानी, फिर क्यो न सफल अवतार है ॥
सुर नर का मत मोहते है ॥ ४ ॥

मेरे गुरु नन्दलालमुनि हैं, जिन शासन मे बडे गुनी हैं ।
जिसने पहले वानी सुनी है, वह याद करे हर बार है ॥
पुन-योगे दर्शन होते है ॥ ५ ॥

२

उपदेशामृत

: १ :

अहिंसा

(तर्ज —पजाबी)

मत प्राणी के प्राण सता रे, कर दया धर्म का मूल है ।।टेर।।
छोटे बडे कई जीव बिचारे सबको अपने प्राण पियारे ।
आतम - सम लख न्यारे न्यारे, यह समदृष्टी का रूल[१] है ।।
मरते की जान बचा रे ।।१।।

रुच रुच अशुभ अकृत्य कमाये, जिन से योन पशु की पाये ।
विषम स्थान गिरि जगल माहे, ना कोई जिन के अनुकूल है ।।
फिरें इत उत मारे मारे ।।२।।

कई पशु रहते बिच वन के, भूख प्यास और शीत उष्ण के ।
कभी न कह सकते दु:ख तन के, कौन पूछे तेरा क्या शूल है ।।
अब महरबान बन जा रे ।।३।।

जो था मतंग रहम दिल वाला, पाँव तले सुसले को पाला ।
मर कर हुआ नृपति घर लाला[२], जिन मत का यही असूल है ।।
क्यो दिल मे दया विसारे ।।४।।

---

१ नियम, २, यहा भी राजकुमार मेघकुमार की ओर ही इशारा है । पूर्वभव मे वे हाथी थे । हाथी ने जगल मे एक साफ-सुथरा गोलाकार मैदान बना रक्खा था । जगल मे आग लगने पर अन्य पशु अपनी जान बचाने के लिए उस मैदान मे ठसाठस भर गये । एक खरगोश को कही टिकने की जगह न मिल रही थी । उसी समय हाथी ने अपना शरीर खुजलाने के लिए पैर ऊँचा उठाया । खरगोश उसी खाली जगह मे बैठ गया । हाथी जमीन पर पाव धरता तो खरगोश की चटनी बन जाती । दया से प्रेरित होकर उसने अपना पैर ऊचा ही उठाए रक्खा और जब तक जगह खाली न हो गई,तीन पैरो पर ही खडा रहा । जब उसने पैर जमीन पर जमाना चाहा तो पैर के अकड जाने से वह धडाम से भूमि पर गिर पडा और मर गया । इस दयाभाव के कारण वह राजा श्रेणिक का पुत्र हुआ ।

गुरु नन्दलाल हुकम फरमाया, जव चौमास आगरे ठाया ।
जोड सभा मे भजन वनाया, जव तुझ को दया कवूल है ॥
तव होगी माफ खता रे ॥५॥

. २ .

सत्य

(तर्ज —पूर्ववत्)

क्यो असत्य मुँह से भाखे, सत्य निर्वद्य[1] बोल विचार के ॥टेर॥

सत्यवादी-सम बात बनावे, कर छल कपट पलट झट जावे ।
उस नर की परतीत न आवे, सब निन्दें लोक बाजार के ॥
फिर कदर कोई नही राखे ॥१॥

जो नर सत्य धर्म को चाहते, उन पै कष्ट कभी नही आते ।
सुर नर मददगार हो जाते, कहे धन धन सव संसार के ॥
चरणो मे झुके आ आके ॥२॥

सत्य से विष अमृत हो जावे, पडे पहाड से चोट न आवे ।
शास्तर मे ज्ञानी फरमावे, टरे विघ्न कई प्रकार के ॥
जिया देख जरा अजमा के ॥३॥

हरिश्चन्द्र राजा सतधारी बेची हाथ से तारा नारी ।
जिसने भरा विप्र घर वारी, तव गया सर्व दुःख टाल के ॥
खुद इन्द्र स्वर्ग से आके ॥४॥

मुनि नन्दलाल साफ फरमावे, सत की महिमा सव जन गावे ।
छोड झूठ जिनसे सुख पावे, रख याद हिया मे धार के ॥
मेरे गुरु कहे समझा के ॥५॥

---

१ निरवद्य-निर्दोष ।

: ३ :

जुआ-निषेध

(तर्ज —पूर्ववत्)

जुआ का खेल मत खेले, यू सन्त कहे समझाय के ।।टेर।।

जुआ और सट्टा यह दोई, इन कामो मे लगा जो कोई ।
वह निज सम्पत बैठा खोई, कुछ लम्वी नजर लगाय के ॥
तू सोच हिताहित पहले ।।१।।

करते रंज दाव जव हारे, मन मे खोटी नीत विचारे ।
निर्दय होय मनुष्य को मारे, कोई मरते शस्तर खाय के ।।
कोई डोलत फिरें अकेले ।।२।।

सव दिन रात सरीखे जाते, परमुख देख देख पछताते ।
कुआचरण जिनके हो जाते, कहे अँगुली लोग बताय के ।।
यह कुल कपूत शठ टेले ।।३।।

पाडुपुत्र जो थे वलधारी, राजसहित द्रौपदी हारी ।
नल राजा भी ले निज नारी, वह निकला राज गमाय के ।।
ग्रन्थो से निर्णय ले ले ।।४।।

गुरु नन्दलालजी का फरमाना, जो तूं है विद्वान सयाना ।
प्रथम व्यसन के सग न जाना, कहूँ राग पजाबी गाय के ।।
तरी कीरत चहुँ दिशि फैले ।।५।।

४

सद्बोध

(तर्ज —पूर्ववत्)

नर क्यो पर जान सतावे, फिर बदला दिया न जायगा ।।टेर।।

गेंद-दडी ज्यो फिरा भटकता, मनुष्य जन्म मे आया अटकता ।
वह दुख तुझ को नही खटकता, कर भला भला हो जायगा ।।
सतगुरु तुझे चेतावे ।।१।।

अन्तर कपट मुख मीठो बोले, पर का छिद्र देखतो डोले।
जाति न्याति मे विग्रह घोले, जो फूला वह कुम्हलायगा ॥
यो ऋषि मुनि सब गावे ॥२॥

गुरु ज्ञान असली नही पाया, वृथा यो ही जन्म गँवाया।
रत्न छोड़ कर कंकर उठाया, कहाँ मोल कही भी पायगा ॥
फिर आखिर मे पछतावे ॥३॥

पर जीव की पीड न जाणी, दुःखी देख दिल दया न आणी[1]।
पाप मे आप हुवे अगवाणी, मिट्टी मे मिट्टी मिल जायगा ॥
फिर कुछ नही बन आवे ॥४॥

मुनि नन्दलाल मेरे गुरुदेवा, जिनशासन मे सुरतरु जेवा।
तन मन से कोई करले सेवा, गुरु ऐसा ज्ञान बताएगा ॥
सब मिथ्याभर्म मिट जावे ॥५॥

: ५ :

सद्‌बोध

(तर्ज.—पूर्ववत्)

नर क्यो पच पच मरता है, तेरे कौन साथ मे आयगा ।।टेर।।
करे हिफाजत कुटुम्ब को पाले, वह भी तेरे हुकुम मे चाले ॥
चूक पडे होगे मतवाले, तुझे क्षण मे छेय[2] दिखायगा ॥
क्यो पाप पिंड भरता है ॥१॥

दुनिया मे थोडा-सा जीना, जिसमे बोल लाभ क्या लीना ?
सच्चे मारग को तज दीना, न जाने कहाँ धँस जायगा ॥
फिर कारज क्या सरता है ॥२॥

सच्चे गुरु की सुने न वाणी, झूठी बात तुरत ले ताणी।
न्याय अन्याय की बात न छाणी[3], तेरा यश अपयश रह जायगा ॥
ना परभव से डरता है ॥३॥

फूला फिरे होय लटपट में, खोया जन्म झूठी खटपट मे।
कर ले अब कुछ भी झटपट मे, फिर ऐसा न मौका पायगा ॥
तेरा क्षण-क्षण आयु खिरता है ॥४॥

---

१. लाया २. किनारा काट जायगा ३. छिपी।

मेरे गुरु नन्दलाल मुनि है, जिनशासन मे बडे गुनी है।
जिसने पहले वाणी सुनी है, वह हर्ष हर्ष गुण गायगा ॥
जो भवोदधि तरता है ॥५॥

: ६ :

संसार-सराय

(तर्ज —पूर्ववत्)

मेरी मान मुसाफिर अहो रे, क्यो सोवे बीच सराय के ॥टेर॥
चार द्वार की यह सराय है, कई आय और कई जाय है।
जिनकी गिनती कछू नाय है, कहे गुरुदेव जतलाय के ॥
होशियार हमेशा रहो रे ॥१॥
राव रक यहाँ सब ही आते, जो आते वह वापिस जाते।
कोई खोते और कोई कमाते, कोई पूँजी मूल गवाय के ॥
वह चले गए बद हो रे ॥२॥
तेरा यहाँ पर हो गया आना, आलस तज के लाभ कमाना।
सोने का है नही जमाना, तू झूठा नेह लगाय के ॥
अनमोल वक्त मत खो रे ॥३॥
इस सराय मे ठग रहते हैं गाफिल को वह ठग लेते है।
खबरदार अब कर देते है, हम तो तुम्हे जगाय के ॥
गफलत की नीद मत सो रे ॥४॥
गुरु नन्दलाल मुनि है मेरे, न्याय बात कहें हक मे तेरे।
सत पुरुषो का सग कर ले रे, दुर्लभ अवसर पाय के ॥
लटपट मत कोई से हो रे ॥५॥

७

सच्चा मेला

(तर्ज —ख्याल)

मुगति को मेलो कर लो प्रेम से, अवसर मत चूको ॥टेर॥
साधु साध्वी श्रावक श्राविका, चार तीर्थ गुणधारी।
जिनकी सेवा करो तरो, भवसिन्धु रहो हुँशियारी रे ॥१॥

आगम वाणी सुन हो प्राणी, मिट जावे सब साँसा।
चार गति मे आवागमन का, हो रहा अजब तमाशा रे ॥२॥
दया धर्म की गोठ करो नित, भाग भजन की पीवो।
नियम नशा की लाली लावो, इण विध जुग जुग जीवो रे ॥३॥
जो होगा पुनवान जिन्हो के, यह मेला मन भावे।
दूजा मेला माँय जाय वह, गांठ को दाम गँमावे रे ॥४॥
कहे मुनि नन्दलाल तणा शिष्य सुन लेना सब भाया।
करी जोड अजमेर शहर सावन के महीने गाया रे ॥५॥

८

धर्म की दुकान

(तर्ज—ख्याल)

तुम माल खरीदो, त्रिशलानन्दन की खुली दुकान रे ॥टेर॥
शास्तर रूप भरी पेटीयाँ, मुनिवर बड़े वजाजी।
वजह[1]-वजह का माल देख लो, कर अपना मन राजी रे ॥१॥
जिनवाणी को गज है सांचो, जरा फर्क मत जान।
माप माप सतगुरु देवे छे, मत कर खेंचातान रे ॥२॥
जीवदया की मलमल भारी, शुद्ध मन मिसरू लीजे।
डबल जीन समता तणो सरे, चाहे सो कह दीजे रे ॥३॥
तपस्या को वधागर भारी, साडी ले सन्तोष।
ऐसा कर व्यौपार जिन्होने से, चेतन पावे मोक्ष रे ॥४॥
महामुनि नदलाल तणा शिष्य, खूबचद कहे सार।
काम नही टोटा तणो सरे, नफो मिले व्यौपार रे ॥५॥

९.

वैद्य गुरु

(तर्ज—पूर्ववत्)

ज्ञानी गुरु मिलिया वैद्य हकीमजी तुम दवा खरीदो ॥टेर॥
अष्ट कर्म का रोग अभ्यन्तर जनम मरण दुःख भारी।
तुरत फुरत सब रोग मिटे लो दवा बहुत गुणकारी रे ॥१॥

---

१ तरह तरह।

छोटी बडी कई मीठी कडवी तप गोली तैयार ।
आँख मीच कर झटपट ले लो मत कर और विचार रे ।।२।।
समझ सयाना बार बार यह जोग मिले नही ऐसा ।
हित मुफ्त की दवा खिलावे, कौडी लगे न पैसा रे ।।३।।
जिनवाणी का चूर्ण लिया कर व्याधि हरे तमाम ।
जो इतना भी शौक रखे तो हुवे परम आराम रे ।।४।।
महामुनि नन्दलाल तणा शिष्य जोड करी इम गावे ।
ऐसा मौका आन मिला कि रोग सोग मिट जावे रे ।।५।।

१० .

गुरु-वाणी

(तर्ज —पनजी मू डे वोल)

वाणी साची रे, वाणी साची रे ।
म्हारा ज्ञानी गुरु कही सो हिवडे राची रे ।।टेर।।
अनन्त गुणी साकर से मीठी, श्री जिनवर की वाणी रे ।
ठाम [1]ठाम सूत्रो के माही जाने, दया बखाणी रे ।।१।।
अनन्त जीव सुन सुनने तिरिया, वली अनन्ता तिरसी रे ।
कई जीव व्रतमान काल मे, एक भव करसी रे ।।२।।
तीन तत्त्व कोई चतुर हुवे तो, धारे असल हिया मे रे ।
देव अरिहन्त गुरु निर्ग्रन्थ, अरु धर्म दया मे रे ।।३।।
अनन्त काल कुगुरु ने भेट्या, भ्रम जाल मे फँसीयो रे ।
अब के सतगुरु ज्ञानी मिलिया, बन सुमति को रसीयो रे ।।४।।
अमृत ढोल हसे मन मूरख, जहर हलाहल चाखे रे ।
जोग वोल दस[2] केरो मिलियो, अव काई ताके रे ।।५।।
भाँत भाँत मुनिवर समझावे, चेते सो सुख पासी रे ।
रखो आस्ता[3] वचन ऊपर निष्फल नही जासी रे ।।६।।
महामुनि नन्दलाल गुरुजी, आछो ज्ञान बतायो रे ।
तिण प्रसादे 'खूबचन्द' कहे, तन मन हुलसायो रे ।।७।।

१—जगह जगह २—१. मनुष्य जन्म २ आर्य क्षेत्र ३ उत्तमकुल ४. दीर्घायु ५ तन नीरोग ३ पूर्ण इन्द्रिय ७ सद्गुरु सगति ८ सिद्धात वचनो का श्रवण ९ श्रद्धा १० धर्म कार्य मे पुरुषार्थ । ३—आस्था-श्रद्धा ।

: ११ :

क्रोध-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

क्रोध मत कीजो रे, क्रोध मत कीजो रे!
इण न्याय सुजान क्षम्या कर लीजो रे ॥टेर॥
परदेशी[1] नृप को रानी विष-मिश्रित आहार जिमायो रे।
सवर करी सम भाव पणे, सुर लोक सिधायो रे ॥१॥
गजसुखमाल[2] मुनि शमशाने, नेम ध्यान को लीनो रे।
सिर पर आग सही, सोमिल पर कोप न कीनो रे ॥२॥
खन्दक[3] मुनि की खाल उतारन, भूप हुकम फरमायो रे।
संचित वैर चुकाय आप, मुक्ति पद पायो रे ॥३॥
कामदेवजी[4] श्रावक त्रण उपसर्ग, से चलिया नाँही रे।
दृढताई सुर देख गयो, अपराध खमाई रे ॥४॥
मेतारज[5] मुनि गुणी आप, शुद्ध संजम में चित्त राख्यो रे।
दया काज मर मिट्या, कुरकट को नाम न दाख्यो रे ॥५॥
वीर प्रभु सुर नर तिर्यंच का, सह्या परीषह भारी रे।
मेरु जिम रह्या अचल, आप समता दिल धारी रे ॥६॥

---

१. प्रदेशी राजा पहले नास्तिक और क्रूर था। केशी स्वामी के उपदेश से वह धर्मनिष्ठ हो गया। जब वह धर्माचरण मे अधिक लगा रहने लगा और भोगो से विरक्त सा हो गया तो उसकी पत्नी ने उसे जहर दे दिया था। २ श्रीकृष्ण के छोटे भाई थे। एकात मे तपस्या कर रहे थे। साधु होने से पहले सोमल ब्राह्मण की कन्या से इनकी सगाई हुई थी, मगर विवाह होने से पहले ही साधु बन गये। इस कारण क्रुद्ध होकर ब्राह्मण ने मस्तक पर गिली मिट्टी की पाल बनाकर उसमे धधकते अगार भर दिये थे। ३ खदक मुनि की एक राजा ने जीते जी चमड़ी उधड वाली थी। ४ भगवान् महावीर के दस मुख्य श्रावको मे से एक। एकनिष्ठ होकर जब वे धर्म-साधना कर रहे थे तो एक देव ने उन्हें धर्म से विचलित करने के उद्देश्य से बहुत सताया था। ५. महावीर भगवान् के एक अन्त्यज शिष्य, जो घोर तपस्वी और दयालु थे। एक मास मे एक बार भोजन करते थे। एक बार भिक्षा के लिए किसी सुनार के घर गये। सुनार उस समय सोने के दाने बना रहा था। दानो को बाहर पडा छोड वह भिक्षा लेने भीतर चला गया। उसी समय एक मुर्गे ने आकर वे दाने निगल लिये। सुनार ने मुनि को ही चोर समझा और उन्हे मार डाला। मुनि चाहते तो मुर्गा की बात कह सकते थे, मगर उस हालत मे मुर्गा मारा जाता। उसकी प्राणरक्षा के लिए मुनि ने अपने प्राण दे दिये।

मेरे गुरु नन्दलाल मुनि की यही सिखामण खासा रे।
उगणीसे अस्सी के साल अजमेर चौमासा रे ।।७।।

: १२ :

मान-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

मान मत करज्यो रे, मान मत करज्यो रे।
श्री वीर प्रभु शास्तर मे वरज्यो रे ।।टेर।।
तन को मान घणो मन माँही, नव नव नखरा करतो रे।
काल बली से जोर न चाले ज्यूं घणो अकडतो रे ।।१।।
जो नर धन को मान कियो वह, धन खोई ने बैठो रे।
आरम्भ कर कर कर्म बाँध, वह नर्क मे पैठो रे ।।२।।
जोवन मे रंग रातो मातो, ऊंची रखतो अँखियारे।
वृद्ध भयो तव परवश पडियो, उडे न मखिया रे ।।३।।
विद्या बहुत पढ्यो मन चाही बुद्धि को विस्तारो रे।
दया धर्म बिन सिख्यां गयो यो ही हार जमारो रे ।।४।।
तीन पाच मद[1] मे सुध भूल्यो, सत्संगत से दूरो रे।
मातंग कुल मे जन्म लेही हो गयो भंडसूरो रे ।।५।।
नीठ[2] नीठ मानव भव पायो निरअभिमानी रहिज्यो रे।
कहे मुनि नन्दलाल तणा शिष्य शिवपुर लीज्यो रे ।।६।।

: १३ :

कपट-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

कपट मत कीज्यो रे,कपट मत कीज्यो रे!
थाँने न्याय बात कहूं सो सुन लीज्यो रे ।।टेर।।
कपट करी सीता को रावण, ले गयो लका माँही रे।
काम कछु न सर्यो जिसने अपकीरति पाई रे ।।१।।
तीजे[3] अंग चौथे ठाणे फरमान वीर जिनवर को रे।
माया गूढ माया से आयुष बाधे तिर्यंच को रे ।।२।।

---

१. जाति, २ कुल, ३ बल, ४ रूप ५ तप, ६ लाभ, ७ ज्ञान, ८ ठकुराई आठ चीजो का अभिमान। २ बडी कठिनाई से। ३ स्थानाग सूत्र के चौथे स्थान मे

मल्लि[1] जिन पूरव भव मे तपस्या मे कपट कमायो रे ।
जयन्त विमान से चवी वेद स्त्री को पायो रे ॥३॥
कपट करी कुड माप तोल कर मन मे अति सुख पावे रे ।
पावे सजा सरकार वीच जव वो पछतावे रे ॥४॥
नर से नारी होय कपट से नारी नपुंसक थावे रे ।
गौतम पृच्छा माँही साफ ज्ञानी फरमावे रे ॥५॥
कहे मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कपट बुरो जग मांही रे ।
उगणीसे अस्सी में जोड़ अजमेर वनाई रे ॥६॥

: १४ :

लोभ-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

लोभ उलटी जे रे, लोभ उलटी जे रे ।
जव भलो होय कहूँ सो सुन लीजे रे ॥टेर॥
दो माशा सुवरण से अधिको कम्पिल[2] लोभ बढ़ायो रे ।
लोभ थकी मन फिर्यो जभी केवल पद पायो रे ॥ १ ॥
जिनरिखने[3] जिनपाल दोऊ मिल के पर दीप[4] सिधाया रे ।
जहाज फटी समुंदर मे जिनरिख प्राण गमाया रे ॥ २ ॥
लोभ अपार कह्यो जिनवर ज्यू गगन को अन्त न आवे रे ।
धन्य मुनि जो लोभ त्याग जग मे जश पावे रे ॥ ३ ॥
केई लोभ वश अकृत्य कर कर, मन माँही सुख पावे रे ।
लोभ पाप को बाप साफ यो सब जग गावे रे ॥ ४ ॥
क्रोध, मान और माया लोभ इन चारो का सग छोड़े रे ।
जव वीतरागी होय कर्म वन्धन को तोड़े रे ॥ ५ ॥
मेरे गुरे नन्दलाल कहे सन्तोष सदा सुखदायी रे ।
चातुर्मास अजमेर कियो सित्तर दश माँही रे ॥ ६ ॥

---

१ उन्नीसवें तीर्थङ्कर मल्लिनाथजी

२. कपिल ब्राह्मण राजा से दो माशा सोना लेने गया था, परन्तु मुह माँगा पाने का वचन पाकर राजा का सारा राज्य ही मागने की उसकी इच्छा हो गई । अन्त मे उसकी चेतना ने करवट वदली, तृष्णा को अपार समझ कर वह विरक्त हो गया ।
३. जिन ऋषि और जिनपाल भाई-भाई थे । लोभ से प्रेरित होकर अर्थोपार्जन के लिए वे परदेश गये । लौटते समय जिनऋषि ने समुद्र मे ही प्राण गवा दिये । ४ दूसरा द्वीप ।

: १५

हितोपदेश

(तर्ज—पूर्ववत्)

समझ अभिमानी रे, समझ अभिमानी रे।
थारी नदी पूर ज्यो जाय जवानी रे ॥टेर॥

मैला ख्याल मे जोवन जावे बागाँ मे गोट बनावे रे।
सतन की सेवा मे आवता काम बतावे रे ॥१॥
करी कान[1] सभा का भान ज्यो डाभ अग्र को पानी रे।
बिजली का झलका सी सम्पति वीर बखानी रे ॥ २ ॥
एक सरीखी टोली मिल गप्पा मे वक्त गमावे रे।
प्रभु-भजन निज नेम करत तुझ आलस आवे रे ॥ ३ ॥
टेडी पगडी टॅट घणी नित नया करे सिणगारा रे।
धर्म बिना कई गया पशु जिम हार जमारा रे ॥ ४ ॥
कोई जीव को मति सता तू प्याला प्रेम का पीजे रे।
दुर्लभ नरभव पाय सार सत्संगत कीजे रे ॥ ५ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि तो न्याय बात फरमाई रे।
जोड करी अजमेर पैष्ठ[2] पन्द्रह के माई रे ॥ ६ ॥

१६

बुढ़ापा

(तर्ज—पूर्ववत्)

बुढापो ऐसो रे, बुढापो ऐसो रे।
मैं सांच कहूँ यो है जम जैसो रे ॥टेर॥
जोवन जब लग बन्यो रहे नित मोज करे मनमानी रे।
बुढापो आलग्यो तो फिर नही रहे जवानी रे ॥ १ ॥
अजन मजन का सब नखरा देवे भुलाई भोला रे।
दाढी मूछ चोटी ने पटा करदे सब धोला रे ॥ २ ॥
नाक झरे मुख लार पडे सब इन्द्रिया बल हट जावे रे।
पड्यो रहे पोली मे कोई नजदीक न आवे रे ॥ ३ ॥

१ हाथी के कान के समान चचल। २ पसठ।

उठत वैठत हालत चालत बुड्ढा को तन कम्पे रे।
डगमग डगमग पाव पड़े मुख से कुछ जम्पे रे॥ ४॥

सच्चा साथी कोई न तेरे दिल मे वात जमा ले रे।
जब लग जरा न आई तव लग धर्म कमा ले रे॥ ५॥

तन से धन से ले ले लाभ यह वक्त फेर कव आवे रे।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि साची फरमावे रे॥ ६॥

. १७ .

बधाई

(तर्ज—पूर्ववत्)

बधाई गासा रे, बधाई गासां रे[1]
आनन्द से यहा पर हुआ चौमासा रे॥टेर॥

जो जो भाव शास्तर के माही, वीर जिनन्द प्रकाशा रे।
सुन सुन के भव जीव, सफल कीनी मन आशा रे॥ १॥

दया धर्म का बजा नगारा, झूंठ नही एक मासा रे।
चार सघ मे रही खुशी, यह बात खुलासा रे॥ २॥

मेरे मुख से आज दिन तक, निकली कडवी भाषा रे।
कर खमावणा सब के साथ, अति हर्ष मनासाँ रे॥ ३॥

सब भाया मिलजुल ने रहीज्यो,मैं तो विहार कर जासाँ रे।
दया धर्म का शरणा से, पासो सुख खासा रे॥ ४॥

साधु साध्वी उत्तम पुरुष की रखज्यो फिर अभिलाषा रे।
लीज्यो लाभ भक्ति का फले मुक्ति की आशा रे॥ ५॥

मेरे गुरु नन्दलाल मुनि के चरणे शीष नमासाँ रे।
दिल मे लग रही बहुत उमंग अब दर्शन पासाँ रे॥ ६॥

---

१ गायेंगे २ पाओगे

: १८ :

जिन-वाणी

(तर्ज—पूर्ववत्)

सुन जिन - वाणी रे, सुन जिन वाणी रे !
मत धर्म बिना खोवे जिन्दगानी रे ।।टेर।।
मनुष्य जन्म अरु आरज क्षेतर, उत्तम कुल मे आयो रे ।
दीर्घायु तन निरोग इन्द्रिय, पूरण पायो रे ।। १ ।।
श्रमण माहण की सेवा करके, ज्ञानामृत रस पीजे रे ।
साँची श्रद्धा धार धर्म मे, पराक्रम कीजे रे ।। २ ।।
यह दश बातॉ सर्व जीव को दुर्लभ श्रीजिन भाखी रे ।
खोजी हो तो कर निर्णय, शास्तर है साखी रे ।। ३ ।।
मूढ हिताहित सुकृत-दुष्कृत कबहूं नाही विचार्यो रे ।
चिंतामणि सम मनुष्य जन्म सब फोकट हार्यो रे ।। ४ ।।
क्रूर कर्म हिंसादिक तजने भली भावना भावो रे ।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि को है फरमावो रे ।। ५ ।।

१९ .

पाप छिपाया नहिं छिपे

(तर्ज—पूर्ववत्)

जिन फरमायो रे, जिन फरमायो रे ।
यह गुपत पाप नही छिपे छिपायो रे ।।टेर।।
बोयो बीज खेत मे पूछॉ, नाम नही बतलावे रे ।
उग बारने निकले तब, चौड़े दर्शावे रे ।।१।।
घास फूस को ढेर करीने, भीतर आग छिपावे रे ।
मशक मशक बलती जलती वह बाहिर आवे रे ।।२।।
आम पाल मे दिया कहा तक छिपा छिपा कर रखसी रे ।
पाक गया तब हाथो हाथ हट्टियो[1] पर बिकसी रे ।।३।।
लस्सण आदिक बॉट मसाला स्वाद करन मन ठानी रे ।
गुप चुप दियो बघार रहे नही बदबू छानी रे ।।४।।
या विध जुलमी जुल्म करीने खूब किया मन मीठा रे ।
गुरु नन्दलाल कहे वह आखिर पडसी फीटा[2] रे ।।५।।

---

१ हाट-बाजार २. निन्दित ।

: २० :

नरतन से लाभ

(तर्ज—पूर्ववत्)

लाहो ले ले रे, लाहो ले ले रे।
नर भव को टाणो नीठ मिल्यो छे रे ॥टेर॥
पायो लक्ष्मी पुण्य प्रमाणे व्हालो तू सगला ने रे।
करे राज का काज वात सब दुनिया माने रे ॥१॥
कमठाणो[1] चल रह्यो रात दिन वहु विध आरम्भ कीनो रे।
खर्च किया वहु दाम नाम जग मे कर लीनो रे ॥२॥
वडे वडे रईसो से तूने मोहव्वत भी कर लीनी रे।
सन्त मुनि गुणी जन की संगति पल भर नही कीनी रे ॥३॥
वड़ो होय फूले मत थारे कौन कौन संग आसी रे।
धर्म दलाली करी हरी[2] जिनवर पद पासी रे ॥४॥
कहे मुनि नन्दलाल तणा शिष्य सुनजो चित्त लगाई रे।
मारवाड़ का शहर सादड़ी जोड़ वनाई रे ॥५॥

: २१ :

शील

(तर्ज—पूर्ववत्)

शील सुखदाई रे, शील सुखदाई रे।
शुध पाल कई गया मुगति माई रे ॥टेर॥
राजमति संजम लेकर गई गिरी गुफा के माई रे।
राख्यो शील मुनि को प्रतिबोधी[3] मोक्ष सिधाई रे ॥१॥

---

१. कारखाना २ श्रीकृष्णजी ३ वाईसवें तीर्थङ्कर अरिष्टनेमि का विवाह राजीमती से होना निश्चित हुआ था। वरात रवाना हुई और तोरण तक जा पहुँची। अरिष्टनेमि ने वहाँ एक वाडे मे वन्द पशुओ को देखकर पूछताछ की तो मालूम हुआ कि वरातियो को मास खिलाने के लिए यह पशु इकट्ठे किये गये हैं। सुनते ही अरिष्टनेमि विवाह किये विना ही लौट पडे और गिरनार पर्वत पर तप करने चले गये। राजीमती ने भी विवाह करना स्वीकार नही किया। वाद मे वह भी दीक्षित हो गई।

अरिष्टनेमि के छोटे भाई रथनेमि भी साधु थे। एक वार वह गिरनार की एक गुफा मे ध्यानस्थ खडे थे। राजीमती वर्षा से वचने के लिए गुफा को सूनी समझ कर उसमे चली गई। रथनेमि के चित्त मे विकार उत्पन्न हुआ। उसने भोग की याचना की। राजीमती ने दृढ शब्दो से सयम का प्रतिवोध दिया। रथनेमि का चित ठिकाने आ गया।

काम अंध रावण सीता को ले गयो लंका माई रे।
पूरण राख्यो शील लेइ जस सुरपद पाई रे ॥२॥

पद्मोत्तर[1] नृप सुर साधन कर द्रोपदि को मंगवाई रे।
चतुराई से राख्यो शील हरि लायो जाई रे ॥३॥

सुभद्रा[2] के शिर सासू ने दीनो कलंक चढाई रे।
दूर कियो सुर कलंक जगत मे सुयश पाई रे ॥४॥

दुर्गति टले मिले सुख साता इन मे सशय नाई रे।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य दिल्ली जोड बनाई रे ॥५॥

: २२ ·

कठिन कहेगा

(तर्ज—पूर्ववत्)

कठिन कहेगा रे, कठिन कहेगा रे।
जो बेपरवाही नही दबेगा रे ॥टेर॥

इखुकार[3] नृप भग्गू पुरोहित को छड्यो धन मगवायो रे।
वमन कियो क्यो लियो राणी यो साफ सुनायो रे ॥ १ ॥

रहनेमि[4] मुनि को चित चलियो जाग्यो विषय विकारो रे।
राजमती स्थिर कियो वचन को दे धिक्कारो रे ॥ २ ॥

राजा परदेशी[5] को जडमूढ कहा केशी मुनि गुणधारी रे।
धर्मपथ मे लाय आप दियो जन्म सुधारी रे ॥ ३ ॥

---

१ श्रीकृष्ण कालीन धातकी खण्ड का एक राजा। इसने द्रौपदी का अपहरण करवाया था। पाण्डवो के साथ श्रीकृष्ण ने जाकर द्रौपदी का उद्धार किया था।

२ सोलह सतियो मे से एक प्रसिद्ध जैन सती।

३ भृगु पुरोहित, उसकी पत्नी और दोनो पुत्रो ने जब गृहत्याग कर दीक्षा लेने का सकल्प किया तो राजा इक्षुकार ने उनकी सम्पत्ति अपने खजाने मे मगवा ली। रानी को पता चला तो उसने राजा को बहुत समझाया। निदान राजा और रानी ने भी उनके साथ ही ससार त्याग दिया। ४ रथनेमि, जिनका परिचय दिया जा चुका है। पृ ३४, देखो पृ० २८ पर।

सेणिक नृप को मुनि अनाथी[1] दियो साफ फटकारी रे।
राजा तू भी खुद अनाथ जरा वोल विचारी रे ॥ ४ ॥
उगणी से अस्सी पन्द्रा मे जेठ मास के माई रे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य दिल्ली जोड वनाई रे ॥ ५ ॥

: २३ :

विगाड़ चार जनों से

(तर्ज—पूर्ववत्)

चतुर विचारो रे।
चार जणा नही करे सुधारो रे ॥ टेर ॥

राजा को परधान लोभवश तुरत न्याय को छडे रे।
झूंठा ने साचो कर दे साचा ने दण्डे रे ॥ १ ॥
जाति न्याति मे मोटा वाजे मुखियो पंच कहावे रे।
सू का खाय जीमण मे भर भर छावा उडावे रे ॥ २ ॥
साधु होकर वैठ सभा मे सुगतिपथ बतलावे रे।
धनवंता को लिहाज रखे नही, साफ सुनावे रे ॥ ३ ॥
मूरख वैद्य दवा नही जाने उनसे दवा करावे रे।
आयुष वल से बचे नही तो प्राण गमावे रे ॥ ४ ॥
महामुनि नन्दलाल तणां शिष्य शहर जावरे गावे रे।
फूटे पाप को भांडो तब चारो पछतावे रे ॥ ५ ॥

---

१ मगधसम्राट् श्रेणिक ने एक वार वन मे एक अतिशय तेजस्वी मुनि को देखा। पास जाकर पूछा—'भगवन्! आपको किस वस्तु का अभाव था कि आप साधु वने?' मुनि वोले—'अनाथ था।' राजा ने कहा 'अच्छा, चलिये मेरे साथ, मैं आपका नाथ वनता हू।' मुनि ने उत्तर दिया—'तुम स्वय अनाथ हो, मेरे क्या नाथ वनोगे?' सम्राट् ने चकित होकर कहा—'शायद आप नहीं जानते, मैं मगध का सम्राट् हू?' मुनि मुस्करा कर वोले—'क्या तुम्हारा साम्राज्य तुम्हे मौत से वचा सकेगा? तुम मुझे मृत्यु और रोगो से वचा सकोगे? नही, तो तुम स्वय अनाथ हो। मेरे नाथ किस प्रकार वन सकोगे?'

२४

सुधार चार जनों से

(तर्ज—पूर्ववत्)

चतुर विचारो रे।
इण चार जनाँ से हुवे सुधारो रे॥ टेर॥

निर्लोभी परधान होय खुद सदा ऐन मे चाले रे।
नीतिवन्त प्रतीतिवन्त प्रजा को पाले रे॥ १॥
करे जाति की हमदर्दी जो मुखिया पंच कहावे रे।
मर्याद-भग को सुद्ध करे रिश्वत नही खावे रे॥ २॥
साधु वैठ सभा के माही सत्यासत्य दर्शावे रे।
राजा होय चाहे रक सभी को साफ सुनावे रे॥ ३॥
वैद्यराज वैद्यक के वेत्ता बुद्धिवंत कहावे रे।
चारो कारण मिल्या तुरत ही रोग मिटावे रे॥ ४॥
महामुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य जोड करी इम गावे रे।
साच कहूँ यह चारो जणाँ जग मे जश पावे रे॥ ५॥

२५ :

बाई का कहना

(तर्ज—पूर्ववत्)

किण विध आऊँ रे।
म्हारा घर का सब थाने हाल सुनाऊँ रे॥ टेर॥

देवर जेठ ननद भौजाई सब ही को मन राखूं रे।
घर मे दानो सुसरो मागे अमल तमाखू रे॥ १॥
घर मोटो छोटो नही मैं तो बडा घराँ की बाजूं रे।
पग मे बीछ्राँ नही बाजना आता लाजूं रे॥ २॥
घर मे टावर छोटा माँगे गेहूँ का फुलका पोऊं रे।
भोजन थाल परोसी पीछे छाछ बिलोऊं रे॥ ३॥
सारो दिन धधा मे बीते पहर रात को पोढूं रे।
पहर रात की पाछी ऊठूं घट्टी घमोडूं रे॥ ४॥

मटकी ले पनघट के ऊपर पानी भरवा जाऊं रे।
दिन दो पहर चढे तव तक फुरसत नही पाऊं रे ॥ ५ ॥
कहे मुनि नन्दलाल तणा शिष्य घर धंधा यो ही चाले रे।
उस वाई को धन्यवाद जो टाईम[1] निकाले रे ॥ ६ ॥

: २६ :

पैसा का खेल

(तर्ज—आशावरी)

पैसा देखो जगत मे ऐसा, यह तो काम वनावे कैसा ॥ टेर ॥

जो जो वस्तु चाहत दिल मे ते ते ही जोग मिलावे।
जो पैसा नही पास हुवे तो कोई नही वतलावे[2] ॥ १ ॥
राजादिक को वश कर लेवे न्याय अन्याय करावे।
वैर विरोध करावन वाला पैसा ही झूंठ वुलावे ॥ २ ॥
द्वादश जुग मे होगया ऐसा वुड्ढे का व्याह करावे।
बिन पैसे के रहत कुंवारा यही तो अचरज आवे ॥ ३ ॥
वडे वडे विद्वान जिन्हो को देश परदेश भ्रमावे।
हँस हँस वात करावन वाला पैसा ही हेत तुडावे ॥ ४ ॥
पुण्य छता पुण्य बाधले प्राणी यह अवसर कव आवे।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य तुझने हितकर ज्ञान सुनावे ॥ ५ ॥

: २७ :

काची काया

(तर्ज—मल्हार)

काची काया को रे कौन विसास ॥ टेर ॥
हाड़ को पिंजर चाम लपेट्यो, जीव कियो तामे वास ॥ १ ॥
दरपन देख देख तन निरखे, उपजावे मन हांस ॥ २ ॥

---

१ धर्मक्रिया के लिये समय। २ वात करे।

कर कर स्नान सिंगार बनावे, करतो भोग विलास ॥ ३ ॥
मन गमता मेवा मिष्ट आरोगे, आखिर जंगल वास ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य आपनो, कर सद्गुण परकाश ॥ ५ ॥

: २८ :

अजब तमाशा

(तर्ज—तू सुन म्हारी जननी)

जिनवर फरमायो रे, सुन ले तमाशो इण जीव को ॥ टेर ॥

चौरासी लक्ष जोनि जीव की एक एक के माय ।
जन्म मरण कर लिया अनन्ता कहूँ तुझे समझाय रे ॥ १ ॥
स्वर्ग आठवा थकी चवी ने तिर्यञ्च भव मे आय ।
अन्तर्मुहूर्त[1] को आयु पालने गयो सातवी माय रे ॥ २ ॥
भूख प्यास की उष्ण वेदना परवश सही अनन्त ।
अब ही लाभ लूट जिन धर्म मे साच कहे छे सन्त रे ॥ ३ ॥
दीर्घ काल डुलतां हुवो सरे चहुँ गति कियो निवास ।
जिहाँ-जिहा जिन-जिन भव माही पूरण हुई न आस रे ॥ ४ ॥
उगणी से इकसठ चौमासो कीन्हो गढ चित्तौड ।
मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य गावे जुगत बनाई जोड रे ॥ ५ ॥

२९ :

छैल छबीला

(तर्ज—ममत मत करजो राज मन मे)

कुमति को वनियो रे छैलो, थे दियो सुमति ने ठेलो ॥ टेर ॥

सुख सम्पति दातार मुनीश्वर, चेतावे देई हेलो ।
धर्म काम मे ढील करे मत, नीठ मिल्यो तुझ मेलो ॥ १ ॥

---

१ अडतालीस मिनिट से कम और एक समय से ज्यादा का समय ।

तृष्णा वश अति कूड़ कपट कर धन कीन्हो बहु भेलो ।
जहाँ को तहाँ रहेगा पृथ्वी पर, जासी आप अकेलो ॥ २ ॥
मुख सेती बोले अति मीठो, मनमाँहो अति मेलो ।
पर को धन ठग ठग ने खावे, खरचे नही अधेलो ॥ ३ ॥
षटरस खातो होय रह्यो मातो, जैसे रुई को थैलो ।
तप कर तन को नही गाले तो परभव सुख किम लेलो ॥ ४ ॥
कहे मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य सूरत सम्भाल सवेलो ।
इण अवसर पर ले ले लाभ फिर सत् गुरु याद करेलो ॥ ५ ॥

: ३० :

सद्बोध

(तर्ज—मू थने नही पिछानूँ रे वीरा)

मत कर रे अनीति भाया, तुझे साँच कहे ऋषिराया ॥ टेर ॥
लंकपती सीता हर लाया तो जग मे अपयश पाया ॥ १ ॥
पद्मोतर नृप द्रौपदी मंगाई, तो कर्मो से राज गंवाया ॥ २ ॥
कंस पिता को पिंजर धर दीनो, तो हरि परभव पहुँचाया ॥ ३ ॥
श्रीदाम राजा को नन्द कुमति से, जैसा ही ते फल पाया ॥ ४ ॥
इम जान प्राणी छोड अनीति, तुझे न्याय करी समझाया ॥ ५ ॥
मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य गावे, तो नीति से बहु सुख पाया ॥ ६ ॥

: ३१ :

भाग्य

(तर्ज—डगमग नही करना, नही करना)

भाग्य विन नही पावे, नही पावे, तेरा चित्तने क्यो ललचावे ॥ टेर ॥
पुत्र के कारण पीर पैगम्बर, देवी देव मनावे ।
इम करताँ जो तुष्ट हुवे तो, रंक राव हो जावे ॥ १ ॥

लोभ के काज कई दक्षिण मे, कई पूरब मे धावे।
अर्थ मेलवा कोई उत्तर मे, कोई पच्छिम मे जावे ॥ २ ॥
सिहल देश और सबर देश, कोई मरुधर देश सिधावे।
तृष्णा वश निज कुटुम्ब आपको, कोई याद नही आवे ॥ ३ ॥
पुत्र पिता और पिता पुत्र को, नार पति ने चावे।
स्वारथ जो पूरण नही हो तो, पर भव मे पहुंचावे ॥ ४ ॥
कहे मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य, दमडी संग नही जावे।
दयाधर्म हिय धार जिन्हो से, भव भव मे सुख पावे ॥ ५ ॥

: ३२ :

दोमुखी दुनियां

(तर्ज—आसावरी)

ऐसी दुनिया को काँई पतियारो, या से बचकर रहिये न्यारो ॥ टेर ॥
साँच भी बोले झूठ भी बोले, बोल बोल नट जावे।
पंचा मे परतीत न जाँकी सौ सौ सौगन्द खावे ॥ १ ॥
झूठी साख भरे मतिहीना, साँची कर दर्शावे।
पल मे पलटताँ देर न लागे, लाज शरम नही आवे ॥ २ ॥
ड्योढा दूना करे वस्तु मे तो पण कसर बतावे।
कर कर बहुत बढाव जुगत से, भोला ने भरमावे ॥ ३ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, कई नर झूठ चलावे।
अन्त के तन्त तो न्याय चलेगा, साँच ने आच न आवे ॥ ४ ॥

: ३३ :

काची काया का गर्व

(तर्ज—ज्ञानी गुरु मत भूलो एक घडी)

जीया काँई फूले रे, काची काया रे ज्ञानी फरमाया ॥ टेर ॥
गोरो बदन सुखमाल घणेरो, हाँ रे रूप मनोहर तू पाया ॥ १ ॥
माताको रुद्र ने शुक्र पिता को, हाँ रे दोहु मिल बन्धी काया ॥ २ ॥

नौ महिना तू रह्यो मात– गर्भ मे, हाँ रे चाम चिडी जिम लटकाया ॥ ३ ॥
महा अशुचि को ठाम जणी[1] मे, हाँ रे वास वस्यो कांई सुख पाया ॥ ४ ॥
जन्म लेई ने दुख भूल गयो तू, हाँरे नखरा करे अब मन चाया ॥ ५ ॥
नर भव पाया निरजन जप ले, हाँ रे साँच कहे तुझे मुनिराया ॥ ६ ॥
मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य ऐसे, संजीत जोड करीने गाया ॥ ७ ॥

· ३४

ज्ञान को फटको

(तर्ज —लाल त्रिशला को प्यारो रे)

सुनावे गुरु ज्ञान को फटको रे ॥ टेर ॥

ज्ञान उजेलो होत हिया मे, मिटे मिथ्यातम घट को रे ॥ १ ॥
जागो जागो जिया आंख उघाड़ो, नीर वैराग्य को छिटको रे ॥ २ ॥
अशुची पिण्ड अनित्य तन यह तो, जैसे मिट्टी को मटको रे ॥ ३ ॥
कर परनिन्दा अनाहुत बोली, मक्खी जिम मत दो चटको रे ॥ ४ ॥
सध्या को भान करी कान ज्यूं थारो[2], अथिर जोवन को लटको रे ॥ ५ ॥
तप जप दान दया मग सूधो, कभी बीच मे नही अटको रे ॥ ६ ॥
यह सब ठाठ रैन सुपने का, रखो परभव को खटको रे ॥ ७ ॥
मुनि नन्दलाल दयाल की वाणी, सुन्या से मिटे भव भव भटको रे ॥ ८ ॥

: ३५ :

कर्मगति

(तर्ज.—पदमप्रभु पावन नाम तिहारो)

चेतन रे या कर्मन की गति न्यारी, कर सुकृत एम विचारी ॥ टेर ।
रावण राय त्रिखड को नायक, ले गयो राम की नारी ।
लक्ष्मण हाथे परभव पहुँचो, जाने दुनिया सारी ॥ १ ॥

---

१ जिसमे २ तेरा ।

अयोध्या नगरी को हरिश्चन्द्र राजा, तारादे तस घर नारी ।
माथे पुरो लेय हाट मे विकियो, कुंवर रोहित दास लारी ॥ २ ॥
कृष्ण नरेश्वर त्रिखड भुगता, यादव कुल अवतारी ।
अन्त समय जाय मुआ अकेला, वन कुसुम्बी मुझारी ॥ ३ ॥
कुण्डरीक राय वैराग्य धरीने, लीनो सजम भारी ।
कायर होय पीछा घर माँही आया, पहुँचे नरक मुझारी ॥ ४ ॥
चन्दनराय मलयागिरी रानी, पुत्र सायर नीर भारी ।
कर्म जोगे विछुडो पड्यो जाके, पुण्य से सम्पति पाया सारी ॥ ५ ॥
'खूवचन्द' कहे या कर्मों की रचना, सुण लीजो नर नारी ।
इम जाणी ने धर्म आराधो, सुख मिले आगे त्यारी ॥ ६ ॥

३६

भलाई

(तर्ज —पूर्ववत्)

चेतन रे तू ले जग बीच भलाई, एहवो जोग मिले कब आई ॥ टेर ॥

पुण्य प्रभावे सब ही सम्पति पायो, नर भव माँही ।
कुछ सुकृत का काम बने तो, कर तेरी है समर्थाई ॥ १ ॥
कृष्ण नरेश्वर पडोहो[1] वजायो नगरी द्वारका माही ।
उत्तम जन सुण सजम लीनो, देखो ज्ञाता माही ॥ २ ॥
चरण तले सुशल्या ने राख्यो[2], हस्ती का भव माही ।
शुभ परिणाम संसार घटायो, कीनी जबर कमाई ॥ ३ ॥
नेम प्रभु ने वन्दन जाता, गोविन्द मारग माही ।
ईटाँ को पुंज देख बुढा का, फेरा दिया मिटाई ॥ ४ ॥
भवसागर तिरजा रे भोला, सत गुरु देत चेताई ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, पारसोली के माँई ॥ ५ ॥

---

१ श्रीकृष्णजी ने एक वार घोषणा की थी कि अरिष्टनेमि भगवान् के पास जो दीक्षित होगे, उनके कुटुम्ब के पालन-पोषण का भार मैं लूंगा ।

२ मेघकुमार के पूर्व भव का वृत्तान्त, देखो पृ० २१

: ३७ :

कैसे होगा निस्तार ?

(तर्ज —प्रभु माने आपको आधार)

कैसे तेरो होयगो निस्तार,
पर भव की तुझ नाय परवा करत कूड विचार ॥ टेर ॥

अलप आयुप अनन्त तृष्णा, रहत मन्न मुझार।
खूब रुच रुच बाँध लीनो, पाप को सिर भार ॥ १ ॥
मन मते बहु ज्ञान पढने, रीझवे नर नार।
वादविवाद कर जन्म खोयो, काढ्यो नही कुछ सार ॥ २ ॥
आलसी धर्म नेम करता, पाप मे हुशियार।
जनम भर जस नाँहि लीनो, नही कीनो उपकार ॥ ३ ॥
महा मुनि नन्दलालजी, अति दीपता अनगार।
कहत यो तस शिष्य निश्चय, झूठ यो ससार ॥ ४ ॥

: ३८ .

विवेकी आत्मा

(तर्ज —क्या तन माँजता रे एक दिन मिट्टी मे मिल जाँना)

विवेकी आत्मा रे, विवेकी आत्मा रे।
अरे तूं अब तो निर्मल हो जा ॥ टेर ॥

गुरु सेवा की गंगा इन मे, पाप मैल का धो जा।
भारी हो रहा बहुत दिनो से, हलका करले वोजा ॥ १ ॥
ज्ञान रूप दर्पण के अन्दर, निज आतम को जो जा।
वार बार सत गुरु समझावे, ऐव दोष सव खो जा ॥ २ ॥
मुक्ति का मेवा चखे तो, ममता मही विलो जा।
जो अव मौका चूक गया तो, खुले नर्क मे रो जा ॥ ३ ॥
अमृत फल की इच्छा हो तो, वीज धर्म का वो जा।
कर नेकी का काम वदी से, अव तो दूर चलो जा ॥ ४ ॥
सत्य धर्म की सेज विछी है, सोना हो तो सो जा।
कहे मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य, मिले मोक्ष की मोजाँ ॥ ५ ॥

: ३६ :

परदेशी मानवी

(तर्ज —पूर्ववत्)

प्रदेशी मानवी रे, प्रदेशी मानवी र।
अरे तूं इधर उधर क्या जोता ॥ टेर ॥

मेरा मेरा कहे मुँह से, कहने से क्या होता।
विन स्वारथ के कोई न तेरा, पुत्र नार क्या होता ॥ १ ॥
घर धधा मे लदा फिरे ज्यो, परजापत का खोता[१]।
ठाठ पडा रहेगा पृथ्वी पर, कुटुम्ब रहेगा रोता ॥ २ ॥
तन मंदिर को छोड जायगा, ज्यो पिंजरे से तोता।
खड़े रहेगे मित्र देखते, आप खायगा गोता ॥ ३ ॥
हुवा उजेला जाग नीद से, वहुत वक्त का सोता।
सच्चा मोती छोड दिवाने, झूठा पोत क्यो पोता ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि की, वाणी सुन ले श्रोता।
नैया पार लगे एक क्षण मे, सव कारज सिध होता ॥ ५ ॥

: ४० :

सच्चा झूला

(तर्ज —चतुर नर इण विध चौपड खेल रे)

चतुर नर इण विध झूले झूल रे, अरे म्हारा प्राणीयाँ ॥ टेर ॥

भाई विनय मूल दरखत बोईये, चतुर नर ज्ञान शाख फैलाय रे ॥ १ ॥
भाई दृग[२] इरजा की रासडी चतुर नर गाढी गाठ लगाय रे ॥ २ ॥
भाई पाटकडी[३] समकीत भली, चतुर नर गाडा पाव ठेराय रे ॥ ३ ॥
भाई तप संजम गोडी लीजिये, चतुर नर डर मत आन लगाय रे ॥ ४ ॥
भाई सन्मुख हीदो मोक्ष को, चतुर नर सूधो ही जाजे ठेठ रे ॥ ५ ॥

---

१ कुम्हार का गधा। २ दृग-दर्शन-ज्ञान। ३ छोटा पटिया।

भाई पच्छिम हीदो पुठनो, चतुर नर तो पण है सुरलोक रे ॥ ६ ॥
भाई यह झूलो ऋषि झूलने, चतुर नर जावे छे मोक्ष मुझार रे ॥ ७ ॥
भाई श्री श्रीगुरु नन्दलालजी, चतुर नर नित-नित नमो चरणार रे ॥ ८ ॥
भाई 'खूबचन्द' कहे नीमच विषे, चतुर नर एहिज झूलो सार रे ॥ ९ ॥

: ४१ :

अर्ज

(तर्ज—ख्याल)

अर्ज हमारी सुन लीजिए श्रीमंदर जिनजी ॥ टेर ॥
विदेह क्षेत्र मे आप विराजो, मैं इण भरत मुझार ।
किणविध अंतर बात सुनाऊ, लग रही दिल मुझार हो ॥ १ ॥
चरम जिनेश्वर हुआ भरत मे, त्रिशलानन्दन वीर ।
जिनके आगे था चहु नाणी, गौतम जैसा वजीर हो ॥ २ ॥
श्रेणिक राजा थो परमत मे, नही त्याग पचखान ।
भव अतर पहिला जिन होसी, भाख्यो श्रीभगवान हो ॥ ३ ॥
राजगृही को अर्जुन[1] माली, पाप किया था भारी ।
छ. महीना के मायने सरे, मेल्यो मोक्ष मझारी हो ॥ ४ ॥
परदेशी राजा का रहता, लोही खरड्या हाथ[2] ।
उनको एक भव अंतरे सरे, मोक्ष कही साक्षात हो ॥ ५ ॥

---

१ राजगृह नगर का एक माली । एक दिन कुछ गुण्डो ने उसे बाध कर उसी के सामने उसकी पत्नी से दुराचार किया । अर्जुन माली यह देखकर क्रोध से पागल हो उठा । उसके शरीर मे यक्ष ने प्रवेश किया । तब सब बन्धन तडाक से टूट गये । उसने उन गुण्डो को और अपनी पत्नी को भी मार डाला । फिर उसने ऐसा रौद्र रूप धारण किया कि लोगो का नगर मे बाहर निकलना बन्द हो गया । उसने सैकडो आदमियो की हत्या कर डाली । एक बार भगवान् महावीर के आने पर दर्शन के लिए सुदर्शन सेठ नगर से बाहर निकले तो वह हमला करने दौडा । मगर सुदर्शन के आत्मबल के प्रभाव से यक्ष निकलकर भाग गया । अर्जुन को बोध हुआ । और उसने सुदर्शन के साथ भगवान् के पास जाकर दीक्षा ले ली । २ देखो पृ० २८

एवंता[1] कुमार लघु था, तिणहिज भव के मांय।
वीर जिनन्द सुदृष्टि करने, दीना मोक्ष पहुँचाय हो ॥ ६ ॥
कई स्वर्ग कई शिवपुर मेल्या, एक भव मे शिव पासी।
केवल ज्ञानी मुझ किम भूल्या, दिल मे उपजे हासी हो ॥ ७ ॥
आप कहो तु हाजिर नही थो, निर्णय किण विध थावे।
हाजिर रहीने निर्णय करतो, तो किम नाय बतावे हो ॥ ८ ॥
मृगो लोढो[2] थो घर माही, कब वह दर्शन आया।
कर दीना निस्तार वीर प्रभु, शास्तर मे फरमाया हो ॥ ९ ॥
मुझे भरोसा आपको सरे, सुन हो दीन दयाल।
'खूबचन्द' की यही अर्ज है, सुख देवो दुख टाल हो ॥ १० ॥

. ४२ .

कलियुग के मानवी

(तर्ज—थारो धर्म बिना यह मनुष्य जन्म काई काम को)

हो गए नीतिहीन कितनेक कलु के मानवी ॥ टेर ॥

जहाँ तक साता सर्व बात की, धर्म प्रताप बतावे।
जराक जा मे कष्ट पडे तो तुरत ढसल हो जावे ॥ १ ॥
पाच जणा मिल करे पानडी[3], हाथा से लिख जावे।
माँगे तो दमडी नही देवे, घुरको कर[4] नट[5] जावे ॥ २ ॥
स्वधर्मी की सार न पूछे, उलटो अवगुण गावे।
धरयो हुओ धर्मादो सो भी आप हजम कर जावे ॥ ३ ॥
एक एक की पक्ष करे नही, लम्बी नजर लगावे।
धर्म काम मे घाले गबोलो[6], सकत पच बन जावे ॥ ४ ॥
झूंठ बात नही कही जगत मे, सब ही को दर्शावे।
महामुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य, कोटा शहर मे गावे ॥ ५ ॥

---

१ बाल्यकाल मे दीक्षित भगवान् महावीर का एक साधु २ मृगा लोढा-अपने पूर्वोपार्जित पापो का फल भोगने वाला एक व्यक्ति।

३ दान की सूची ४ घुडक कर ५ मुकर जाता है ६ रोडे अटकाता है।

: ४३ :

क्यों हारे !

(तर्ज—पूर्ववत्)

क्यो हारे तू अनमोल मनुष्य भव पाय के ॥ टेर ॥

जो जो किया नेक वद कामा, देख हिसाव लगाय के ।
अकड मकड मे भूल मत, अंखियो पे ऐनक लगाय के ॥ १ ॥

सत्पुरुषो का सग किया नही रहा दूर शरमाय के ।
कुव्यसनी से किया प्रेम, हांथो से हाथ मिलाय के ॥ २ ॥

माया से माया जोडो, गरीवो की जान सताय के ।
ज्यो त्यों अपना काम वनाया, झूंठी जाल फैलाय के ॥ ३ ॥

दया धर्म का ले ले लाभ यो, सन्त कहे समझाय के ।
नही तो लोह वनिया ज्यूं आगे रोवेगा पछताय के ॥ ४ ॥

मेरे गुरु नन्दलाल मुनि तो, सच्ची कहे सुनाय के ।
जैपुर शहर चार सन्त मिल, कियो चौमासो आय के ॥ ५ ॥

: ४४ :

चेतावनी

(तर्ज—पूर्ववत्)

क्यो सूतो होय नचीत[1], जाग सुख पायगा ॥ टेर ॥

यह सब ठाठ रैन सुपने का, अल्प उमर खुट जायगा ।
छोड़ सराय मुसाफिर ज्यो, विन टेम कभी उठ जायगा ॥ १ ॥

थोडासा जीतव के खातिर, जो तू जुल्म कमायगा ।
आम स्वाद के काज राज तज, दियो जेम पछतायगा ॥ २ ॥

दुनिया तो सब है मतलव की, जो इन मे ललचायगा ।
तेरा किया तूं भुगतेगा, जद कोई काम नही आयगा ॥ ३ ॥

---

१. निश्चिन्त ।

जो जो वक्त अमोलक तेरा, गया न पीछा आयगा।
दया धर्म विन अहो मानव तू, भव भव गोता खायगा ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि, वैराग्य झडी बरसायगा।
करी जोड अजमेर शहर, सब मिथ्या भ्रम मिट जायगा ॥ ५ ॥

: ४५ :

कांई काम को !

(तर्ज—पूर्ववत्)

थारो धर्म बिना यो मनुष्य जन्म काई काम को ॥ टेर ॥

सज पोशाक सैल करवाने जावे सुबह और शाम को।
धन जोबन के मद मे छकियो भूल गयो प्रभु नाम को ॥ १ ॥
सत्गुरु की परवा नही थारे लोभ लग्यो नित दाम को।
पाप कर्म मे मन दौड़े ज्यो घोडो बिना लगाम को ॥ २ ॥
क्या फूले तू देख देख तन हाड मास लोही चाम को।
ऊमर भर जस नाही लियो थें कियो काम बदनाम को ॥ ३ ॥
कुटुम्ब काज मेहनत कर कर धन भेलो[1] कियो हराम को।
निज हाथो से कभी नही सुकृत मे काम छदाम को ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि बतलावे पथ शिव-धाम को।
दया दान तप नेम पाल पद मिले तुझे आराम को ॥ ५ ॥

: ४६ :

कंजूस की दशा

(तर्ज—लाखो पापी तिर गये सतसग के प्रताप से)

मू जी अपने हाथ से नही जीते जी कभी दान दे।
रात दिन जोड़े जमा नही जीते जी कभी दान दे ॥ टेर ॥

---

१. सचित।

पुत्रादिक को दान देते देख ले मूंजी कभी ।
तो खुद करे एकासना नही जीतेजी कभी दान दे ॥ १ ॥

चाहे कोई कुछ भी दे उसका फिकर मूंजी करे ।
जहां तक बने करदे मना नही जीतेजी कभी दान दे ॥ २ ॥

दीन दुखिया द्वार पै कोई सवाल डाले आन कर ।
करुणा का जिसके काम क्या नही जीतेजी कभी दान दे ॥३॥

खाना बद बद पहनना चाहे कोई भी त्यौहार हो ।
माया का मजदूर वो नही जीतेजी कभी दान दे ॥ ४ ॥

मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है ।
मू जी पू जी धर जायगा नही जीतेजी कभी दान दे ॥ ५ ॥

: ४७ :

माता-पिता का कर्त्तव्य

(तर्ज—पारस प्रभु से अर्ज हमारी है रात दिन)

बचपन से ही माँ बाप शुभ आचार सिखाते ।
मकदूर क्या जो पुत्र वो कुपूत कहलाते ॥ टेर ॥

अपना अदब गुरु का विनय की रीत बताते ।
बुलवाते जी-जीकार तो यश जगत मे पाते ॥ १ ॥

जो हिंसा झूठ चोरी कुकर्मो से डराते ।
पहले हिदायत होती तो क्यो नाम लजाते ॥ २ ॥

शुरु से सिखाई गालियाँ फिर वो हाथ उठाते ।
खीचे पकड़ के बाल न कुछ भी तो शरमाते ॥ - ॥

जैसे के रहे सग में गुण वैसे ही आते ।
इस न्याय को विचार के सुसग लगाते ॥ ४ ॥

मेरे गुरु नन्दलालजी सच बात बताते ।
सुपुत्र दीपक की तरह निज कुल को दिपाते ॥ ५ ॥

: ४८ :

गुरु की स्तुति

(तर्ज—पूर्ववत्)

गुरु देव की मुझ सेव पुन्य योग से मिली।
सुन्या बैन खुल्या नैन मेरी भ्रमना टली ।। टेर ।।
प्रकृति है मुलायम ज्यो गुलाब की कली।
सब मन की मेरी आस बहुत दिन से फली ।। १ ।।
निष्पक्ष हो के कहते कथा ज्ञान की भली।
मुझे आवे स्वाद मु ह से ज्यो मिष्टान्न की डली ।। २ ।।
है ज्ञान के दरियाव धोवे पाप की कली।
न मान माया लोभ है वैराग्य को झली ।। ३ ।।
महामुनि नन्दलालजी सन्तोष की सली।
तस शिष्य को गुरु कृपा से सुखसम्पति मिली ।। ४ ।।

: ४६ :

स्थविर मुनिश्री नन्दलालजी महाराज के गुण

जैसे शशि है सोम ऐसी दीपति रति।
गुरु आपका उपकार मैं तो भूलतो नथि ।। टेर ।।
विद्या के सागर आप पूरे जैन मे यति।
उपजे अति मुझ प्रेम ऐसी सूरत शोभति ।। १ ।।
भव जीवो के हित आप कथा कहते [1]यूकति।
उपदेश की छटा को पार न पावे सुरपति ।। २ ।।
चरचा मे है निपुण करे बात सूत्रति।
जिन धर्म की फते फते बजाते हो अति ।। ३ ।।
मेरे गुरु नन्दलालजी से यही विनति।
मैं आपका निज दास दीजो मोक्ष की गति ।। ४ ।।

---

१. युक्ति के साथ।

: ५० :

चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त को उपदेश

(तर्ज—कव्वाली)

ब्रह्मदत्त[1] मानले कहना, वक्त यह फिर न आवेगा।
नाहक भोगो मे ललचा के, नफा तू क्या उठावेगा ॥ टेर ॥

पूर्वभव का है तू भाई, कहू मैं साफ दरसाई।
और हित के लिये तुझको, कौन सच्ची सुनावेगा ॥ १ ॥

कुटुम्व निज मित्र और न्याति, यह तो सव स्वार्थ के साथी।
तुझे तो काल के मुह से, नही कोई छुड़ावेगा ॥ २ ॥

मेरी यह मेरी यो करके, असल मे जहा की जहा धरके।
चली जा रही है सव दुनिया, तू भी ऐसे ही जायेगा ॥ ३ ॥

स्वजन धन फौज चतुरगी, कोई किसका नही सगी।
याद रख एक दिन नृप तू, अकेला ही सिधावेगा ॥ ४ ॥

मुनि नन्दलाल गुरु ज्ञानी, उनकी सुन प्रेम से वानी।
दया के कुण्ड मे नहाले, दुखो की दाह वुझावेगा ॥ ५ ॥

: ५१ :

असल में कौन

(तर्ज—पूर्ववत्)

वतादे नाम तू उसका, असल मे कौन है तेरा ?
जिया सतसग करने से, मिटे चौरासी का फेरा ॥ टेर ॥

रानी देवकी के अग जाया, द्वारिकानाथ कहलाया।
कुटुम्व कोई काम नही आया, जिन्हो के अन्त की वेरा ॥ १ ॥

चौथा चक्रवर्ती सा राया[2], रूप देखन को सुर आया।
विगड गई छिनक मे काया, उनको जब रोग ने घेरा ॥ २ ॥

धन इब्बो का था घर मे, जहाज चलती थी सागर मे।
सेठ कहलाते नगर मे, यहां पर वह भी नही ठेरा ॥ ३ ॥

---

१. चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त को उसके पूर्वभवो के सहोदर चित्त मुनि का उपदेश। देखो पृ० १६

२. सनत्कुमार चक्रवर्ती ने अपने रूप का अभिमान किया था।

पूर्ण समकित में दृढताई, श्रेणिक नृप था बडा न्याई ।
छोडकर राज सब याही, नरक मे जा किया डेरा ॥ ४ ॥
देख ससार की रचना, नाहक यो ही पाप में पचना ।
हो तो विद्वान तू वचना, मुनि नन्दलाल गुरु मेरा ॥ ५ ॥

: ५२ :

हितोपदेश

(तर्ज—पूर्ववत्)

समझ नर क्यो गाफिल होके, वक्त अनमोल खोता है ।
मुक्ताफल छोड़ के असली, क्यो झूठा पोत पोता है ॥ टेर ॥
ठगो की नगरी है सारी, इसमे तू आया व्यौपारी ।
तुझे कुछ भी नही मालूम, सुबह का शाम होता है ॥ १ ॥
खर्च कितना किया वह लेख, कमाई क्या करी सो देख ।
आम उखाड के जड से, आक का बीज बोता है ॥ २ ॥
निगाह कर देख तो घर की, बुराई क्यो करे पर की ।
ज्ञान की गहरी नदियो मे पाप मल क्यो न धोता है ॥ ३ ॥
फिरे तू हो के मद माता, धर्म के पथ नही आता ।
पडा मोह जाल के फन्द मे, जैसे पिजरे मे तोता है ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल हित आनी, कहे सो मान भव प्रानी ।
सडक सीधी है शिवपुर की, देख किस तर्फ जोता है ॥ ५ ॥

: ५३ :

नशा-निषेध

(तर्ज—माता मरुदेवी के लाल मोक्ष की राह दिखाने वाले)

मत कर नशा कहना मान, तू अपना हित चाहने वाले ॥ टेर ॥
जो करते नशा अजान, उनको रहे नही कुछ भान ।
सब ही लोग कहे बेईमान, कुल का नाम लजाने वाले ॥ १ ॥

केई कपडा माल गमाते, केई गलियो में गिर जाते।
कुत्ते उनके मुंह चाट जाते, मक्खियों को न उडाने वाले ॥ २ ॥
वह निर्लज होते चोडे, फिर सग मे छोकरा दौड़े।
घर के वर्तन वासन फोडे, हाँ हाँ हँसो कराने वाले ॥ ३ ॥
न रहे हिताहित का ख्याल, मुंह से वोले आल[1] पपाल।
करते लोग हाल वेहाल, म्हा म्हा मौज उडाने वाले ॥ ४ ॥
है बहुत मजे का टेम, तेरे नित्य रहेगा क्षेम।
दिल से कर दे झट पट नेम, अपनी इज्जत वढाने वाले ॥ ५ ॥
गुरुवर मेरे श्री नन्दलाल, है सव जीवों के प्रतिपाल।
देते मिथ्या धर्म को टाल, सच्चा ज्ञान सुनाने वाले ॥ ६ ॥

: ५४ :

निन्दक

(तर्ज—म्हाने वीतराग की वाणी प्यारी लागे रे)

निन्दक पर निन्दा के माय सदा खुश रेवे रे ॥ टेर ॥
दिया ज्ञान गुरु देव दया कर धर्म पथ मे लाया।
भूल गया उपकार महाशठ उलटी करे वुरायाँ ॥ १ ॥
चौपद माही श्वान नीच पखी मे काग विशेष।
निन्दक सव मे नीच वतायो नीति शास्त्र लो देख ॥ २ ॥
सूअर कण कुण्डो[2] छांड़ी ने विष्टा पर चित्त देवे।
ज्यो निन्दक अवगुण ने काजे छिद्र ताकतो रेवे ॥ ३ ॥
सुनी वात साँची झूठी को निर्णय करे न कोय।
फक्त रहे निन्दा करवा में दियो जमारो खोय ॥ ४ ॥
होय अशुचि साफ उदक से निन्दक मुख से चाटे।
जुग जुग सदा जीवतो रहीजे मुझ आतम हित माटे[3] ॥ ५ ॥
पाप पन्दरमो लागे निन्दक निन्दा छोड पराई।
महा मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य दिल्ली जोड वनाई ॥ ६ ॥

---

१. अटसट २. धान्य का पात्र ३ वास्ते

: ५५ :

ज्ञान विना

(तर्ज—पूर्ववत्)

ज्ञान विन कभी नही तिरना, करो तुम अच्छी तरह निरना[1] ॥ टेर ॥

ज्ञान दया का मूल रूल यह फरमाया वीतराग।
ज्ञान विना सोहे नही ज्यू हस सभा मे काग ॥ १ ॥
गृहस्थ धर्म और मुनि धर्म ये दोनो ज्ञान आधार।
ज्ञान विना ससार का सरे चले नही व्यवहार ॥ २ ॥
पहिले सीखते ज्ञान गुरु से देखो सूत्र का न्याय।
फिर शक्ति अनुसार तपस्या करते वो मुनिराय ॥ ३ ॥
विद्या है धन मित्र सभा मे आदर देवे भूप।
विद्या विन नर पशु सरीखा फक्त मनुष्य का रूप ॥ ४ ॥
ज्ञानी रहे पाप से बचकर ज्ञान पढो दिन रैन।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि की यही हमेशा केन ॥ ५ ॥

: ५६ :

हितोपदेश

(तर्ज—फाग)

काई फिरतो रे जोर जवानी मे ॥ टेर ॥

हितकर ज्ञान सुनावत ज्ञानी, तू समझ समझ इण सानी[2] मे ॥ १ ॥
नर भव रत्न चितामणि सरीखो, क्यों तू हारे एक आनी में ॥ २ ॥
उस दिन ठौर कौन छिपने की, जब आवेला काल निशानी में ॥ ३ ॥
पाप की पोट धरी शिर तैने, प्रभु नही भज्यो जिदगानी मे ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य मन मे, मगन मीन जिम पानी मे ॥ ५ ॥

---

१ निर्णय २ सेन मे।

: ५७ :

हितोपदेश

(तर्ज—पूर्ववत्)

परभव में तव पछतावेलो ॥ टेर ॥

ज्ञानी गुरु ज्ञान झडी वरसावे, जो इण में नही नहावेलो ॥ १ ॥
दान दया बिन नर भव यो ही, जो तू ऐल गमावेलो ॥ २ ॥
कर कर पाप कर्म धन सचे, तू सग काई ले जावेलो ॥ ३ ॥
स्वजनादि तेरे कोई न साथी, जद धक्का नर्क मे खावेलो ॥ ४ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, तू करणी जैसा फल पावेलो ॥ ५ ॥

: ५८ :

रसना

(तर्ज—खोटो लालचीयो)

रसना मतवाली ! मत विना विचारी बोल ॥ टेर ॥

पर निन्दा मे प्रसन्न घणी, तू कलह करावनहार ॥ १ ॥
स्वजन स्नेही मित्र के, तू भेद पड़ावन हार ॥ २ ॥
स्वाद मे बड़ी चटोकडी, कई भ्रष्ट किया नर नार ॥ ३ ॥
बात विगाड़े बोलने, तू खाय विगाडे आहार ॥ ४ ॥
'खूव' मुनि तो इम कहे, गुणी का गुण गा हर वार ॥ ५ ॥

: ५९ :

बेटी को शिक्षा

(तर्ज—पूर्ववत्)

बाई सुन हित शिक्षा, तू जातिवन्त कुलवन्त ॥ टेर ॥

सासू सुसरा जेठ की, तू करजे शर्म सदीव ॥ १ ॥
चूक पड़्या देवे ओलम्भो, गलती लीजे मान ॥ २ ॥

कभी करे मत रूसनो, तू सब से रखजे प्रेम ॥ ३ ॥
करजे सेवा साधु की, तू पालजे धर्म आचार ॥ ४ ॥
खूब मुनि दिल्ली विषे, करी विदा समझाय ॥ ५ ॥

: ६० :

तपस्या

(तर्ज—कैसो जोग मिल्यो छे रे)

तपस्या घणी कठिन छे रे ।
अन्न त्याग मन को वश करनो घणो कठिन छे रे ॥ टेर ॥
दिन मे खावे निस मे खावे, खावे साझ सवेर ।
कलह मचावे तपे तपावे, जो होवे कुछ देर ॥ १ ॥
अन्न पेट मे पड्या बिना, कुम्हलावे कोमल मुख ।
काचो पाको कुछ गिने नही, भू डी वेरिन भूख ॥ २ ॥
नाचे कूदे वात बनावे, सूँघे सखरा फूल ।
एक टेम अन्न नही मिले तो जाय राग रग भूल ॥ ३ ॥
वस्तर वेचे शस्तर वेचे, वरतन वेची खावे ।
जिम तिम करने पेट भरे पण भूखो रह्यो न जावे ॥ ४ ॥
महामुनि नन्दलाल तणा शिष्य, जोड करी रतलाम ।
ताको धन्य तपस्या करके, मन को रखे मुकाम ॥ ५ ॥

: ६१ .

जोबन

(तर्ज—पहाड)

जोवन थारो है यह पतग को रग ।
इम जाणी करो सतसग ॥ टेर ॥
श्याम घटा की बीजली रे, ज्यू पीपल को पान ।
नदी पूर किल्लोल उदधि को, मान चाहे मत मान ॥ १ ॥

बाट बटाऊ पाहुणो रे, जेम खलानो धान ।
बाजीगर ना खेल सरीखो, जिम सझा को भान ॥ २ ॥
मयूर अवाज सुणी अहि भागे, जैसे स्पेशल रेल ।
धनुष थी बाण छूटा जिम जावे, पवन के आगे पेल ॥ ३ ॥
भूले मती जोबन के मटके, सब सुपना के ठाठ ।
करले कमाई है मध्य वेला, यह बुधवारचो हाट ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल कहे छे, समझ समझ नर एम ।
वृद्ध अवस्था जब लग दूरी, तू पाले धरम को नेम ॥ ५ ॥

: ६२ :

कर्म-गति

(तर्ज—पूर्ववत्)

कर्म गति जाने कौन सुजान, कोई मत करज्यो अभिमान ॥ टेर ॥
मैं हिज हू सुख सम्पति वाला, मुझ सम जग मे नाय ।
लाखो विमान के नाथ सुरेन्द्र, उपजे एकेन्द्री मे आय ॥ १ ॥
पुत्र पिता बंधव निज नारी, कोई न किसका होय ।
सुणी कथा कोणिक मणिरथ की, सूत्र से लीजिये जोय ॥ २ ॥
पांचो ही पाँडव बारह वर्ष तक, दुख भुगते वनवास ।
नगरी वैराट रहे छिप छाने, नृपति के घर दास ॥ ३ ॥
भूखा मरता मानवी रे साल छपन के मांय ।
कई मूवा कई भ्रष्ट थया, कई रडवडिया अकुलाय ॥ ४ ॥
शास्त्र की वाणी सुन ले प्राणी, करज्यो दीर्घ विचार ।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनीश्वर, कहे छे वारम्वार ॥ ५ ॥

: ६३ :

तपस्या

(तर्ज—पूर्ववत्)

मानव शुद्ध तपस्या कर इण नाय[1], थारा कर्म पुज झड़ जाय ॥ टेर ॥
सिंह तणा सुन शब्द तुरत ही, मृग भागे वन मांय ।
सूर्य प्रकाश के आगल जैसे, अन्धकार विरलाय ॥ १ ॥

---

१. ज्ञात-उदाहरण ।

पीजण की फटकार लग्या, जिम जाय रुई नो पेल ।
आग के आगे बारूद न ठेरे, साबुन के सग मेल ॥ २ ॥
सहस वर्ष मे नर्क जीवो के, कर्म क्षय नही थाय ।
इतना कर्म मुनिवरजी तोडे, चउथभक्त के माय ॥ ३ ॥
जीव मखन जिम काया कटोरी, तप अग्नि की आच ।
कर्म मैल की जलत खटाई, समझू मानो साच ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनीश्वर, कहे छे बारम्बार ।
भव भव मे सुख होय निरन्तर, निज आतम गुण धार ॥ ५ ॥

: ६४ :

पाप की काट जंजीर

(तर्ज—पूर्ववत्)

समझ नर पाप की काट जजीर, पायो दुर्लभ मनुष्य शरीर ॥ टेर ॥

आतमगुण सेवन कर प्राणी, निर्भय थई मत सोय ।
सुरेन्द्र आस करे इस तन की, फोकट में मत खोय ॥ १ ॥
यह तन साधन मोक्ष को रे, और गति मे नाय ।
समझू थई ने क्यो न विचारे, मानव नाम धराय ॥ २ ॥
काचो कुम्भ ज्यो काच की शीशी, जिम बालूनो ढग ।
विनशत वार कछू नही लागे, छिन छिन मे रग विरग ॥ ३ ॥
माणक हीरा मोती से मू घो, मोले मिलतो नाय ।
मोक्ष पहूचा मुनिवर केई, आवागमन मिटाय ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल कहे तुझे, प्यारा लगे पकवान ।
आखिर यह तन तेरो नाही, मान चाहे मत मान ॥ ५ ॥

: ६५ :

सद्बोध

(तर्ज—पूर्ववत्)

कुमति सग छोडो छोड़ो छोडो छोडो छोडो रे ।
सुमति संग जोडो जोडो जोडो जोडो जोड़ो रे ॥ टेर ॥
मानुष को भव दुर्लभ पायो, देव करे तेहनी आश ।
माग्यो मिले नही, मोल मिले नही, मिलिये तो करिये तलाश हो ॥१॥

रतन - जडित की सुवर्ण चर्वी[1] चूल्हे दीनो चढ़ाय।
चन्दन बाले[2] मांही खल राधे, एहवो तूं मत थाय हो ॥ २ ॥
करजदार पहले होई बैठो, फिर लावे करज उधार।
चुकाया बिन सूत्र सम्भालो, नही होगा छुटकार हो ॥ ३ ॥
जन जन सेती वैर बसावे, होय रह्यो अलमस्त।
पीपल पान ज्यो भान[3] सझ्या[4] को आखिर होवे अस्त हो ॥ ४ ॥
अब के जोग मिल्यो मत चूको, याद करोला फेर।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे छे, जोड़ करी अजमेर हो ॥ ५ ॥

: ६६ :

सत्योपदेश

(तर्ज—पूर्ववत्)

कलियुग का मानव मानो मानो मानो मानो रे।
थाने परभव निश्चय जानो जानो जानो जानो रे ॥ टेर ॥
साधु जन की आय समीपे, सुने न हित की बात।
दुनियां की खटपट मे तेरा, बीत गया दिन रात रे ॥ १ ॥
ये तन ये धन ये बल बुद्धि, ये सामर्थ सब थोग।
करना होय सो करले भला फिर, ऐसा मिले कब जोग रे ॥ २ ॥
निज स्वजन पालन पोषण मे, वन्यो रहे इक ध्यान।
धर्म कियो नही नेम कियो नही, कर से दियो नही दान रे ॥ ३ ॥
रंक को राज मिल्यो दो घडी को, दीनो वक्त गुजार।
इण विध पछतावो पडसी जद, पहुचेला आन करार रे ॥ ४ ॥
उगणी से छियन्तरे रे, अलवर राजस्थान।
कहे मुनि नन्दलाल तणां शिष्य, अब भी चेत सुजान रे ॥ ५ ॥

---

१ छोटा चरु-पात्र विशेष २. जलावे ३ सूर्य ४ सध्या।

: ६७ :

वर्ष का तरुवर

(तर्ज —पूर्ववत्)

चेतन थारा तरुवर फल लूण[1], थाने साच कहेला फेर कुण ।। टेर ।।
दश सहस्र वली आठ से रे फल[2] लागे सव कूल ।
अठाई से ऊपरे कोई अस्सी[3] उघड़े फूल ।। १ ।।
मोटो पेड सुहावनो रे[4] शाखा दो दो आठ[5] ।
छोटी शाखा है घणी कोई तीन सो ऊपर साठ[6] ।। २ ।।
साच कहूं सूतर थकी रे पत्र असख्या थाय[7] ।
एक थी दूजो निकले काई तुरत फुरत झड जाय ।। ३ ।।
तज आलस्य प्रमाद ने रे शुद्ध क्रिया के साथ ।
जो सेवे तन मन थकी जाके विघ्न सहु टल जात ।। ४ ।।
महा मुनि नन्दलालजी रे पडित मे परमाण ।
गुप्त भेद तस शिष्य कहे काई समझे चतुर सुजान ।। ५ ।।

. ६८ .

फोकट

(तर्ज—पूरो सुख नही पचमे आरे)

ऐसे श्रावक नो नही आचारो ।। टेर ।।
श्रावक नाम धराय लिया, जाके त्रस स्थावर की नही छे दया ।
शुद्ध नही जाके नवकारो ।। १ ।।
थापण मेले जाका दब्ब करे, घूस खाय नें कूड़ी शाख भरे ।
डर नही परभव जावा रो ।। २ ।।
चोरी करे पर धन्न हरे, वलो कूडा तोला ने कूडा माप करे ।
खोटा वणज करे न्यारो ।। ३ ।।
घर की नही मरजाद करे, पर दारा सेती गमन करे ।
काण[8] कायदो नही जारो ।। ४ ।।

---

१ लुन, काट २ एक वर्ष की घडियां १०८००, ३. एक वर्ष के प्रहर २८८० ४. एक वर्ष रूप पेड-वृक्ष ५ दो दो चार और आठ यो वारह महीने ६ एक वर्ष के तीन सौ साठ दिन । ७ एक वर्ष के समय असख्यात होते हैं ८ मर्यादा ।

धन के काज अकाज करे, ते तो किण विध कहो ससार तिरे ।
आरम्भ करे अति विस्तारो ।। ५ ।।
वन्न[1] कटावे बहु भार भरे, वलि शस्तर ना सयोग करे ।
ताल सरोवर को फोड़ावे पारो ।। ६ ।।
धर्मस्थानक कभी नही आवे, वलि रामत[2] देखण ने जावे ।
काम नही प्रतिक्रमणा रो ।। ७ ।।
निरमल पाल्यो जाने श्रावक पणो,जाको सुत्तर मे विस्तार घणो ।
जोर लगाई कियो खेवा पारो ।। ८ ।।
छप्पन वैशाख शुद्ध चोदश खरी, शहर सीतामहु मे जोड करी ।
'खूब' कहे वारम्वारो ।। ९ ।।

: ६९ :

फोकट श्रावक

(तर्ज —ख्याल)

प्रगट कहू सो तुम सुण लेना, उसे फोकट श्रावक केना ।। टेर ।।
जीव दया मे कछू न समझे भाषा मर्म[3] की वोले ।
सू ख[4] खाय कुलेख लिखे परनार ताकतो डोले ।। १ ।।
ख्याल देखतो फिरे आप सता के आवतां लाजे ।
सौगन लेकर देवे तोड खुद धोरी धर्म को वाजे ।। २ ।।
त्रस स्थावर को हणे पहाड़ चढ़ मेले जाय मिजाजी ।
पुण्य पाप को भेद न जाने परनिन्दा मे राजी ।। ३ ।।
हुक्का चिलम वीड़ी भग पीवे उलटी वात जचावे ।
नीर निवांणा माय कूद कर भैसा रोल मचावे ।। ४ ।।
सन्ता सेना करे कपट शठ उलट-पुलट समझावे ।
आप रहे न्यारो को न्यारो कुबुद्धि कुवध भिड़ावे ।। ५ ।।
पक्ष ग्रही अभिमानी द्वेषवश कूड़ा कलंक चढावे ।
ऐसा कर्म कमाय जैन को नाहक नाम लजावे ।। ६ ।।

---

१. वन २ खेल-तमाशा ३ मर्म वेधनेवाली ४. घूस ।

अवगुण तज गुण को पाले, जब शुद्ध श्रावक कहलावे।
परभव सुधरे आपको सरे इण भव शोभा पावे ॥ ७ ॥
उगणी से अस्सी को कीनो चतुरमास चित चावे।
जोड करी अजमेर मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे ॥ ८ ॥

७०

जीवदया से नरक दूर

(तर्ज—ठुमरी)

जो जिन वचन प्रमान करे, ऐसी जीव दया से नरक परे[1] रे ॥ टेर ॥

सर्व धर्म को मूल दया है, पूरे पडित साख भरे रे ॥ १ ॥
आतम सम पर आतम जाने, फिर उनके दुख दूर करे रे ॥ २ ॥
त्रस स्थावर सुख के अभिलाषी, दुख स्थानक से दूर टरे रे ॥ ३ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, रावलपिंडी जोड करे रे ॥ ४ ॥

७१

तम्बाकू-निषेध

(तर्ज—ख्याल)

पिया छोड तम्बाकू बदबू की लपटा मुख से नीकले ॥ टेर ॥
महीने की महीने धरे स तू आठाना[2] पर आग।
एक वर्ष का खर्च मे स थारे बने सभी पोशाग रे ॥ १ ॥
हाथ होठ कपड़ा जले स थारो जले कलेजो दत।
वार बार मैं मना करू मत पिवो तमाखू कत रे ॥ २ ॥
टोली मिल हट्टी के ऊपर सुलफा आप उड़ावे।
लाभ खर्च जान्यो नही स थाने उगली लोग बतावे रे ॥ ३ ॥
भर भर कुरला डाले जात को कारण नही छे कोय।
दक्षिण देश गुजरात मे सरे इण विध जरदो होय रे ॥ ४ ॥

---

१. दूर २ आठ आना।

लीप्यो छाब्यो वहुत मजा को कियो आंगणो कारो।
सारा घर मे राख वखेरी देख्यो माजनो थारो रे ॥ ५ ॥
फोड़ चिलम और ढोल तम्बाखू सोधी तरह समझाऊ।
सारा शहर मे शोभा होसी, कहसी लोग कमाऊ रे ॥ ६ ॥
छोड तमाखू जो सुख चाहे गुरु रह्या समझाई।
महा मुनि नन्दलाल तणां शिष्य जैपुर जोड बनाई रे ॥ ७ ॥

: ७२ :

सप्त व्यसन-निषेध

(तर्ज—वनजारा)

जिया सात व्यसन मत सेवे, यो ऋषि मुनि सव केवे ॥ टेर ॥

जूआ खेले दाँव लगावे, पर धन पर इच्छा जावे जी।
मोटो अनरथ भो कर लेवे ॥ १ ॥
मास आहार करे नर भूडो[१], वह जावे नर्क मे ऊडो जी[२]।
दिल दया न जिनके रेवे ॥ २ ॥
मद पान नशा का करना, तन धन हानि दु.ख भरना जी।
शुद्ध वुद्धि होस नही रेवे ॥ ३ ॥
वेश्या से नेह लगावे, ताको अदव आवरू जावे जी।
कोई भला मनुष्य नही केवे ॥ ४ ॥
सज शस्त्र अहेड़े[३] जावे, पर जीवो का प्राण सतावे जी।
वह दुर्गति का दु.ख सेवे ॥ ५ ॥
करे चोरी वह चोर कहावे, जो राज मे पकड़ा जावेजी।
ताको बहुत तरह दु ख देवे ॥ ६ ॥
परनारी से प्रीत लगाके, कोई बैठा नही सुख पा के जी।
पाले शील वही सुख लेवे ॥ ७ ॥
नन्दलाल मुनि गुरु देवा, मिलि पुण्य योग मुझे सेवा जी।
गुरु चोखी शिक्षा देवे ॥ ८ ॥

---

१ निन्दित। २ गहरा। ३ आखेट-शिकार।

: ७३ :

सुमति का कथन

(तर्ज—लोभी पनवाजी)

लोभी जीवाजी, घर आवो सुमत का छैल ॥ टेर ॥

शिवपुर पाटन चालनो, पूरण सुख की ठौर।
निर्भय मारग पाधरो[1] काई कुमति को सग छोड ॥ १ ॥
कुमति ठगारी जगत मे, तिण सेती अनुराग।
प्रत्यक्ष सुख छे एह थी, पण पीछे फल किम्पाक ॥ २ ॥
सहस्र वर्ष कुण्डरीकजी, पाल्यो सजम भार।
कुमतिवश घर आइयो तो पहुचो नरक मुझार ॥ ३ ॥
मुझ[2] सगे बहु मानवी, पाया भव नो पार।
वीर जिनेश्वर भाखियो, काई शास्तर मे विस्तार ॥ ४ ॥
कुमति को सग छोड़ के, सुमति से कर हेत।
महामुनि नन्दलालजी तणा शिष्य कहे अब चेत ॥ ५ ॥

: ७४ :

शिक्षा

(तर्ज—भाव धरी जिन वन्दिये)

वीर जिनन्द दीनी आगन्या[3], आठ बोला मे नही करीये प्रमाद के।
ठाणायग ठाणे आठ मे,सुनकर ज्ञानी हो राखो हिवड़ा मे याद के ॥ टेर ॥

विनय करो गुरुदेव को, सीखीजे हो अपूरब ज्ञान के।
बिना ज्ञान शोभे नही, विन इन्दु हो जिम रजनी सुजान के ॥१॥
ज्ञान भण्यो अति खप करी, परियटना हो कीजे वारम्वार के।
विन पर्यटन ठहरे नही, किम पावे हो शोभा जगत मझार के ॥२॥
त्याग से आश्रव रोकिये, नयो बन्धन हो नही कर्म को थाय के।
भवोदधि मे रुले नही, जिम रू ध्या हो छिद्र किस्ती के न्याय के ॥३॥

---

१ सीधा २. सुमति के ३ आज्ञा।

भव भव का जो सचीया, तप करके हो दीजे कर्मन काप के।
जिम नवनीत मे छाछड़ी, नही छीजे हो बिन अगनी को ताप के ॥४॥
धर्म वली ससार मे, नही दीसे हो जिनके पक्ष लगार के।
तिन को आधार दे धारिये, एथी मोटो हो किसो छे उपकार के ॥५॥
रोग करी तन पीडियो,वली तपस्या थी हो थयो अति गिल्यान[1] के।
आलस्य तज व्यावच[2] करो, मन मू डो हो नही ध्याइये ध्यान के ॥६॥
नव शिष्य को अहो निशी सदा,क्रिया माही हो तेने करीये निपुण के।
गुरु को मीले नही ओलम्भो, फिर करसे हो जन दोऊना गुण के ॥७॥
साधर्मी मे खिच गई, मोटो पड़ियो हो झगडो माहो माय के।
न्यायवन्त निरपक्ष थई, तेहनो दीजे हो विरोध मिटाय के ॥८॥
इण आठो ही बोल मे, नित कीजे हो उद्यम नर नार के।
महा मुनि नन्दलालजी, तस्य शिष्य ने हो कीनी जोड़ रसाल के ॥९॥

: ७५ :

पौषध के अठारह दोष

(तर्ज—धन ब्राह्मी धन सुन्दरी जाने पाल्यो शील अखण्ड)

जी श्रावक दोष अठारे पोषा तणा तुम मूल थी दूर निवार ॥ टेर ॥

स्नान करे शोभा कारणे, काई घाले पटा माही तेल।
जी श्रावक घाले पटा माही तेल।
चौथे अधर्म सेवे सही, करे स्त्री-सगाते केल ॥ १ ॥
बार बार भोजन करे, काई वस्त्र धुवावे तेम।
जी श्रावक वस्त्र धुवावे तेम।
रात्री तणो भोजन करे, ते तो ज्ञानी गुरु कहे एम ॥ २ ॥
पोषा के पहिले दिने, सेव्या यह षट दूषन जान।
जी श्रावक यह षट दूषन जान।
पोषा लियां पीछे इम करे यह द्वादश दोष वखान ॥ ३ ॥

---

१. रोगी २ सेवा।

खुला[1] तणी व्यावच करे, वलि वलि सवारे केश ।
जी श्रावक वलि वलि सवारे केश ।
मैल उतारे शरीर को, काई निद्रा लेवे विशेष ॥ ४ ॥
खाज खने विन पू जिया ठालो बैठो विकथा[2] करे चार ।
जी श्रावक ठालो बैठो विकथा करे चार ।
पर - दूषण प्रगट करे तेने नवमो दोष विचार ॥ ५ ॥
ससारना सौदा करे, काई निरखे अग उपग ।
जी श्रावक निरखे अग उपग ।
चिंतवे काम संसार का काई बोले मुख अभग ॥ ६ ॥
देव मनुष्य तिर्यञ्च को, भय आणे मन्न मुझार ।
जी श्रावक भय आणे मन्न मुझार ।
लागे दोष अठारमो ते तो टालिये बारम्बार ॥ ७ ॥
आतम-हित के कारणे, काई सतगुरु देवे छे सीख ।
जी श्रावक सतगुरु देवे छे सीख ।
दोष अठारा ही टालसी, तेहने मुक्ति पुरी छे नजीक ॥ ८ ॥
मुनि नन्दलालजी दीपता, तस्य शिष्य कहे हुलसाय ।
जी श्रावक शिष्य कहे हुलसाय ।
जोड़ करी अति दीपती गायो मांडलगढ़ के माय ॥ ९ ॥

: ७६ .

बुड्ढे बाबा की चंचलता

(तर्ज—फाग)

बुड्ढा बाबा को हुओ नही मन वश मे, बुड्ढा बाबा को ॥ टेर ॥
बालक के मिस ख्याल तमाशा, देखन जावे नही मन वश मे ॥ १ ॥
गावे बजावे तिहा तान मिलावे, सुणवाने जावे नही मन वश मे ॥ २ ॥
साठा सिंघोडा गिरी बेर छुहारा, स्वाद करे नही मन वश मे ॥ ३ ॥

---

१ जिसने पौषध अगीकार न किया हो २ स्त्रीकथा, भोजनकथा, देशकथा, राजकथा ।

कलप बनावे ने इतर लगावे, नैना अजन नही मन वश में ॥ ४ ॥
हसी कुतूहल अति मन भावे, होली मे जावे नही मन वश मे ॥ ५ ॥
पाँचो इन्द्रिय का छोड़ विषय को,अब तक नही कियो मन वश में ॥६॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, कहा तक कहूं नही मन वश में ॥७॥

: ७७ :

मानव जन्म की खेती

(तर्ज—पूर्ववत्)

खेती करले रे मानव भव तू पायो ॥ टेर ॥
काया को कूप बन्यो अति भारी, आयुष पूर्ण भरयो वारी ॥ १ ॥
श्वासोश्वास की चड़स वडोरी[1], रात दिवस जुतिया धोरी ॥ २ ॥
ज्ञानी की खेती ने बीज धर्म को,खरड वध्यो खोद आठो कर्म को ॥३॥
ध्यान की गोफ खम्या केरो ककर, काक प्रमाद उडावो झटकर ॥४॥
नेम की नाड़ी ने डोर हर्ष की, ऐसी खेती कर नर भव की ॥ ५ ॥
श्रद्धा को सर ने प्रतीत को जूडो, यह सब देवे सतगुरु रूड़ो ॥ ६ ॥
ऐसी खेती कोई भव जीव करसी,'खूब' कहे आशा सहु फलसी ॥७॥

: ७८ :

चंचल माया

(तर्ज—भजन)

चचल माया मे क्यो चेतन ललचावे ॥ टेर ॥
स्वजन और परजन मित्रादिक जिन से नेह लगावे ।
जैसे मेलो विछुड़ जाय तिम यह सब निज निज स्थान सिधावे ॥१॥
ख्याल रच्यो बाजीगर खलकत दौड दौड़ ने आवे ।
डुगडुगी हुई बन्द वहा फिर थाली फिरे तब सब भग जावे ॥२॥
गाज बीज बादल और वर्षा उमड उमड़ कर आवे ।
हवा चली जब मेघ घटा मिट तुरत गगन निर्मल दर्शावे ॥३॥
नाना विध पक्षी मिल तरुवर निशि भर वास वसावे ।
दिवस भयो तब दशो दिशि उड कहां से आये और किधर सिधावे॥४॥

---

१. मोटा ।

राज रंक को मिला सुपन मे इच्छित मौज उडावे ।
आख खुली तब कहा ठाठ वह चहु दिशि देख देख पछतावे ॥५॥
उगणी से अस्सी सोलह सुद तीज जेष्ठ की आवे ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य दिल्ली जोड़ करी जग मे जश पावे ॥६॥

: ७६ :

जूआ-निषेध

(तर्ज—झडप व चौपाई)

ऊघ निवार सुनजो सब भाई, सट्टाबाज ने धूम मचाई ।
सेठ साहव की नारी वोली, ले लपक्के खिड़की खोली ॥ १ ॥
सेंतीस हजार खोया सट्टा मे, बाईस हजार गया गट्टा मे ।
तेरह हजार तास की पत्ती, बोहतर हजार पर मेले बत्ती ॥ २ ॥
हर्ष हर्ष ने जुआ खेल्या, हाट हवेली गिरवे मेल्या ।
घर को सारो भर्म उघाड्यो, नौ नौ वार दिवालो काढ्यो ॥ ३ ॥
रकम छोरी की ले गया ताकी, ते पण जाय होली मे नाखी ।
सात भगोना सतरह थाल्या, साठ कटोरा छप्पन छाल्या ॥ ४ ॥
गया कठेई आज सम्भाल्या, पूछ्यो तो दी सौ सौ गाल्या ।
रुमाल धोती रेशमी वाघा, नौ की छे मे बेचो पाधा ॥ ५ ॥
गोटादार रेशमी साडी, खोल गाठरी ले गया काडी ।
ढोल्या पलग गोदडा गावा, खोई खवाई ने हो गया बावा ॥ ६ ॥
गिलास गडवो ले गया ताणी, अबे काहि से पीओगा पाणी ।
पैसो एक कभी नही वाट्यो, घर को कीधो आट्यो पाट्यो ॥ ७ ॥
सग जुआ को छोडो आगो, नेम धरम के मारग लागो ।
शिक्षा दी घरवाली सागे, [1]नसरभट्ट के कछू न लागे ॥ ८ ॥
समचे[2] वात कही सव आले, सट्टा वाज ने अव की लागे ।
पक्ष खेचने कमको केम बुरी लगे तो कर दो नेम ॥ ९ ॥
'खूव' मुनि सट्टा को रास्यो, झड़प वन्द चौडे परकाश्यो ।
जुआ खेल कभी मत खेलो, सुख चाहो तो सौगन्ध ले लो ॥१०॥

---

१ निर्लज्ज ।

२ समुच्चय ।

: ८० :

अरिहन्त सिद्ध वन्दना

(तर्ज—पारस प्रभु से अर्ज हमारी है रात दिन)

मेरे तो वही हैं अरिहन्त सिद्धवर।
करता हूं उन्हे वन्दना मैं सिर झुकाय कर ॥ टेर ॥
हैं गुण अनन्त ज्ञानादि सव द्रव्य के ज्ञाता।
सुरेन्द्र और नरेन्द्र भक्ति करते आय कर ॥ १ ॥
विषय कषाय जीत कर कहलाते वीतराग।
खड्गादि शस्त्र ना रखे वे धैर्य लाय कर ॥ २ ॥
महिमा अपार सार जिनकी तिहू लोक में।
फिर पाते हैं शिवधाम सव दु ख को मिटाय कर ॥ ३ ॥
सिद्धो के सुख की ओपमा न कोई वता सके।
नही आते मुडके फिर अचल गति को पाय कर ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी मुझ पै करी दया।
शुद्ध देव की पहिचान दी सागे वताय कर ॥ ५ ॥

: ८१ :

सुगुरु वन्दना

(तर्ज—पूर्ववत्)

जो साधु संयम के गुणो मे दिल रमाते हैं।
ऐसे गुरु के चरण मे हम सर झुकाते हैं ॥ टेर ॥
जो हिसा झूठ चोरी मैथुन परिग्रह।
पाचो ही आस्रव त्याग के त्यागी कहलाते हैं ॥ १ ॥
मान या अपमान लाभ या अलाभ हो।
सुख दु:ख निन्दा स्तुति मे समभाव लाते हैं ॥ २ ॥
गृहस्थ या कोई क्षेत्र से न ममत्व भाव है।
नव कल्प विहारी कथा निर्वद्य सुनाते हैं ॥ ३ ॥
प्रतापना और भूख प्यास शीत उष्ण का।
सहते परिषह आप न चित को चलाते हैं ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी कहते सही सही।
वो ही मुनि भवसिन्धु से तिरते तिराते है ॥ ५ ॥

: ८२ :

हितोपदेश

(तर्ज —पूर्ववत्)

पाई है तू अनमोल ऐसी जिन्दगी ऐ नर।
इस लोक की परवाह नही परलोक से तो डर ॥टेर॥
सन्तो का कहना मान के जुल्मो को छोड दे।
नही तो जिया आगे तुझे पड जायगी खबर ॥ १ ॥
दिन चार का महमान तू विचार तो सही।
तैंने किया शुभ काम क्या पृथ्वी पे आय कर ॥ २ ॥
चौरासी लक्ष योनि मे टकराता तू फिरा।
निकल गया अन्धियारा अब तो हो गई फजर ॥ ३ ॥
मान के वश जाति या पर जाति धर्म में।
तैंने डलाई फूट कसी नर्क पै कमर ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी देते हितोपदेश।
मजूर कर ले फिर तो है सुर लोक की सफर ॥ ५ ॥

: ८३ :

चेतावनी

(तर्ज—लाखो पापी तिर गए सतसग के परताप से)

कहने वाला क्या करे तेरी तुझे मालूम नही।
कुपन्थ मे अब क्यो चले तेरी तुझे मालूम नही ॥ टेर ॥
आया था किस काम पै और काम क्या करने लगा।
खास मतलब क्या हुआ तेरी तुझे मालूम नही ॥ १ ॥
पाया जो धन माल कुछ शुभ काम मे निकला नही।
कुकार्य मे पैसा गया तेरी तुझे मालूम नही ॥ २ ॥
लोहे की गठरी बाध के तूने उठाई शीष पै।
पार होना सिन्धु से तेरी तुझे मालूम नही ॥ ३ ॥
जहर खाकर जीवना प्रतिबोध सोते सिंह को।
यो पाप का फल है बुरा तेरी तुझे मालूम नही ॥ ४ ॥

मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
अब दाव आया मोक्ष का तेरी तुझे मालूम नही॥ ५॥

: ८४ :

कर्म फल

(तर्ज—पूर्ववत्)

कर्म यहां जैसा करे वैसा ही वह फल पायगा।
इस लोक या परलोक मे वैसा ही वह फल पायगा॥ टेर॥

शास्त्र का फरमान है, हठ छोड के कर खोजना।
पूर्ण ज्ञानी कह गए, वह ही कथन मिल जायगा॥ १॥
कोई सुखी कोई दुखी कोई रंक है कोई राजवी।
कोई धनी कोई निर्धनी यह अवश्य ही मिल जायगा॥ २॥
कोई चरिन्द कोई परिन्द कोई छोटे मोटे जीव हैं।
अपने-अपने कर्म से सुख दुख सभी भर जायगा॥ ३॥
कृष्णजी के भ्रात गजसुखमालजी हुए मुनि।
बदला उन्होने भी दिया कैसे तू छूट जायगा॥ ४॥
शालिभद्रजी को मिली रिद्धि सुपात्र दान से।
निज हाथ से कर दान तू भी ऐसा ही फल पायगा॥ ५॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
अच्छा बुरा जो तू करेगा, वह एक दिन मिल जायगा॥ ६॥

: ८५ :

संसार की अस्थिरता

(तर्ज—पूर्ववत्)

कौन यहाँ अमर रहा तू समझ ले अच्छी तरह।
उम्र तेरी जा रही तू समझ ले अच्छी तरह॥ टेर॥
डाबाग्र जल-बिन्दु जैसी उम्र तेरी अल्प है।
दो पच्चास[1] बस हद है तू समझ ले अच्छी तरह॥ १॥

---

१ सौ।

कई सागरोपम[1] लगे सुख भोगते सुरलोक में।
वह भी स्थिति पूरी हुवे तू समझ ले अच्छी तरह ॥ २ ॥
पवन या मन की गति ज्यो वेग नदी का बहे।
स्थिर नही सूर्य शशी तू समझ ले अच्छी तरह ॥ ३ ॥
राज पाया मुल्क का किसी रंक ने ज्यो स्वप्न मे।
वह ठाठ कितनी देर का तू समझ ले अच्छी तरह ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
सफल कर इस वक्त को तू समझ ले अच्छी तरह ॥ ५ ॥

: ८६

शुभ काम क्या किया

(तर्ज—पूर्ववत्)

मानुष का भव पाय के शुभ काम तैंने क्या किया।
अपने या पर के लिए शुभ काम तैंने क्या किया ॥ टेर ॥
नामवर जीमन किया दुनिया मे वाह वाह हो रही।
भूला फिरे मगरूर में शुभ काम तैंने क्या किया ॥ १ ॥
मित्र मिल गोठा करी वेश्या नचाई बाग मे।
माल खागए मश्करे शुभ काम तैंने क्या किया ॥ २ ॥
तन से या धन से बड़ा नही जाति की रक्षा करी।
प्रेम नही सत्सग से शुभ काम तैंने क्या किया ॥ ३ ॥
दिन गवाया खाय के और निश गवाई नीद मे।
यो वक्त तेरा सब गया शुभ काम तैंने क्या किया ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
विद्वान् हो तो समझ ले शुभ काम तैंने क्या किया ॥ ५ ॥

: ८७

सत्संग की महिमा

(तर्ज—पूर्ववत्)

सत्सग से ज्ञानी बने तू चाहे जिससे पूछ ले।
मोक्ष भी हासिल करे तू चाहे जिससे पूछ ले ॥ टेर ॥

---

१ उपमा द्वारा बतलाया जा सकने वाला एक विशाल काल।

कई पापी हो चुके वे तिर गए सत्सग से ।
शक हो तो मेरी है रजा तू चाहे जिससे पूछ ले ॥ १ ॥
जैसे पत्थर नाव के सग नीर मे तिरता रहे ।
परले किनारे वह लगे तू चाहे जिससे पूछ ले ॥ २ ॥
यो हलाहल जहर को भी वैद्य की संगत मिले ।
अमृत बना दे ओषधी तू चाहे जिससे पूछ ले ॥ ३ ॥
सोनी सुवर्ण को उठाकर जलती पावक मे धरे ।
फू क कर निर्मल करे तू चाहे जिससे पूछ ले ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है ।
सुधरे पशु भी सग से तू चाहे जिससे पूछ ले ॥ ५ ॥

: ८८ :

धर्म का असली स्वरूप

(तर्ज —पूर्ववत्)

सच मान सन्तो का कहा यह खास असली धर्म है ।
किन्ही पडितो से पूछ ले यह खास असली धर्म है ॥टेर॥
जीवो की रक्षा करे और झूंठ ना वोले कभी ।
चोरी का त्यागन करे, यह खास असली धर्म है ॥ १ ॥
ब्रह्मचर्य का पालना सग परिग्रह का परिहरे ।
रात्रिभोजन ना करे यह खास असली धर्म है ॥ २ ॥
पाँचो इन्द्री को दमे क्रोधादि चारो[1] जीत ले ।
समभाव शत्रु मित्र पै यह खास असली धर्म है ॥ ३ ॥
दान दे तप जप करे नरमी रखे सबमे सदा ।
शुभ योग[2] में रमता रहे यह खास असली धर्म है ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है ।
गुणपात्र की सेवा करे यह खास असली धर्म है ॥ ५ ॥

---

१ क्रोध, मान, माया, लोभ

२ मन, वचन और काय की अच्छी प्रवृत्ति ।

: ८९ :

श्रावक के गुण

(तर्ज—पूर्ववत्)

समणोपासक के सदा गुण ऐसे होना चाहिए।
अनुरागरक्ता धर्म मे गुण ऐसे होना चाहिए ॥ टेर ॥
आवश्यक करके सुबह गुरुदेव के दर्शन करे।
वाद फिर शास्तर सुने गुण ऐसे होना चाहिए ॥ १ ॥
गुरुदेव आवे द्वार पै तब उठ कर आदर करे।
दान दे निज हाथ से गुण ऐसे होना चाहिए ॥ २ ॥
धर्म से डिगते हुए को सहायता दे स्थिर करे।
उदास रहे ससार से गुण ऐसे होना चाहिए ॥ ३ ॥
हितकारी चारो संघ के समभाव सम्पत विपत मे।
गुणपात्र की स्तुति करे गुण ऐसे होना चाहिए ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
न्यायी हो निष्कपटी हो गुण ऐसे होना चाहिए ॥ ५ ॥

: ९० :

सुशिष्य के लक्षण

(तर्ज—पूर्ववत्)

आज्ञा गुरु की मानता जो वही शिष्य सुशिष्य है।
आज्ञा का पालन ना करे जो वही शिष्य कुशिष्य है ॥ टेर ॥
वन्दना करके सुवह ही पूछ ले गुरुदेव से।
आज्ञा हो वैसा करे जो वही शिष्य सुशिष्य है ॥ १ ॥
आते जाते देख गुरु को हो खडा कर जोड के।
भाव से भक्ति करे जो वही शिष्य सुशिष्य है ॥ २ ॥
लेन मे या देन मे या खान मे या पान मे।
कार्य करे सव पूछ के जो वही शिष्य सुशिष्य है ॥ ३ ॥
जो जो सव दिन रात की क्रिया वही करता रहे।
चारित्र मे माने मजा जो वही शिष्य सुशिष्य है ॥ ४ ॥

मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
निज दाव जीते मोक्ष का जो वही शिष्य सुशिष्य है ॥ ५ ॥

: ६१ :

पतिव्रता के लक्षण

(तर्ज—पूर्ववत्)

पति का हुक्म पाले सदा पतिव्रता वही नार है।
सुख मे सुखी दु:ख मे दु:खी पतिव्रता वही नार है ॥ टेर ॥
कुटुम्ब को सुखदायिनी सुसम्प से मिल जुल रहे।
सुमनी और सुभाषिणी पतिव्रता वही नार है ॥ १ ॥
विपत मे अनुकूल रहे चित अस्थिर हो तो स्थिर करे।
उपदेशदाता धर्म की पतिव्रता वही नार है ॥ २ ॥
सीता सती राजीमती जैसे रही दृढ धर्म में।
पर पुरुष को वंछे नही पतिव्रता वही नार है ॥ ३ ॥
रोष मे पति कुछ कहे नही सामने बोले कभी।
ज्यो त्यो दिल को खुश करे पतिव्रता वही नार है ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
दासी बन रहे चरण की पतिव्रता वही नार है ॥ ५ ॥

: ६२ :

हिंसा-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

नाहक सतावे और को यह तेरे हक मे है बुरा।
मान या मत मान ऐ नर ! तेरे हक में है बुरा ॥ टेर ॥
अपने अपने कर्म से जिस योनि मे पैदा हुए।
तू वेगुनाह मारे उन्हे यह तेरे हक मे है बुरा ॥ १ ॥
सुख के लिये पखी पशु फिरते छुपाते जान को।
रहम के वदले सताना तेरे हक मे है बुरा ॥ २ ॥
पीछे जो वच्चे रहे कौन पालना उनकी करे।
परवशपने वे भी मरें यह तेरे हक में है बुरा ॥ ३ ॥

तेरे जब काटा लगे तब दु ख तुझे मालूम हुवे ।
इस तरह सब मे समझ यह तेरे हक मे है बुरा ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है ।
रहम जब तक दिल मे नही यह तेरे हक मे है बुरा ॥५॥

· ६३ ·

मृषावाद-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

याद रख नर ! झूठ से तारीफ तेरी है नही ।
बदल जाना बोल के तारीफ तेरी हे नही ॥ टेर ॥
झूठ से प्रतीत उठे झूठ से झूठा कहे ।
लोग सब लापर गिने तारीफ तेरी है नही ॥ १ ॥
वसु[1] राजा का सिहासन सत्य से रहता अधर ।
वह झूठ से गया नरक मे तारीफ तेरी है नही ॥ २ ॥
नीच वछे झूठ को और ऊच तो वछे नही ।
झूठ निन्दे सब जगत तारीफ तेरी है नही ॥ ३ ॥
झूठ से साधु को भी आचार्य पद आता नही ।
व्यवहार सूत्र माही लिखा तारीफ तेरी है नही ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है ।
तू झूठ मे माने मजा तारीफ तेरी है नही ॥ ५ ॥

: ६४ :

अस्तेय-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

साफ हुकम है शास्त्र का नर छोड दे तू तस्करी ।
तेरे हक मे ठीक है नर छोड दे तू तस्करी ॥ टेर ॥

---

१ वसु राजा का सिहासन उसके सत्य के प्रभाव से अधर रहता था । एक बार उसके दो सहपाठियो मे—पर्वत और क्षीरकदम्बक मे, यज्ञ मे हवन के लिए प्रयुक्त अज शब्द के अर्थ पर विवाद उठ खडा हुआ । दोनो ने निश्चय किया कि जिसका पक्ष गलत होगा, उसकी जीभ काट ली जायगी । राजा वसु निर्णायक चुना गया । लिहाज मे आकर वसु ने जानबूझ कर झूठा निर्णय दिया । 'अज' शब्द का वहाँ सही अर्थ था—न उगने योग्य पुराना धान्य, मगर वसु ने अर्थ बतला दिया—बकरा । इस झूठ के कारण देवता ने उसे आसन सहित नीचे पटक दिया ।

बदनीत तस्कर की रहे करुणा न जिसके अंग में।
सब जाति मे चोरी करे नर छोड दे तू तस्करी ॥ १ ॥
सुरस्थान या शिवस्थान या यह धर्म का अस्थान है।
मस्जिद मन्दिर ना गिने नर छोड़ दे तू तस्करी ।। २ ॥
सम जगह विषम जगह चोरी करे मारे मरे
समुद्र मे चोरी करे नर छोड़ दे तू तस्करी ॥ ३ ॥
सरकार मे पावे सजा वह कैसे कैसे दुख सहे।
उसको न मिलने दें किसी से छोड़ दे तू तस्करी ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
एक साधु जन इससे बचे नर छोड़ दे तू तस्करी ॥ ६ ॥

. ६५ .

अब्रह्मचर्य-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

इज्जत बनी रहेगी सदा परनारी का सग छोड़दे।
अब भी समझ कोई डर नही परनारी का सग छोडदे ।।टेर।।
राजा कीचक[१] द्रौपदी पै चित्त दियो तब भीम जी।
छत उठा स्तम्भ बीच धरा परनारी का सग छोडदे ॥ १ ॥
कई धन खोकर चुप रहे कई जान से मारे गए।
कई रोग से सड-सड़ मरे परनारी का सग छोड़दे ॥ २ ॥
कई जूतियो से पिट गए कई जाति से खारिज हुए।
कई राज मे पकड़े गए परनारी का सग छोड़दे ॥ ३ ॥
शील मे सीता सती फिर दृढ़ रही राजीमती।
इस तरह तू दृढ रह परनारी का सग छोड़दे ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
शील मे सुख है सदा परनारी का सग छोड़दे ॥ ५ ॥

---

१. अज्ञातवास के समय द्रोपदी विराटनगर मे दासी बनकर रही थी। राजा का साला कीचक दुराचारी था। द्रौपदी के प्रति दुर्भावना उत्पन्न होने पर भीम ने उसे मार डाला था।

: ९६ :

परिग्रह-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

माया को तू अपना कहे अब तक तुझे मालूम नही ।
यह किसी की हुई न होयगी अब तक तुझे मालूम नही ॥ टेर ॥
आया था जब नग्न होकर साथ कुछ लाया नही ।
पीछे पसारा सब हुआ अब तक तुझे मालूम नही ॥ १ ॥
भाई-भाई सासु जमाई पुत्र और माता-पिता ।
धन के लिये शत्रु बनें अब तक तुझे मालूम नही ॥ २ ॥
बाबर अलाउद्दीन महमूद अकबर हुए बादशाह ।
वे भी खजाना छोड़ गए अब तक तुझे मालूम नही ॥ ३ ॥
अकृत्य कार्य तू करे दिन रात पच पच के मरे ।
क्या ठीक कौन मालिक बने अब तक तुझे मालूम नही ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है ।
सन्तोष घर आराम का अब तक तुझे मालूम नही ॥ ५ ॥

: ९७ :

क्रोध-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

क्रोध मत कर ऐ जिया ! सुन हाल छट्ठे पाप का ।
क्रोध की ज्वाला गरम रख खोफ इसकी ताप का ॥टेर॥
क्रोध जिसके छा रहा वहा सत्य का क्या काम है ।
सरलता नही नम्रता नही रहे क्षमा गुण आपका ॥१॥
एक क्रोधी जिसके घर सब कुटुम्ब को क्रोधी करे ।
दिल चाहे जो बकता रहे नही ध्यान रहे मा-बाप का ॥२॥
क्रोधी अपनी जान या परजान को गिनता नही ।
अवगुण निकाले और के यह काम नही सराफ का ॥३॥
प्रीति टूटे क्रोध से गुण नष्ट होवे क्रोध से ।
हित बात पर गुस्सा करे फिर काम क्या चुपचाप का॥४॥

मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
क्रोध से बचते रहो टल जाय दुख संताप का ॥ ५ ॥

: ६८ :

मान-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

मान करना है बुरा जहा मान वहा अपमान है।
लाभ या नुकसान इससे तुझ को नही कुछ भान है ॥टेर॥
लाखो रुपैया हाथ से बरबाद कर दिया मान से।
शुभ काम मे दमडी नही तू काय का इन्सान है ॥ १ ॥
सीता को देना हाथ से रावण को मुश्किल हो गया।
मर मिटा वह भी मरद अभिमान ऐसी तान है ॥ २ ॥
ससार मे या धर्म मे तै बीज बोया फूट का।
दिल किया राजी यहा आखिर नरक स्थान है ॥ ३ ॥
दुनिया मे कई होगये फिर और भी हो जायेगे।
घूमते गजराज जिनके स्थान अब वीरान है ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
छोड दे जो मान उसका तुरत ही सन्मान है ॥ ५ ॥

: ६९ :

कपट-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

कपट करना छोड दे निष्कपट रहना ठीक है।
थोडा सा जीना जगत् मे निष्कपट रहना ठीक है ॥ टेर ॥
सीता सती को कपट से लका मे रावण ले गया।
आखिर नतीजा क्या मिला निष्कपट रहना ठीक है ॥ १ ॥
कपटी पुरुष का जगत् मे विश्वास कोई करता नही।
कपट का घर झूठ है निष्कपट रहना ठीक है ॥ २ ॥
लेने मे या देने मे छल कपटसे उतरता नही।
वह राज मे पावे सजा निष्कपट रहना ठीक है ॥ ३ ॥

माया से नर नारी हुए नारी से नपुंसक बने।
यह कपट का फल है सही निष्कपट रहना ठीक है ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
निष्कपट की इज्जत बढे निष्कपट रहना ठीक है ॥ ५ ॥

. १०० :

लोभ-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

लोभ नवमा पाप है तू लोभ तज सन्तोष कर।
निर्लोभ मे आराम है तू लोभ तज सन्तोष कर ॥ टेर ॥
लोभ से हिंसा करे और झूठ बोले लोभ से।
लोभ से चोरी करे तू लोभ तज सन्तोष कर ॥ १ ॥
लोभ से माता-पिता और पुत्र के अनबन रहे।
हित मीत सगपन ना गिने तू लोभ,तज सन्तोष कर ॥ २ ॥
लोभवश जिनपाल जिनरिख जहाज मे चढ़कर गए।
समुद्र मे जिनरिख मरा तू लोभ तज सन्तोष कर ॥ ३ ॥
लोभ जहा इन्साफ नही तू देख ले अच्छी तरह।
सब पाप की जड लोभ है,तू लोभ तज सन्तोष कर ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
निर्लोभ से मुक्ति मिले तू लोभ तज सन्तोष कर ॥ ५ ॥

: १०१ :

राग-निषेध

(तर्ज—पारस प्रभु से अर्ज हमारी है रात दिन)

मोह-नोद है अनादि इसको टाल टाल टाल।
तेरे कौन है सघाती जरा [1]नाल नाल नाल ॥ टेर ॥
यह मोक्ष पथ शुद्ध है तू चाल चाल चाल।
एक आत्मा तुल्य जान दया पाल पाल पाल ॥ १ ॥

---

१ निहार-देख

रहेगा धरा यह का यहां धन माल माल माल ।
दुर्गत मे तेरी आत्मा तू मत डाल डाल डाल ॥ २ ॥
मत कर गरूर देख तू काले वाल वाल वाल ।
तेरे सिर पर जवरदस्त है वो काल काल काल ॥ ३ ॥
मुनि नन्दलाल गुणवान की आज्ञा पाल पाल पाल ।
ले धर्मरत्न शीघ्र ककर डाल डाल डाल ॥ ४ ॥

: १०२ :

कुसम्प-निषेध

(तर्ज—लाखो पापी तिर गए सतसंग के परताप मे)

सतो का कहना मान के तुम छोड़ दो कुसम्प[1] को ।
प्रेम से मिल जुल रहो तुम छोड दो कुसम्प को ॥ टेर ॥
भाई भाई या वाप वेटा राज तक जो चढ़ गए ।
वर्वाद पैसे का किया तुम छोड़ दो कुसम्प को ॥ १ ॥
राज रावण का गया पंचो की गई पचायती ।
साधु की गई सत्यता तुम छोड़ दो कुसम्प को ॥ २ ॥
कई तो खुद मर गए और कई को मरवा दिए ।
कई गए परदेश मे तुम छोड़ दो कुसम्प को ॥ ३ ॥
कई की इज्जत गई कई धर्म मे हानि करी ।
भरम घर का खो दिया तुम छोड दो कुसम्प को ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है ।
सम्प मे सुख है सदा तुम छोड दो कुसम्प को ॥ ५ ॥

: १०३ :

बुराई का निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

करके बुराई और की क्यो पाप का भागी वने ।
वहकाने वाले वहुत हैं क्यो पाप का भागी वने ॥ टेर ॥
सत्य हो चाहे झूठ हो निर्णय तो करना ठीक है ।
अपनी अपनी तान के क्यो पाप का भागी वने ॥ १ ॥

---

१ फूट ।

कानो सुनी झूठी हुवे आखो से देखी सत्य है।
देखी भी झूठी हो सके क्यो पाप का भागी बने ॥ २ ॥
मुख से बुराई नीकले ज्यो हाट हो चर्मकार की।
यह न्याय निन्दक पै सही क्यो पाप का भागी बने ॥ ३ ॥
नीर को तज खीर पीवे हस का यह धर्म है।
तू भी ले गुण इस तरह क्यो पाप का भागी बने ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
निन्दा बुराई छोड़ दे क्यो पाप का भागी बने ॥ ५ ॥

: १०४ .

ईर्ष्या-निषेध

(तर्ज—पूर्ववत्)

देख कर पर सम्पत्ति क्यो ईर्षा करता है तू।
जैसा करे वैसा भरे क्यो ईर्षा करता है तू ॥ टेर ॥
लक्ष्मी भरपूर फिर व्योपार मे दुगने हुए।
अपने अपने पुन्य है क्यो ईर्षा करता है तू ॥ १ ॥
पुत्र पौत्रादि मनोहर वहुत ही परिवार है।
मौज करे रगमहल मे क्यो ईर्षा करता है तू ॥ २ ॥
जात या परजात या पचायत या सरकार मे।
पूछ जिनकी हो रही क्यो ईर्षा करता है तू ॥ ३ ॥
दयावन्त दानेश्वरी उपदेश दाता धर्म का।
महिमा सुनि गुणवान की क्यो ईर्षा करता है तू ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलालजी का यही नित उपदेश है।
द्वेष बुद्धि छोड दे क्यो ईर्षा करता है तू ॥ ५ ॥

: १०५ :

सत्योपदेश

(तर्ज—पारस प्रभु से अर्ज हमारी है रात दिन)

ये स्वार्थी स्वजन इनमे राचिए नही।
तू मान मान मान मान मान तो सही ॥ टेर ॥

तू क्यो करे अभिमान बहुत वक्त है नही ।
लेना है यहा विश्राम आखिर पथ तो वही ॥ १ ॥
तेरे दिल मे कुछ और मुह से कहत है कई ।
अधर्म मे तमाम उमर बीत यो गई ॥ २ ॥
दिल चाहे सो कर मित्र यहा तो पूछ है नही ।
कर्मो का तो इन्साफ तेरा होयगा वही ॥ ३ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल जिनकी कहन है यही ।
कर लीजिये भलाई इक धर्म मे रही ॥ ४ ॥

: १०६ :

उपदेश

(तर्ज—पूर्ववत्)

जिया मान ले मुनिराज सच्ची कहत हैं अरे ।
ले मुक्ति को सामान अब ढील क्यो करे ॥ टेर ॥
ये पुत्र मात तात भ्रात जिनसे नेह करे ।
न तुझ को तारणहार क्यो इनके जाल मे परे ॥ १ ॥
है थोडी सी जिन्दगानी तू न पाप से डरे ।
बिन पाल्या धर्म नियम कैसे आत्मा तरे ॥ २ ॥
हो जाऊ मैं धनवान ऐसी कल्पना करे ।
न भाग्य बिना पावे नाहक डोलतो फिरे ॥ ३ ॥
महामुनि नन्दलालजी हैं सन्त मे [1]सरे ।
ससार सागर घोर आप तारे और तरे ॥ ४ ॥

: १०७ :

दान शील तप भाव

(तर्ज—छोटी कड़ी)

जो चाहो इस भव सागर से तिरना ।
तुम दान शील तप भाव आराधन करना ॥ टेर ॥
एक सगम नामा ग्वाला पूर्वभव माई ।
ले खीर थाल मे भली भावना भाई ॥

---

१. श्रेष्ठ ।

एक मुनि पधारे उसी वक्त के माई।
दिया दान हाथ से महान खुशाली छाई॥
हुवे शालिभद्र यह कथन दान का वरना॥ १॥
अभया रानी सुदर्शन सेठ के तांई।
हो विषय अध महलो मे लिया बुलवाई॥
नही छोडा शील तव रानी कूक मचाई।
विन न्याय किया नृप शूली दिया चढाई॥
सुर करी सहाय यह कथन शील का वरना॥ २॥
एक धन्ना मुनि हुवे छट छट तप के धारी।
कर आमिल पारणे स्वाद दिया सब टारी॥
श्रेणिक नृप आगे वीर कीर्ति विस्तारी।
गये स्वार्थसिद्ध नव मास सजम शुघ पारी॥
महाविदेह मे जासी मोक्ष मेट जर मरना॥ ३॥
हुवे ऋषभदेवजी पुत्र भरत महाराया।
श्रृंगार सर्व सज काच महल मे आया॥
शुद्ध अनित्य भावना भाय केवल पद पाया।
मुनिराज होय दश सहस्र भूप समझाया॥
फिर गये मोक्ष यह कथन भाव का वरना॥ ४॥
यह दानादिक गुण चार जिन्हो मे पाता।
उनके सबही दुख बादल ज्यो विरलाता॥
किया दिल्ली शहर चौमास रही सुख साता।
बासठ बत्तीस मे जोड लावनी गाता॥
कहे 'खूब' मुनि मुझ ज्ञानी गुरु का शरना॥ ५॥

. १०८

पुण्य की महिमा

(तर्ज—लावनी षट्पदी)

पुण्य की महिमा सव गावे पुण्य से वाछित फल पावे॥ टेर॥

पुण्य से मनुज जन्म पावे, पुण्य से उत्तम कुल पावे।
पुण्य से तन निरोग पावे, पुण्य से दीर्घ आयु पावे॥

दोहा— पुण्य उदय सद्गुरु मिले, मिले सूत्र के बैन।
जीवादिक नव तत्त्व पिछाने, खुले जिगर के नैन ॥
पुण्य से धर्म हाथ आवे ॥ १ ॥

पुण्य से नरेन्द्र पद पावे, पुण्य से सुरेन्द्र पद पावे।
पुण्य से अति आदर पावे, पुण्य से विन श्रम धन पावे ॥
दोहा— विपिन पहाड़ जल अगन मे, मिले पुण्य से साज[1]।
दशो दिशी जन-जन के मुख से, जस की सुने अवाज ॥
पुण्य से सरस शब्द पावे ॥ २ ॥

पुण्य से सुर आते दौड़ी, हुकम मे रहते कर जोडी।
पुण्य से टले विघन कोडी, पुण्य देते वन्धन तोड़ी ॥
दोहा— मेरे गुरु नन्दलालजी, कहते साफ सुनाय।
रामपुरा मे जोड़ वनाई, सव के पुण्य सहाय ॥
सजन सुन के यकीन लावे ॥ ३ ॥

: १०६ :

चतुर्गति वर्णन

(तर्ज—पूर्ववत्)

पाय नरभव की जिन्दगानी, समझ अव भज अरिहन्त प्रानी ॥ टेर ॥

विश्व मे तू फिरता आया, जाग अव सोवे मत भाया।
नर्क विच तने दु.ख पाया, गोता वैतरणी मे खाया ॥
दोहा— वृक्ष सामली ऊपरे, तीक्षण कट वनाय।
पकड़ देव यम डाल दिया, सकल विधाणी काय ॥
तुरत ही खेंच लिया तानी ॥ १ ॥

यम पशुओं का रूप करके, पक्षी विच्छू अहि अजगर के।
खाया तुझ चटका दे करके, सहा दु ख जव पल सागर के ॥
दोहा— नर्कपाल तुझ नर्क में मथ्यो जमी पर डाल।
दयारहित मुद्गर से तेरा, किया हाल वेहाल ॥
कौन गिनते राजा रानी ॥ २ ॥

---

१ मदद।

करी जीवघात झूठ बोला, किया [1]कुड मापा कुड तोला ।
गमन परनार सग डोला, पाप अपना पर-शिर ढोला ॥
दोहा— मर्म उघाड्या पार का, कूड साख चित लाय ।
सत्पुरुषो की करी बुराया, मगन होय मन माय ॥
कहे यमराज न्याय छानी ॥ ३ ॥

मास का आहार किया चुपचाप, स्वाद कर-करके पीया शराप ।
आज महेमान पधारे आप, आडो नही आवे माय और बाप ॥
दोहा— जैसे कर्म यहा पर करे, वैसा सब जितलाय ।
लोहादिक कर गर्म गर्म यम, तुझको दिया पिलाय ।
शास्त्र मे फरमा गये ज्ञानी ॥ ४ ॥

योनि तिर्यञ्च की तू पाया, पशु और पक्षी कहलाया ।
विषम सम जगह जन्म पाया, पिया जल मिला वही खाया ॥
दोहा— झाड खाड[2] बिल पहाड मे, खोखल माला[3] माय ।
शीत उष्ण का सहा महा दुख, कहा तक दू दर्शाय ॥
ऊपर से बरस रहा पानी ॥ ५ ॥

कभी तू अगनी मे जलग्या, कभी तू पानी मे गलग्या ।
कभी तू मिट्टी मे गलग्या, कभी तू घाणी मे पिलग्या ॥
दोहा— पशु हुआ बधन पडा, पक्षी पिंजरा माय ।
कहाँ कुटुम्बी कहा आप, यह हुआ कर्म का न्याय ॥
वक्त पर कहाँ चुगा पानी ॥ ६ ॥

किसी ने तेरा सीग तोडा, किसी ने कान नाक फोडा ।
किसी ने तेरा पूछ मोडा, किसी ने हल रथ मे जोडा ॥
दोहा— चाम रोम नख कारणे, दुष्ट दिया तुझ मार ।
सेक भूज तल खाय गये, ना कोई सुनी पुकार ॥
जरा तो सोच अभिमानी ॥ ७ ॥

कभी हुआ मनुष्य कुजात, हीन और निर्धन दीन अनाथ ।
दुख मे गुजरा तेरा दिन रात, कौन पूछे सुख दुख की बात ॥

---

१ कूट-झूठा २. गड्हा ३. घौंसला ।

दोहा— रहेवा काजे घर नही, तन ढांकन पट नाय।
मालिक की हल्की सुन, मौन रखी मन माय॥
कहो यह है किन से छानी॥ ८॥

गर्भ का दुख तैंने पाया, अधोसिर रहा तू लटकाया।
सवा नौ मास स्थान ठाया, मूत्र मल सें तन लिपटाया॥
दोहा— जनम समय तू रुक गया, माता किया विलाप।
काट काट तुझ बाहर निकाला, पूर्व जन्म के पाप॥
बात यह तैंने भी जानी॥ ९॥

कभी पाया सुर अवतारा, हुआ तू नृत्य करनहारा।
कदर्पी किंकर पद धारा, सूत्र मे देख हाल सारा॥
दोहा— किल्विपी हुआ देवता, नही ऊंच अस्थान।
उत्तम सुर तुझको नही भीटा, कहां तक करू बयान॥
छोड दे सब खीचातानी॥ १०॥

कथन यह शास्तर से वरना, चतुर सुन हिये मनन करना।
चाहो भव सागर से तिरना, दया और सत्य का लो शरना॥
दोहा— मेरे गुरु नन्दलालजी, शिक्षा दी मुझ सार।
चतुरमास अलवर कर आये, जयपुर ठाने चार॥
बनो तुम मित्र[1] अभयदानी॥ ११॥

: ११० :

सम्पत्ति का गर्व

(तर्ज—बहर तवील)

सम्पत्ति का साहिब तू बनकर क्यो मगरूरी लाता है।
तेरे सरीखे हुवे बहुत उनका भी पता नही पाता है॥ टेर॥
सम्भूम नामा चक्रवर्ति वो क्या उनके रिद्धी थोडी थी।
चौरासी लाख हाथी रथ घोडा पैंदल छिनवे कोड़ी थी॥

---

१ छुआ।

चौसठ सहस्र अतेवर जिनके एक सरीखी जोडी थी ।
नौ निधान[1] चौदह[2] रतन तो पिण तृष्णा नही थोडी थी ॥
मरके गया नरक मे सीधा शास्तर मे दर्शाता है ॥ १ ॥
कस नृप कैसा था मानी जोर जुल्म जिन कीना था ।
उग्रसेन निज पिता जिन्हो को पकड पीजरे दीना था ॥
लोक लाज तज के मथुरा का राज जिन्होने कीना था ।
तीन खड के नाथ हरिजी कहोजी क्या दड दीना था ॥
जैनी और वैष्णव सब जानें क्यो नही समझ मे लाता है ॥ २ ॥
वड़े वडे होगये भूपति छत्र चवर शिर होते थे ।
वो कचन के महल आप फूलो की सेज पर सोते थे ॥
रत्न जडित जल की झारी से दिन ऊगा मु ह धोते थे ।
आठ वीस दो दो[3] विध के तन मन से नाटक जोते थे ॥
वे नर मर मिट्टी मे मिल गये तेरा कौन सहाता है ॥ ३ ॥
मान मान अभिमानी प्राणी क्यो इतनी कहलाता है ।
घडी घडी अनमोल वक्त तू नाहक मुफ्त गवाता है ॥
नेम धर्म सुकृत करनी का क्यो नही लाभ कमाता है ।
देख हवा इस कलु काल की तुझे फिक्र नही आता है ॥
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य जोड आगरे गाता है ॥ ४ ॥

: १११ :

काल महाबलवान्

(तर्ज—पूर्ववत्)

काल महा वलवान जगत मे इस से किन का नाता है ।
ना मालूम होशियार रहो किस रोज अचानक आता है ॥ टेर ॥
जो वकील वैरिष्टर थे वो ऐसी अक्ल घुमाते थे ।
बात मे बात निकाल दफा कानून किताब बताते थे ॥

---

१ निधियाँ-नैसर्पनिधि, पडूकनिधि, पिंगलनिधि, सर्वरत्ननिधि, महापद्मनिधि, कालनिधि, महाकालनिधि, शखनिधि २ चौदहरत्न-चक्ररत्न, छत्ररत्न, चर्मरत्न, दण्ड-रत्न, असिरत्न, मणिरत्न, काकिणीरत्न, सेनापतिरत्न, गृहपतिरत्न, वढईरत्न, पुरोहित-रत्न, स्त्रीरत्न, अश्वरत्न, हस्तिरत्न ३ वत्तीस ।

सच्चे को झूठा नित करके झूठे को वरी कराते थे।
करते सवालजवावजहा पर हाकिम को नाच नचाते थे॥
उनकी एक चली नही नर क्यो औरो पर अकड़ाता है॥ १॥
अरवपति कई खरवपति कई क्रोडपति लखपतियन को।
देख देख सम्पत निज घर की खुश करते अपने मन को॥
सुवर्ण की सेजा पर सोते खाते हवा जाकर वन को।
अच्छी तरह हिफाजत करते कभी न दुःख देते तन को॥
वे भी गये ना रहे यहां पर तू किस पर घुमराता[1] है॥ २॥
अर्जुन भीम रावण से राजा वडे मर्द कहलाते थे।
बैठ तख्त पर करते न्याय एक छत्तर राज धराते थे॥
नही मरेंगे रहेगे यहां पर शीशे की नीव लगाते थे।
नही था पार जिनके वल का पैरो से जमीन धुजाते[2] थे॥
वो भी होगये निर्वल इससे तू किस पर जोर जमाता है॥ ३॥
वैद्य हकीम वैद्यक के वेत्ता जो धन्वन्तरि खुद कहलाते थे।
नब्ज देख फिर सोच समझ कर वैसी दवा खिलाते थे॥
उनको भी काल सम्भाल लिया ओरो का रोग मिटाते थे।
शुभ काम बना फिर याद करोगे ऋषि मुनि फरमाते थे॥
महा मुनि नन्दलाल तणां शिष्य ज्ञान का विगुल सुनाता है॥४॥

· ११२ ·

पैसे से अनर्थ

(तर्ज—पूर्ववत्)

पैसे की परवा सव रखते ये जग मोहन-गारा है।
इसको त्याग वैराग्य लहे वो धन जग मे अणगारा है॥ टेर॥
क्या बालक क्या बुड्ढा देखो सबका मन ललचाता है।
है अनरथ का मूल साफ वीतराग देव फरमाता है॥
पुत्र पिता और पति नार के वैर विरोध कराता है।
कहो जी किन के साथ गया हम सुनते कौन सुनाता है॥
तू कहता धन मेरा मेरा इसका क्या इतवारा है॥ १॥

---

१ इतराता है २ कपाते।

क्या कहू इस धन के कारण काज अकारज करते हैं।
निर्भय होकर आप फिरे परभव से जरा नही डरते है।
गिन गिन कर बहु माया जोडे जोड जमी मे धरते है।
भूख प्यास सी उष्ण सही मूरख पच पच के मरते हैं॥
तृष्णारूपी जाल जगत मे इनका खूब पसारा है॥ २॥
महाशतकजी श्रावक जिनकी नाम रेवती नारी है।
होके लोभ मे अध एक दिन बारा शोका[1] मारी है॥
निज पति को फिर छलने आई सूत्र मे बात [2]जहारी है।
ऐसा किया अन्याय कहो यह धन किनको सुखकारी है॥
मर कर गई नरक मे सीधी जिनका नही निस्तारा है॥ ३॥
गजसुखमाल एवता[3] मुनिवर क्या वैराग्य रमाया है।
बचपन मे सजम लेकर उस भव मे मोक्ष सिधाया है॥
जम्बू कु अरजी महा वैरागी निज आतम समझाया है।
त्याग दिया धन माल आप उत्तम सजम पद पाया है॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि तो कहते धन्न असारा है॥ ४॥

: ११३ :

फोकट श्रावक

(तर्ज—पूर्ववत्)

लगन पाप मे लगी रहे नित सुकृत को विसराते है।
कैसे तिरना होय कहो एक धरमी नाम धराते हैं॥ टेर॥
पूरब पुण्य से सम्पति पाके गर्व वीच गलताने हैं।
इस पृथ्वी पर एक मैं ही हू ऐसी दिल मे जाने है॥
कहा से आया किधर जायगा तुझको कौन पिछाने है।
ले ले लाभ नर भव का अव क्यो अपनी अपनी ताने है॥
बुरी लगे चाहे भली लगे अजी हम तो साफ सुनाते है॥ १॥
तुरत देख धनवन्त उसे तो पूरण प्रीत लगाते है।
नित्य नये पकवान बनाकर न्यौत न्यौत जिमाते हैं॥

---

१ सोतो को २ जाहिर ३ एवताकुमार भगवान् महावीरकालीन एक बाल साधु।

जो निर्धन्न गरीव उसे तो कोई नही वतलाते[1] हैं ।
पूछ-ताछ तो दूर रही पण उलटा उसे सताते हैं ।।
गुणवानो के औगुण वोले निन्दा में दिन जाते हैं ।। २ ।।
कमती वढती तोले मापे अपनी पैंठ जमाते हैं ।
होके लोभ मे अध कई घडियो की घडी उडाते है ।।
ले के घूस गवाह वन जाते झूठी सौगन्द खाते हैं ।
कहा रही परतीत कहो अव लुच्चे धूम मचाते हैं ।।
इधर उधर करके लपराई वैर विरोध कराते हैं ।। ३ ।।
हिन्दू हो या मुसलमान हो जो यह कर्म कमाते हैं ।
दिल चाहे सो करे यहा वो आगे क्या फल पाते हैं ।।
इन कर्मों से बचे वही नर मालिक से मिल जाते हैं ।
मेरे गुरु नन्दलाल मुनि तो साफ साफ फरमाते हैं ।।
माधोपुर मे आये विचरते जोड़ करी यो गाते हैं ।। ४ ।।

: ११४ :

काया की रेल

(तर्ज—गुरु निर्ग्रन्थ नही जोयो जीव तैंने २)

काया की रेल हमारी रे, लोको, काया की रेल हमारी रे ।। टेर ।।

सीधी सडक शुद्ध संजम पाले, जंकशन मोक्ष मुझारी रे ।
धोखा मेट दिया दुर्गति का, उपट राह हम टारी रे ।। १ ।।
तन इन्जन मन पेच दवाते, जाते इच्छा अनुसारी रे ।
सत्य उपदेश की सीटी देते, फिरते मुल्क मुझारी रे ।। २ ।।
तप अगनी और कर्म कोयला, डाल के करते छारी रे ।
नाडी तार का लग रया खटका, प्रतिवन्ध सिंगल डारी रे ।। ३ ।।
समदृष्टि दुर्वीन लगाकर करते करुणा तुम्हारी रे ।
दानादिक अच्छे डिब्बे की, करते कोईयक सवारी रे ।। ४ ।।
नेम का टिकट दिया मुझ सतगुरु, वाबूजी पर उपकारी रे ।
स्टेशन सुरलोक ठहर फिर, लेगे अचलपुर धारी रे ।। ५ ।।

---

१ वात करते हैं ।

कहे मुनि नन्दलाल तणा शिष्य, सुन लेना नरनारी रे।
उगणी से तेहत्तर अलवर माही, जोड कीनी तइयारी रे ॥ ६ ॥

११५ :

धर्म की नाव

(तर्ज —द्रोण)

तुम सुनो मोक्ष का पथ सत फरमावे।
महाराज, जीव की जतना करनाजी ॥
ये हीज धर्म की नाव हुवे भव सागर तिरनाजी ॥ टेर ॥
सब जीव जगत मे अपना जीना चाहे।
महाराज, किसी को नही सतानाजी ॥
हुवे जीवो का उपकार वहा कुछ राह वतानाजो ॥
यह झूठ पाप का मूल कभी मत बोलो।
महाराज झूठ जिसने नही छोड़ाजी ॥
ताको होत बहुत सताप पड़े परभव मे फोडाजी।
इम जान साच नित खूब ताल कर वालो।
महाराज, बाल फिर नही वदलनाजो ॥ १ ॥
यह चोरी करना तीजा पाप सुन प्यारे।
महाराज, किसी की वस्तु उठानाजी ॥
अपने हो कर्म से आप क्यो परतोत घटानाजी ॥
ये चोर चोर यो सब ही दुनिया बाले।
महाराज, हुवे जिनसे मडवाडाजो।
गिनो परधन धूल समान रखो अपना दिल गाढाजी॥
आज्ञा से जो कोई चीज देवे तो लेना,
महाराज, ऐसी वृत्ति दिल धरनाजी ॥ २ ॥
जो काम अध पर नार तक मतिहीना।
महाराज, कहो कैसे रहे आबीजी ॥
रावण पदमोत्तर देख जिन्हो को हुई खराबीजो ,
यह रोग शोग का भवन झूठ मत जानो ॥

महाराज, हुवे तन धन की हानीजी ।
इम जान तजो कुकर्म यह शास्तर की वानीजी ॥
तुम शील शिरोमणि जग उत्तम व्रतधारो ।
महाराज, विपति सव दुख का हरनाजी ॥ . ॥
यह पाप पाचमा अति लोभ का करना ।
महाराज, लालसा लग रही धन की जी ॥
अव धारधार सन्तोष ममत तुम मेटो मनकी जी ।
यह पाचो अवगुण तजा पाच गुणधारो ॥
महाराज, जीव जिन से सुख पावेजी ।
हुवे कर्मो से निर्लेप सीधा मुक्ति पद पावेजी ॥
श्री नन्दलालजी मुनि तणां शिष्य गावे ।
महाराज, मुझे सतगुरु का शरणाजी ॥ ४ ॥

: ११६ :

हितोपदेश

(तर्ज—द्रोण)

दुनिया के वीच मनुष्य जन्म मे आया ।
महाराज किया कुछ पर उपकारा जी ॥
फिर प्रभु नाम भज लिया तो उसका सफल जमाराजी ॥ टेर ॥
ये मात तात वन्धव सुत दारा भगनी ।
महाराज, तू जाने यह है सव मेरा जी ॥
पण मान चाहे मत मान है आखिर ना कोई तेरा जी ।
ज्यो सराय मे ले आय मुसाफिर वासा ।
महाराज, भोर भये सव उठ जावे जी ॥
या अपने दिल मे समझ नाहक यो ही कर्म कमावे जी ॥
जो परभव मे निज आतम का सुख चाहे ।
महाराज, लेवे पाप से टारा जी ॥ १ ॥
धन के कारण दिन रात पचे नर भोला ।
महाराज, क्षुधादि कष्ट उठावेजी ॥
करे महा आरम्भ परचूर[1] नही मन में पछतावे जी ।
हीरा पन्ना मणि माणक लाल पिरोजा ॥

---

१. विपुल ।

महाराज, वहुत नीलम की डरिया जी।
सोना चादी कुण गिने खजाना पूरण भरिया जी॥
विद्वान पुरुष वह दिल मे यो समझेगा।
महाराज नही यह धन्न हमारा जी॥ २ ॥

इस तन को अपना अपना कर माने।
महाराज, कभी दु.ख ना उपजावेजी॥
जीमे मेवा मिष्टान खूब पोशाख बनावे जी।
कर लाख यतन पण यह तो नही रहने की॥
महाराज मनोहर काया तेरी जी।
मर गये बाद हो जायगा आखिर खाक की ढेरी जी।
जिसने अखूट सुकृत का लाभ कमाया॥
महाराज, वपु को जान असारा जी॥ ३॥

इस पृथ्वी पर हो गये राजनपति राजा।
महाराज, तेज था जिनका भारी जी॥
पण धर्म विना वो चले गये यो ही हाथ पसारी जी।
यो समझ एक दिन तू भी चला जावेगा।
महाराज, होके निर्भय नही सोना जी॥
जो वक्त लाभ की बीत गई तो फिर क्या होना जी॥
जो दया दान जप तप मे खप कर लेवे।
महाराज जिससे सुख मिले अपारा जी॥ ४॥

मुनिराज गुणो की खान प्रकट फरमावे।
महाराज, पुण्य का फल है मीठा जी॥
फिर गई वक्त नही आवे धोव कर्मो का कीटा जी।
अब एक बात और कहू सजन सुन लेना।
महाराज, कुटिल का सग न करना जी॥
सौ बातो की एक बात लेवो सत गुरु का शरणा जा।
श्री नन्दलालजी मुनि तणा शिष्य गावे।
महाराज तुरत होगा निस्तारा जी॥ ५॥

: ११७ :

दीक्षार्थी को माता का कहना

(तर्ज—पनजी मुंडे बोल)

व्हाला मारी मान, मान मान मुगति का लोभी, काँई हट लागो रे ।।टेर।।
सजम जाया[1] अति दोहिलो[2] सूर धीर कोई लेसी रे।
कोमल तन बावीस परीसा, तू किम सहसी रे ।। १ ।।
सन्मुख जोय रही तुझ अबला, इनको छेह न दीजे रे।
तृप्त थई फिर विषय भोग तज संजम लीजे रे ।। २ ।।
संच्यो धन बडेरा घर मे ले ले हाथ को लावो रे।
उमर तक नही निठे[3] रीतिसर खर्चो खावो रे ।। ३ ।।
कुल वृद्धि कर मैं भी जितने, हो जावा परलोके रे।
जोबन वय ढल गया बाद, थाने कुण रोके रे ।। ४ ।।
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य शहर आगरे गावे रे।
चढ्यो रंग वैराग्य कहो फिर किम ललचावे रे ।। ५ ।।

: ११८ :

माता का दीक्षार्थी को संजम की कठिनता दिखाना

(तर्ज —राजा भरथरी रे राजा भरथरी)

व्हाला लालजी रे, व्हाला लालजी ।
लालजी साधपणो अति दोहिलो, नही सोहिलो, पहिले जोहिलो[4] ।
थाने कह्व समझाय, मानो मानो मारी वाय[5], हठ कीजिये नाय ।। १ ।।
लालजी यहाँ पलग पर पौढनो, सीरक[6] ओढनो, दिन्न चोढनो ।
ऊहाँ जगल माय, जो भी तरुवर छाय, दुःख सह्यो नही जाय ।। २ ।।
लालजी घर घर भिक्षा जावणो, नही शरमावणो, मागी खावणो ।
लेणो शुद्ध आहार, दे या नही दे दातार, दूमण होणो नही लगार ।। ३ ।।
लालजी सजम भार उठावणो, पार लगावणो, गम्म खावणो ।
निर्वद्य बोलणो वैन, चालणो गुरुजी कैन, नही लोपणी ऐन ।। ४ ।।
लालजी वैराग्य रग छायो सही, माता कह रही, ललच्यो नही ।
मेरे गुरु नन्दलाल, षट काया प्रतिपाल, दीनो ज्ञान रसाल ।। ५ ।।

---

१. जात-पुत्र २. दुर्लभ-कठिन ३ समाप्त हो ४. देख लो ५ वात ६. रजाई ।

: ११८ :

दीक्षार्थी को भगवान् के समर्पण करना

प्यारो लाल हमारो, भवसागर तारो, तारो दीन दयाल ॥ टेर ॥

कोमल काया सरल स्वभावी, बड भागी गुण खान ।
ऊमर[1]-पुष्प ज्यो दुर्लभ-दर्शन, रतनो का करंड समान रे ॥ १ ॥
आज सुनी वाणी प्रभु थारी, छायो रंग वैराग ।
विषय भोग रोग सम जाणी, ललच्यो नही महाभाग रे ॥ २ ॥
मात पिता ने अति सुख देसी, ये हतो पूर्ण विचार ।
जायो तो आज हुओ निर्मोही, शिव मग लीनो धार रे ॥ ३ ॥
यह मुझ व्हालो आप भरोसे, छोडे जग-जंजाल ।
शीत उष्ण वर्षा ऋतु माही, कर जो सार सम्भाल रे ॥ ४ ॥
मेरे गुरु नन्दलाल मुनीश्वर, तारण तिरन जहाज ।
सुगुरु चरण की शरण लिया से, सरसी वाछित काज रे ॥ ५ ॥
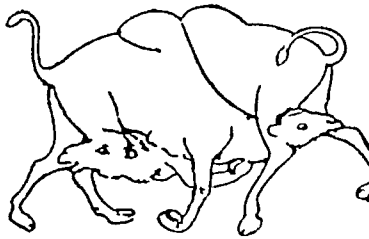
१ उदुबर—गूलर । गूलर के फूल दिखाई नही देते ।

३

चरितावली

: १ :

सीताजी से मिलने हनुमान का आगमन

(तर्ज—भजन)

सीताजी से मिलन पवनसुत आयो ॥ टेर ॥

सीताजी की सुध भई तब राम अति सुख पायो।
सब राजेश्वर कर मंसूबो हनुमंत कुंवर ने लंक पठायो ॥१॥
देवकुंवर ज्यो सन्मुख ऊभो घूंघट मे दरसायो।
सीता पूछे कुण तूं वीरा ! तब हनुमत सब भेद सुनायो ॥२॥
पिया हाथ की देख मूंदरी नैना नीर भरायो।
राम मिलन की है अब त्यारी हनुमंत कुंवर यो गाढ बंधायो ॥३॥
सीता को दुःख देख हनुमंत बन्दर रूप बनायो।
लंकापति को बाग विनास्यो[१] देख रही सीता बहु समझायो ॥४॥
रावण राणो रोष भराणो बन्दर पकड मंगायो।
नमकहरामी लाज न आई रावण करडो बोल सुनायो ॥५॥
रोष चढ्यो हनुमत तुरत ही बन्धन तोड बगायो।
लंकपति को मुकुट पाडने उछल गगन मे वेग सिधायो ॥ ६ ॥
शोध करी हनुमत आयो तब सब को मन हुलसायो।
कहे मुनि नन्दलाल तणां शिष्य जोड करी जग मे जश पायो ॥७॥

: २ :

रावण को मंदोदरी की शिक्षा

(तर्ज—सीता है सतवती नार सदा गुण गावना)

राजा रावण से इम बोले नार मन्दोदरी रे।
सुन सुन लंकापति सिरदार अनीति क्यो करी रे ॥ टेर ॥

थारे इन्द्राण्या सम राण्यां कई हजार छे रे, तो पण जरा सबर नही आई।

---

१. विदारण किया, नष्ट किया।

छल कर लायो नार पराई, जग मे वाज्यो चोर अन्याई।
ऐसी कठिन सुनाई पतनी पति से ना डरी रे ॥१॥
मैं तो खुद जाकर समझाई नाटक माडने रे, सीता रही शील मे राची।
वह मर मिटे हटे नही पाछी, उसको अच्छी तरह ली जाँची।
कहूँ छू साँची जिनकी चीज है उनको दो परी रे ॥२॥
[1]स्याणी सुन्दर सुन परनार लाय किम आपसूं[2] रे।
उसका चित खुश करके, निज नारी कर थापसूं रे ॥टेर॥
माने मीख त्रिया की जो नर मूढ अजान छे रे, सीता पाछी उसे दिलावे।
तो कू जरा शरम नही आवे, मोकूं ऐसी राह बतावे।
सबला आगे कोई न आवे, पुण्य प्रताप सूं रे ॥३॥
[3]चंचल हनुमान श्रीराम लक्ष्मण महावली रे, दल ले-ले कर जब वो चढसी।
नभचर उछल कर पडसी, कहो तब कौन सामने अड़सी।
सुवरण लका मिलसी नास, आज कहूं छूं खरी रे ॥४॥
[4]फिरता डोले जगलमांय युगल वनवासिया रे, बिचमे सागर भरयो अपारे।
यहां तक कब वो आवे विचारे, शूरे सुत और भ्रात हमारे।
पडसी उनके लारे, वारे वेग सितापसूं रे ॥५॥
[5]थारे सगा विभीषण कुम्भकरण दोई भ्रात छे रे, प्यारा इन्द्र मेघ सुत शूर।
यह सब रहेगे वदल कर दूर, दिल मे सोचो नाथ जरूर।
मेलो दूर गरूर, नही तो मरजी रावरी रे ॥६॥
हित की शिक्षा देवे कोई सत्य कर मानिए रे, सित्तर ऊपर नव के साल।
मेरे गुरु मुनि नन्दलाल, मोकूं दीनो हुकम दयाल।
कीनो रामपुरे चौमास, जोड़ जुगती करी रे ॥७॥

: ३ :

रावण को समझाना

(तर्ज—ख्याल)

कहे यो रावण को समझाय, विभीषण कुम्भकरण दोई भाय ॥ टेर ॥
राजन पति राजा वाजो थाने ई वाता नही छाजे।
परनारी परधन हरता वह चोर अन्यायी वाजे ॥ १ ॥

---

१ रावण का कथन २ दूंगा ३ मन्दोदरी ४. रावण ५. मन्दोदरी।

राम लक्ष्मण दशरथ-सुत को होसी यहां पर आवो।
लका को कर देगा नाश जद पडसी तुम पछतावो ॥ २ ॥
सीता पीछी सौंप दो स थे मानो बात हमारी।
कठिन शब्द मैं आज कहाँ छाँ लीजो नाथ ! विचारी ॥ ३ ॥
मैं हूँ अर्द्ध भरत को स्वामी कौन अडे मुझ सामे।
तुम कायर सब दूर रहो मेरा पुण्य आवसी कामे ॥ ४ ॥
महा हठीले हठ नही छोडी गति जैसी मति आवे।
करी जोड अजमेर मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे ॥ ५ ॥

. ४

सीता की रावण को फटकार

(तर्ज—महाड)

सीताजी बोली सुनहु लकपति।
मैं तो वंछू नही परपति ॥ टेर ॥

जन्म देई जननी सुत पाले, प्रेम करे चित चाय।
ते पण निज मर्याद तजी ने मारे जहर पिलाय ॥ १ ॥
चन्द्र थकी खीरा झरे रे सूर्य करे अन्धकार।
सिंह छाली सम होय कदापि शील न खंडू लगार[१] । २ ॥
आमन जामन कल्प तरु के कण्टक कह दे कोय।
अरणी घिसे अमृत चाहे निकसे कमल उपल पै होय ॥ ३ ॥
साधु थई सत्य मारग छोडे समुन्दर कार[२] लोपाय।
सूरो थई रण खेत थी भागे नृपति मूंके न्याय ॥ ४ ॥
इतनी बाता होय तो होओ शील से चूकूं नाय।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे छे रावण मुख विलखाय ॥ ५ ॥

: ५ :

राजीमती का ब्याह

(तर्ज—सग चलू जी पिया)

ऐसो जादो पती रे, ऐसो जादो पती, परणवा पधारे राजमती ॥ टेर॥

---

१ तनिक भी २ मर्यादा।

उग्रसेन राजा की पुत्री ऐसी, सूत्र मे कह्यो आभा वीज जिसी ॥ १ ॥
तेहने व्याहन जावे नेमकुंवार, वहु विध साथे कृष्ण मुरार ॥ २ ॥
शक्र इन्द्र ब्राह्मणरूप धरी, सन्मुख आई इम अरज करी । ३ ॥
लगन मे दीसे छे कोई अदूर, इण अवसर नही परणे जरूर ॥ ४ ॥
कृष्ण कहे रे ब्राह्मण ! जाओ इहां,पीला चाँवलथाने कौन दिया ॥ ५ ॥
ब्राह्मण दूर हुवो तिण वार, तोरण पर आवे नेमकुमार ॥ ६ ॥
पशुवां को वाट मे वाडो भरचो, करुना करीने प्रभु पाछो फिरचो ॥ ७ ॥
संजम लियो त्यागी ऋद्धि छती, कर्म हणी ने पाया सिद्ध गती ॥ ८ ॥
माडलगढ मे मुनि नन्दलाल, तस्य शिष्य जोड़ बनाई रसाल ॥ ९ ॥

: ६ :

ब्राह्मण रूप से शक्रेन्द्र का आगमन

(तर्ज—नेमजी ऊभा रहो)

यादव ऊभा रहो ॥ टेर ॥

शक्र इन्द्र सुरलोक मे हो, काँई बैठा सभा के माही आप हो ॥ १ ॥
ज्ञान से जाना नेम की हो कांई खूब बनी है बरात हो ॥ २ ॥
आप बुड्ढा ब्राह्मण तणो हो काई रूप रच्यो तत्काल हो ॥ ३ ॥
डगडग धूजे तेनी ग्रीवा हो काई धूजे तेनो सकल शरीर हो ॥ ४ ॥
कर मे लकडी रूयडी हो कांई पाग मे धरचो पंचांग हो ॥ ५ ॥
सन्मुख आय बरात मे हो काई हरिजी से करे है सवाल हो ॥ ६ ॥
रहेसी कुंवारा नेमजी हो काई कभी नही होवे याको व्याह हो ॥ ७ ॥
दीनी दक्षिणा तेहने हो काई विदा कर दीनो तत्काल हो ॥ ८ ॥
वलतो ब्राह्मण इम कहे हो काई जद जानूं लावो परनाय हो ॥ ९ ॥
महामुनि नन्दलालजी हो काई तस्य शिष्य नेमजी को दास हो ॥१०॥

: ७ :

नेमजी की बरात

(तर्ज—आज रग वरसे रे)

नेम वनड़ा के रे नेम वनडा के रे ! — — —
संग वरात चढ़ी वड़ी धूम धड़ाके रे ॥ टेर ॥

कृष्ण और बलभद्र साथ दोई भ्रात बरात के माई रे।
समुद्रविजय राजादिक संग कर कर जलुसाई रे॥ १॥
यादव वशीराजकुंवर की जोड जगामग चमके रे।
मणि सुवर्ण का भूषण अंग दामिनि ज्यो दमके रे॥ २॥
पचरगी पोशाका कर कर जान्या[1] रग्या चग्या रे।
गज रथ घोडा बैठ पालखी चले उमंग्या रे॥ ३॥
गज इन्दर पर नेमकुंवरजी सुर इन्दर सम दरसे रे।
सावरिया की देख देख छवि सुर नर हरसे रे॥ ४॥
जीव दया के काज व्याह तज तुरत नेमजी फिरिया रे।
सजम ले फिर कर्म काट मुगति-सुख वरिया रे॥ ५॥
उगणी से छीयंतर तेरस भादव बुध के माई रे।
मुनि नन्दलाल तणां शिष्य अलवर जोड बनाई रे॥ ६॥

: ८ :

महारानी देवकी का संशयनिवारण

(तर्ज—मेवाडा जी हुकुम कराओ तो हाजर ऊभी)

विनय करी ने पूछे देवकी, काई संशय मेटन काज मुनिवरजी ॥टेर॥
होजी आज्ञा लेई प्रभु नेम की, काँई भ्राता छहूँ अनगार मुनिवरजी।
तीन सिंघाडे आया गोचरी, काई द्वारिका नगरी मुझार मुनिवरजी ॥१॥
होजी प्रथम सिंघाडो फिरताँ थकाँ, काँई देवकी के आयो आवास मुनिवरजी।
देवकी सन्मुख जाय ने काँई बाँद्या चित्त हुलास, मुनिवरजी ॥२॥
होजी मोदक वहराया निज हाथ से, काई ते तो फिर चाल्या अनगार मुनिवरजी।
दूजो भी सिंघाडो इम जाणजो, काई तीजो भी आयो तिणवार मुनिवरजी ॥३॥
होजी प्रतिलाभी ने पूछे देवकी, काई धन धन तुम अणगार मुनिवरजी।
तुम मुझ पुण्य उदय करी, काँई फिर-फिर आया तीजी वार मुनिवरजी ॥४॥
होजी मुनिवर कहे सुण देवकी, काई मैं छा सगा छ हू भाय मुनिवरजी।
नाग सेठ का सुत हमे, काई सुलसा माकी[2] माय मुनिवरजी ॥५॥
होजी बत्तीस बत्तीस नारया तजी, काई परिग्रह से तज दियो प्रेम मुनिवरजी।

---

१ बराती। २ हमारी माता।

संजम लियो तिण दिवस थी, कांई छट[1] छट कीनो नेम मुनिवरजी ॥६॥
होजी थारे घर आया गोचरी, कांई तीन सिंघाडे आज मुनिवरजी ।
वे का वे ही मत जाण जे, कांई इम कही गया मुनिराज मुनिवरजी ॥७॥
होजी देवकी मन प्रसन्न हुई, धन धन मात अनूप मुनिवरजी ।
रत्न सरीखा निज पुत्र ने, काई दिया जिनवर जी ने सूंप मुनिवरजी ॥८॥
होजी संवत उगणीसे छियोतरे, कांई अलवर शहर चौमास मुनिवरजी ।
महा मुनि नन्दलालजी कांई तस्य शिष्य कहत हुलास, मुनिवरजी ॥९॥

: ९ :

माता देवकी का चिन्तन

(तर्ज—धीरा चालो व्रज का वासी)

बोलो बोलो माजी मन खोली, सब बात हिया मे तोली रे ॥ टेर ॥
माता देवकी जिनवर भेटी, सब मन की भ्रमणा मेटी ।
घर आय सिंहासन बैठी रे ॥ १ ॥
तब हरि शृङ्गार बनाया, माता का दर्शन पाया ।
चरणो मे शीष नमाया रे ॥ २ ॥
कर जोडी ने गिरधर भाखे, माजी किम आँसू नाखे[2] ।
करूं सफल कहो दिल थाके रे ॥ ३ ॥
माजी सब वृत्तान्त सुनाया, तब वचन दियो हरि राया ।
सब मन का सोच मिटाया रे ॥ ४ ॥
पौषधशाला मे आई, सुर समरयो ध्यान लगाई ।
थारो होसी व्हालो लघु भाई रे ॥ ५ ॥
दिन ऊगां पौषध पारा, माजी का काम सुधारा ।
हुआ गजसुखमाल कुमारा रे ॥ ६ ॥
नन्दलाल मुनि गुणधारी, तस्य शिष्य कहे हितकारी ।
नित पुण्य से जय जय कारी रे ॥ ७ ॥

: १० :

गजसुखमाल मुनि की क्षमा

(तर्ज—मेवाडाजी हुकम करो तो हाजर ऊभी)

साधपणो शुद्ध आदरयो, कांई धन धन गजसुखमाल, मुनिवरजी ॥ टेर ॥

---

१ बेले बेले तपस्या का नियम । २ डालती हो ।

होजी नेमजिनन्द भगवान् की, काई आज्ञा लेई ऋषिराय, मुनिवरजी ।
तरु हेठे जाई शमशान मे, काई ऊभा ध्यान लगाय, मुनिवरजी ॥१॥
होजी सोमिल ब्राह्मण तिण समे, काई जातो नगरी मुझार, मुनिवरजी ।
तिण वाटे थई नीकल्यो, कांई ओलखिया अनगार, मुनिवरजी ॥२॥
होजी लघु भाई गोविन्दना, म्हारी बेटी मे बतायो काई दोष, मुनिवरजी ।
विन अपराधे परहरी, काई अधिक भरानो रोप, मुनिवरजी ॥३॥
होजी आली माटी लायो सर तणी,कांई बाधी मुनि के सिरपाल,मुनिवरजी।
दुष्ट दया आनी नही, काई सिर धरिया खैर अंगार, मुनिवरजी ॥४॥
होजी मुनिवरजी मन्दर गिरि समो,कांई नही कियो क्रोध लगार,मुनिवरजी।
ध्यान थकी चूक्या नही कांई चढी परणाम की धार, मुनिवरजी ॥५॥
होजी चार कर्म दूरा हुआ, काई पाया केवल ज्ञान, मुनिवरजी ।
आठो ही कर्म खपाय ने काँई पहुँचा शिवपुर स्थान, मुनिवरजी ॥६॥
होजी एहवा, मुनि का गुण गावता, काँई पावे सुख भरपूर, मुनिवरजी ।
'खूबचन्द' कहे तस नामथी, कांई कारज सिद्ध जरूर, मुनिवरजी ॥७॥

: ११ :

तारा रानी का नृपति को दृढ करना

(तर्ज—म्हारी मही मत लूटोजी मैं छू गोकुल की काना गूजरी)

राजा मत घबराओ जी,सत्य से निज सम्पत्ति निश्चय पाओगे ॥ टेर ॥

काशी के बाजार बीच मे बेची तारा रानी ।
जाती देख हरिश्चन्द्र नृप के नैना बह रयो पानी जी ॥ १ ॥
रानी बोली मुन महाराजा क्यो इतना घबरावे ।
सुख दुख का जोडा जग माही शास्तर मे सब गावेजी ॥ २ ॥
मोती महल सुवर्ण की सेजा, ड्योढीवान रखवाला ।
दासी दास नौकर और चाकर, हुकम उठानेवालाजी ॥ ३ ॥
गज घोडा रथ पालकी सरे, पलटन फौज रसाला ।
राज तख्त धन का भडार, जय विजय वधाने वालाजी ॥ ४ ॥
सिर का मुकुट कान का कुण्डल, गल मोत्यो की माला ।
कर भूषण कटि सुत सुवरन का, कम्बल सर्ज दुशालाजी ॥ ५ ॥

राम लक्ष्मण दोनो भाई सीता जिनके साथ।
दुख सह्या वनवास मे सरे, देखो द्वारिकानाथजी ॥ ६ ॥
सत्य के कारण राज्य तज्यो, तुम ही शूरा रजपूत।
निज सम्पत्ति के नाथ बनोगे, रहो जरा मजबूतजी ॥ ७ ॥
वनिता होय विनीत पति को दे पूरण विश्वास।
मुनि नदलाल तणां शिष्य कहे मैं गुरु चरण को दासजी॥८॥

· १२ ·

भिक्षा के लिए आमंत्रण

(तर्ज—भैरु आओ क्यू नी काई गाडा होय रया)

जी ओ गुरु आओ क्यो नी कांई गाड़ा होय रया ॥ टेर ॥

मैं तो नित की भावा थारी भावना, मैं तो नित की नारु[1] थारी वाट ॥ १ ॥
म्हारे कमीय नही किण बात री, म्हारे लग रया पुण्य का ठाठ ॥ २ ॥
म्हारे दूध दही घृत मोकला[2], लीजे गोरस गुड बली खाड ॥ ३ ॥
म्हारे चावल दाल ने खिचडी, भरी मालपूआ तणी छाब ॥ ४ ॥
म्हारे खाजा पूडी घणा खीचीया, तरिया[3] पापड लेवो तइयार ॥ ५ ॥
म्हारे दईवडा ने कचोरिया, तार फीणी ने घेवर सार ॥ ६ ॥
म्हारे घणा पेठा ने पकौडियाँ, लुच्या पेडा अने सेव दाल ॥ ७ ॥
नन्दलाल मुनि तणां शिष्य कहे, इम कर रया जन मनवार ॥ ८ ॥

: १३ ·

तप में शूरा

(तर्ज—पूर्ववत्)

शूरा हो तप मे झूंझिया ॥ टेर ॥

ई तो सुत्तर का वाजा वज रया, ढाल चौपी का घुल रया ढोल ॥ १ ॥
ई तो शूरा चढ्या संग्राम मे, ई तो कायर रया उभा देख ॥ २ ॥
जाने तपस्या का तीर चलाविया, सन्तोष का शेल सम्भाल ॥ ३ ॥
यह तो ढाल क्षम्या की पीठ पै, हुआ शुद्ध मन अश्व सवार ॥ ४ ॥
सच वचन का पाखर पेरिया, निर्लोभ की कर तलवार ॥ ५ ।
जाने सेवा लीधी साथे मांमठी[4], दृढ दान शील तप भाव ॥ ६ ॥

---

१. निहारू—देखती हू । २. खूब ३ तला हुआ ४ बहुत ।

जाने आठ करम वैरी जीतिया, लीनो मोक्ष को किल्लो खास ॥ ७ ॥
'खूब' मुनि कहे साभलो, कुछ पराक्रम दीजे बताय ॥ ८ ॥

· १४ ·

जम्बू स्वामी के गुण

(तर्ज—पूज मुन्नालालजी नित व्यावो रे)

वन्दो नित जम्बू स्वामी सौभागी रे,हुआ जगत मे परम वैरागी ॥ टेर ॥

माता धारणी नन्दन जाया रे, पूर्व पुण्य से बहु ऋद्ध पाया रे।
इम सोला वर्ष मे आया ॥ १ ॥

तिण अवसर सुधर्मा स्वामी रे, पानसे[1] मुनि संग शिवगामी रे।
आया विचरत अन्तर्यामी ॥ २ ॥

आया जम्बूजी वन्दन काजे रे, तिहा सुधर्म स्वामी विराजे रे।
सुन वाणी वैराग्य मे छाजे ॥ ३ ॥

अष्ट नारी एक दिन परणी रे, जाकी काया कचन वरणी रे।
नही जोया सन्मुख जान वैतरणी ॥४॥

पानसे[2] सतावीस साथे रे, समझाया एकण राते रे।
लीनो सजम सहु परभाते ॥ ५ ॥

सुधर्म स्वामी जैसे गुरु भेट्या रे, सब फद जगत का मेट्या रे।
करनी कर ससार समेट्या ॥ ६ ॥

सोलह वर्ष रहे घर माही रे, फिर साधु हुये हुलसाई रे।
रहे छदमस्त वीस वर्ष ताई ॥ ७ ॥

बहु गुण रतनो की खानो रे, ध्याता अहो निशि निर्मल ध्यानो रे।
पीछे पाया केवल ज्ञानो ॥ ८ ॥

चम्मालीस वर्ष केवल पाली रे, मुनि अष्ट कर्म ने बाली रे।
पहुँचा मोक्ष चहुँ गति टाली ॥ ९ ॥

कहे 'खूब' मुनि तस नामो रे, सहू सीजे वछित कामो रे।
ऋद्धि सिद्धि नवे निध पावो ॥ १० ॥

१–२. पाच सौ

: १५ :

लोभ-त्याग

(तर्ज—डगमग नही करना, नही करना)

काम नही[1] आसी रे माया २, तज लालच भज जिनराया ॥ टेर ॥

ब्राह्मण कुल मे जनम लियो, धन कंपिल ऋषिराया ॥
सुवर्ण लोभ तज राज - सभा मे, केवल पद पाया ॥ १ ॥
जिनरिख जिनपाल दोनो भाई, ते परदेश सिधाया ।
वार ग्यारह लाभ कमाई, वापिस निज घर आया ॥ २ ॥
द्वादसमी विरिया फिर चाले, लालच नही मिटाया ।
मातपिता वरजा नही माना, तो जिनरिख प्राण गवाया ॥ ३ ॥
सातमो खंड साधन ने चाल्यो, संभूम चक्री राया ।
बारबार सुर मना करे पण लालच मांय लुभाया ॥ ४ ॥
समुंदर मांही चल्या शीघ्र से बैठ जहाज मे राया ।
डूबी जहाज सागर के मांही सातमी नरक सिधाया ॥ ५ ॥
निश दिन दौडे बहु धन जोड़े धूप गिने नही छाया ।
कर्म बांध कर नर्क सिधाया जहां कूटे जम राया ॥ ६ ॥
चार तीर्थ को शरणो लीधो, जग मांही जश पाया ।
महा मुनि नन्दलाल तणाँ शिष्य यह उपदेश सुनाया ॥ ७ ॥

: १६ :

सत्य सुखदाई

(तर्ज—रे पण्डित कीजो अर्थ विचारी)

मानव साच सदा सुखदाई ॥ टेर ॥

जनक[2] सुता[3] को रुपीया लेकर कीनी तुरत सगाई ।
ब्याह किये बिन कूट पीटने सासरीये पहुँचाई रे ॥ १ ॥
उस कन्या को बिन अपराधे सरवर तट लटकाई ।
सर्दी गर्मी सहन करे पण तन ढाँकन पट नाई रे ॥ २ ॥

---

१. आएगी २. पिता ३. लड़की ।

बतलाया किन से नही बोले मौन मे रहत सदाई ।
हाकिम हुक्म से मार सहे जद सच सच देत सुनाई ॥ ३ ॥
रात दिवस कुछ खावे न पीवे सासरिया के माही ।
मुंआ बाद पिता से मिलवा पाछी पीहर मे आई रे ॥ ४ ॥
ते सरिखा सत्यवादी होजो ने दिल मे दृढ़ता राखो ।
क्रोध लोभ भय हास वसे तुम झूठ कभी मत भाखो रे ॥ ५ ॥
तीन दिवस की अवधि आपी दीजो अर्थ बताई ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे छे रामपुरा के मांई रे ॥ ६ ॥
(उत्तर—ठठेरे के यहा बनी हुई घड़ियाल)

: १७ :

सतगुरु की संगति

(तर्ज—प्रणमू वास पूज्य नायक)

सतगुरु की संगति करले रे चेतन, पावे सुख सवाया रे ।
कर्म हणी ने शिवपुर जासी, तू देख परदेशी[1] राया ॥ टेर ॥
नगरी सितम्बका नो राज करे छे, महा अधर्मी राया रे ।
धर्म कर्म को मूल न जाणे, रहता लोही से हाथ भराया रे ॥ १ ॥
जीव शोधन[2] के काजे राजा, कई मनुष्य मराया रे ।
घाल तराजू के माही तोलतो, पिण जरा नही घटाया रे ॥ २ ॥
इण कारण से राय परदेशो, एक माने जीव काया रे ।
चित प्रधान सरीखा पुण्यवन्त, मुनिवर का जोग मिलाया रे ॥ ३ ॥
राजा प्रधान दोही रथ मांही बैठा घोडा बहुत दौड़ाया रे ।
राजा अति घबराय गयो तब, तुरत बाग में आया रे ॥ ४ ॥
मुनिवर देखी ने राजा कोप्यो, ई जड मूढ कुण आया रे ।
चितजी कहे यह तो जैन का साधु, जुदा माने जीव काया रे ॥ ५ ॥
चर्चा करन ने राय परदेशी, तुरत मुनि पै आया रे ।
केशी श्रमण सा सतगुरु भेट्या, ते छिन माही भरम मिटाया रे ॥ ६ ॥
जहर - जोग से अनशन करने, ते सुर पदवी पाया रे ।
विदेह क्षेत्र मे मुक्त जावेगा, सूतर मे फरमाया रे ॥ ७ ॥

---

१ राजा प्रदेशी २ खोजने ।

साल पिचावन कियो चौमासो, श्रावक बहु हुलसाया रे।
मुनि नन्दलाल प्रसादे 'खूबचन्द' नीमच मांही गाया रे ॥ ८ ॥

१८

नारी-प्रेम

(तर्ज—तू सुन हमारी जननी)

सुन चतुर सयाना नारी को नेह निवारजे ॥ टेर ॥
परदेशी राजा तणी सरे सूरीकंता नार।
एक दिन जाग्रण जागताँ सरे मन मे कियो विचार ॥
पिउजी तो इण राज की सरे नही करे सार सम्भाल रे ॥ १ ॥
इण विध कर विचारणा सरे दिन ऊगो तिणवार।
तत्क्षण वेग बुलावियो सरे सूरी कत कुमार ॥
प्रछन्न पणे पुत्तर भणी सरे बोले वचन विचार रे ॥ २ ॥
धर्म-गेलियो तुम पिता सरे छोड़ दियो सब राज।
जहर शस्त्र प्रयोग से सरे पूरण कर दे काज ॥
महोत्सव कर [१]मंडाण से सरे देसु तुझ ने राज रे ॥ ३ ॥
पुत्र सुनी या वार्ता सरे थर थर कंपी काय।
बोल्यो अणबोल्यो रह्यो सरे आयो तिण दिश जाय ॥
पुत्र पिता ने कह देशी तो कीजे कौन उपाय रे ॥ ४ ॥
भोजन सरस बनावियो सरे माही नाख्यो जहर।
नरपति नौत जिमावियो सरे दियो नशा ने घेर ॥
आतमज्ञान लगावियो सरे जरा न आणी लहर रे ॥ ५ ॥
ततक्षण उठ्यो नरपति सरे आया पौषधशाला मांय।
अवसर आयो जाण ने सरे दियो सथारो ठाय ॥
साचो जिण धर्म पालने सरे गयो स्वर्ग के माय रे ॥ ६ ॥
इम जाणी ने नीकले सरे नारी नेह छिटकाय।
शुद्ध संजम आराधना सरे धन धन ते मुनिराय ॥
'खूब' मुनि कह ते मुनिवर का नित नित प्रणमूं पाय रे ॥ ७ ॥

---

१. ठाठ-बाट

: १९ :

भरत-वैराग्य

(तर्ज—आज रग वरसे रे)

भरत[1] मन माँही रे, भरत मन माँही रे।
वैराग्य भाव मे रहे सदा ही रे ॥ टेर ॥
प्रथम जिनेश्वर समोसरण मे प्रकट बात फरमाई रे।
भरत भूपति जासी मोक्ष इण हिज भव माई रे ॥ १ ॥
विषय भोग आरम्भ परिग्रह मे रहे सदा उलझाई रे।
कैसे मोक्ष होगा एक नर 'यू बात चलाई रे ॥ २ ॥
भरत सुनी या बात तुरत ही लीनो उसे बुलाई रे।
पूर्ण कटोरो भर के तेल दियो हाथ के माई रे ॥ ३ ॥
बीच बजार होकर लावो तुम रहीजो सग सिपाई रे।
एक बूंद भी गिरे तो दीजो शीश उडाई रे ॥ ४ ॥
विविध भाति वस्तु हटिया[2] पर दीनी खूब सजाई रे।
उस रस्ते होकर उस नर को सोप्यो लाई रे ॥ ५ ॥
क्या क्या देखी चगी[3] चीज आवत रस्ता के माई रे।
फक्त कटोरा बीच ध्यान चित गयो न काई रे ॥ ६ ॥
यो मुझ मन वैराग बसे, नही आरम्भ परिग्रह माई रे।
न्याय-सहित उस मानव को दियो भर्म मिटाई रे ॥ ७ ॥
उगणी से पच्चास ऊपर छब्वीस साल के माई रे।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य अलवर जोड बनाई रे ॥ ८ ॥

: २० :

सती काला रानी

(तर्ज—भजन विना काई होसी रे तेरो सूल)

कालीयो राणी सफल कियो अवतार।
ते तो पामी छे भवोदधि पार ॥ टेर ॥
कोणिक रायनी छोटी हो माता, श्रेणिक नृप की नार।
वीर जिनन्द की वाणी सुनी ने, लीनो सजम धार ॥ १ ॥

---

१ ऋषभदेव के पुत्र, चक्रवर्ती भरत। २ बाजार-दुकान ३ अच्छी, सुन्दर

चदणबालाजी जैसी मिली हो गुराणी के नित नित नमी चरणार।
विनय करीने भणी अग इग्यारे, तेहनी निर्मल बुद्धि अपार ॥२॥
सुमत[1] गुपत[2] शुद्ध संजम पालत, चढी हो प्रणाम[3] की धार।
आज्ञा लेई ने, सती निज गुरुणी की, तपस्या मॉडी है सार ॥३॥
शरीर शकती जाणी सती ने, आराध्यो रत्नावली तप नो हार।
चार लड़ी सम्पूरण कीनी, तेनो आठ मे अंग अधिकार ॥ ४ ॥
पाच वर्ष तीन मास दो दिन कम लागो इतनो काल।
धन्य महासती तप आराध्यो तेहने वंदना छे बारंबार ॥ ५ ॥
आठ वर्ष कुल सजम पाल्यो कर्म किया सव छार।
जनम जरा और मरण मिटायो पहुंची मोक्ष मुझार ॥ ६ ॥
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गायो शहर भिलाड़ा मुझार।
ऐसी सती का सुमरण सेती मुझ वरते मगलाचार ॥ ७ ॥

· २१ ·

सती अंजना

(तर्ज—महाड)

सीयल[4] सुध पालो मन वच काय,
तासे विघन सहु टल जाय ॥ टेर ॥

मोटी सती हुई अजना रे पुत्र थयो वन मॉय।
निस दिन सुर सेवा करे काई सिंहनो रूप बनाय ॥ १ ॥
विलविल रोवे अजना रे पूरब बात चितार।
व्हाला तस वैरी हुआ कॉई जिनवर को आधार ॥ २ ॥
वसंतमाला[5] इम वीनवे रे बाई कर सन्तोप।
कर्म कमाया आपणा कोई किणने दीजे दोष ॥ ३ ॥
इतने मामो आवियो रे तिण अटवी के माय।
वाई तूं रोवे मती झट लीनी कठ लगाय ॥ ४ ॥
वैठाई विमान मे रे वसतमाला पिण लार।
मामोजी घर आपणे काई ले चाल्यो तिण वार ॥ ५ ॥

---

१ पाच समितियां। २ तीन गुप्तियां। ३ परिणाम। ४ शुद्ध शील पालो।
५. वसन्त माला-अजना की सहचरी।

बालक मोती झूमको रे देख्यो तिण विमान।
लेवन काजे उछल्यो काँई हेठे पडियो आन ॥ ६ ॥
आल[1] न आयो लाल के रे मात थई दिलगीर।
मामोजी लायो तोकने[2] काई मेटी मन की पीर ॥ ७ ॥
हनुमन्त पाटन वेग से रे लेय गयो निज स्थान।
मामाजी महोत्सव कियो काई नाम दियो हनुमान ॥ ८ ॥
महा मुनि नन्दलालजी रे ज्ञान तणा दातार।
सीयल तणा प्रसाद से काई वरते मगलाचार ॥ ९ ॥

: २२ :

सम्यक्त्वधारी श्रेणिक नृपति

(तर्ज—इण आऊखा टूटा ने साधो को नही रे)

समकित धारी महीपति एहवो रे ॥ टेर ॥

नगरी तो राजगृही नो वासियो रे, श्रेणिक नामा छे राय रे।
धर्म नो पूरण अनुरागी थयो रे, तिण दिनथी भेट्या मुनिराय रे ॥ १ ॥
मन मे तो भावे नित भावना रे, जो इहा प्रभु महर कराय रे।
तो हर्षधरी ने बादू वीरने रे, सफल दीहाडो[3] मुझ थाय रे ॥ २ ॥
राजगृही ने भीतर बाहरणे रे, पडहो[4] फेरायो महिपाल रे।
प्रभु पधारचा मुझ मालुम करे रे, करसू मैं तिण ने निहाल रे ॥ ३ ॥
भगवत विचरत आया तिण समे रे, लोक मिल खबर दी तत्काल रे।
जे जे बधाई आपी तेहने रे, कीना छे नृप निहाल रे ॥ ४ ॥
सजी सवारी आयो बादवा रे, जिहा विराजे जगन्नाथ रे।
श्रेणिक नृप राणी चेलना रे, प्रभुजी ने बाद्या जोड़ी हाथ रे ॥ ५ ॥
सेवा तो कीनी निर्मल जोग सू रे, वाणी सुन आयो निज गेह रे।
कर कर दलाल्या अति धर्मनी रे, गोत्र तीर्थङ्कर बाध्यो तेह रे ॥ ६ ॥
पहला तीर्थङ्कर होसी भरत मे रे, शास्तर मे घणो अधिकार रे।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य इम कहे रे, जिनधर्म पाल्या जैजैकार रे ॥ ७ ॥

---

१. आच न आई २ उठाकर ३ दिन ४ ड्योडी पिटवाई।

: २३ :

सुदर्शन सेठ

(तर्ज—ख्याल)

सुदर्शन श्रावक पूरण प्रिय धर्मी श्री महावीर नो ॥ टेर ॥

राजगृही का बाग मे सरे वीर विचरता आया ।
सुनी बात सुदर्शन श्रावक हृदय हर्ष भराया ॥
ले आज्ञा नित मात तात की तुरत वदवा आया रे ॥ १ ॥
[1]देवाघिष्ट कोप्यो थको स तिण अवसर अर्जुन माली ।
नगरी के चहुं फेर फिरे स कर मे मुद्गल झाली ॥
बीत गया छे मास हणे नित छ. छ. पुरुष एक नारी रे ॥ २ ॥
ते तिणने रस्ता मे मिलियो देख रह्या नरनारी ।
सागारी[2] अनशन कर लीनो मन मे निश्चय धारी ॥
कुछ नही चाल्यो जोर देवता निकल गयो तिणवारी रे ॥ ३ ॥
अनशन पार लार लेई[3] तिण को आया वाग मे चाली ।
वीर वाद वाणी सुन संजम लीनो अर्जुन माली ॥
छ महीने मे मोक्ष गये सव जनम मरण दुख टाली रे ॥ ४ ॥
ऐसा श्रावक होय गुरु की सदा भक्ति मन भावे ।
कभी कष्ट व्यापे नही सरे जगत माही जश पावे ॥
महा मुनि नन्दलाल तणां शिष्य जोड करी इम गावे रे ॥ ५ ॥

: २४ :

गोपीचन्द की क्षमा

(तर्ज—मारग मे काई को खडा रे चले जाना)

चले जाना, अरे हो रे चले जाना,
महलो के नीचे काहे खडा रे ॥ टेर ॥

गोपीचन्द को भेरव देख कर बहिन बैन फरमावे ।
भोग छोडकर जोग लिया क्यो यहा पर अलख जगावे रे ॥ १ ॥

---

१ यक्ष से अधिष्ठित २ छूट सहित अनशन । यदि मेरा सकट टल गया तो अनशन नही रहेगा, इस प्रकार का वचाव जिसमे रख लिया जाता है । ३ अपने पीछे-पीछे अर्जुन माली को लेकर ।

मरजो मां मैनावती जो तुझ बालक ने भरमायो।
दूजो मरजो सतगुरु थारो तुझ भेरव पहनायो रे ॥ २ ॥
धन माल सब छोड दिया तुझ दिया कुमति ने घेरा।
बगाले का राज छोड कर हुआ गुरु की लेरा रे ॥ ३ ॥
वह आदर कहो कहा रहा बोल मैं कहा कहूँ तुझ ऐती।
मीठा भोजन ठण्डा पानी वो फोजा सग रहती रे ॥ ४ ॥
इतने कडवे बोल सुना कर फिर महलो मे आई।
मोत्यो का भर थाल हाथ से भिक्षा देने लाई रे ॥ ५ ॥
ना चाहिये मोती आदिक मैं ठण्डा टुकडा चाहूँ।
खुशी होय तो दे दे नही तो अपने आश्रम जाऊ रे ॥ ६ ॥
कहे बहिन तू जा नही ले तो क्षमा धार चल आया।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे ऐसे स्वर्ग वह पाया रे ॥ ७ ॥

२५ :

मृगापुत्र का वैराग्य

(तर्ज—बनो लोग विखेर गयो रे)

मृगा पुत्र जी वैरागी थया रे,कांई मुनिवर को देख स्वरूप ॥ टेर ॥
होजी सुग्रीव नगर का वासिया रे, काई बलभद्र रायना नद ॥ १ ॥
होजी मृगावती अग ऊपना रे, काई बहत्तर कला मे हुशियार ॥ २ ॥
होजी रत्न जडित घर आगणा रे, काँई राण्या को बहु परिवार ॥ ३ ॥
होजी कई दिना के आँतरे रे, काई बैठा है महल मुझार ॥ ४ ॥
होजी विविध वाजितर बाजता रे, काई नाटक का झणकार ॥ ५ ॥
होजी तिण अवसर थई निकल्या रे, काई महलो के नीचे अणगार ॥६॥
होजी नजर पडी मुनि ऊपरे रे, काई मन माँही करत विचार ॥ ७ ॥
होजी जाति स्मरण ज्ञान ऊपनो रे, काई जान्यो है सकल विचार ॥८॥
होजी मन माही वैराग्य लायने रे, काई लीनो है सजम भार ॥ ९ ॥
होजी वहुत वर्षो को संजम पालने रे, कांई पहुँचा है मुक्ति मुझार॥१०॥
होजी'खूबचद'कहे जीरण माँयने रे,काई जिनधर्म पाल्या जैजैकार ॥११॥

: २६ :

चन्द्रसेन राजा क्षमागुणधारी श्रावक

(तर्ज—सुगुणा साधुजी होके मुनिवर थारो मन चलियो तू घेर)

श्रावक श्री वीरना होके भवियण क्षम्यावन्त गुणधार ॥ टेर ॥

कनकपुरी नगरी तणो होके भवियण चन्द्रसेन महिपाल ।
वीर जिनन्द ने वादवा होके भवियण आयो सुन तत्काल के ॥ १ ॥
वाणी सुन वीतरागनी होके भवियण श्रावक ना व्रत लीद ।
हीये हर्ष अति ऊपनो होके भवियण उड़ी मोह की नीद के ॥ २ ॥
प्रभु पासे नृप आदर्‌यो होके भवियण एवो नेम मन तोल ।
जब तक दीपक नही बुझे होके भवियण रहु सूं ध्यान अडोल ॥ ३ ॥
प्रभु वन्दी आयो महल मे होके भवियण ऊभा ध्यान लगाय ।
दासी देख विचारियो होके भवियण विद्या साधे राय के ॥ ४ ॥
तुरत दीपक जोयो सही होके भवियण ते नही जान्यो भेद ।
वलि वलि तेल जो सीचवे होके भवियण नृप पायो अति खेद के ॥ ५ ॥
दिन ऊगो तव नरपति होके भवियण पूरण पाल्यो नेम ।
द्वेष भाव आण्यो नही होके भवियण अनशन कीधो तेम के ॥ ६ ॥
एक दिवस को पालियो होके भवियण श्रावक धर्म आचार ।
द्वादशमां सुरलोक मे होके भवियण पाया सुर अवतार के ॥ ७ ॥
विदेह क्षेत्र मे सीझसी होके भवियण करसी शिवपुर वास ।
महामुनि नन्दलाल होके भवियण तस शिष्य कहत हुल्लास के ॥ ८ ॥

: २७

मुनि नन्दिषेणकुमार

(तर्ज—चदगुपत राजा सुनो)

नन्दीसेण मुनि वन्दिए ॥ टेर ॥

सेणिक राय रो डीकरो, नन्दीसेण कुमारो रे ।
वीर तणी वाणी सुणी, वैरागी थयो तिण वारो रे ॥ १ ॥
संजम लेवा त्यारी हुओ, एक सुर कहे आई ऐवो रे ।
कर्म भोगावली थायरे, हिवडा संजम लेवे केमो रे ॥ २ ॥

बहु विध कर समझावियो, मानी नहीं एक वातो रे।
संजम लीनो वैराग्य से, वीर दियो माथे हातो रे।। ३ ।।
ज्ञान भण्या स्थेवरा कने, थया छे एकल विहारी रे।
विना उपयोग चल्या गया, वेश्या के घर तिणवारी रे।। ४ ।।
वेश्या मर्म प्रकाशियो, वचन सुणी ने मुनिराया रे।
साडा बारा क्रोड सोनैया, लब्धि करी वरसाया रे।। ५ ।।
वेश्या तुरत आडी फिरी, लिया मुनि ने ललचाई रे।
समकित मे सेठा[1] रह्या, यह पण थई अधिकाई रे।। ६ ।।
ऐहवो अभिग्रह धारियो, दस दस नित समझावे रे।
वीर समीपै मोकले, धर्मी पूर्ण बनावे रे।। ७ ।।
इम साडा वर्ष निकल्या, एक दिन नव समझाया रे।
एक घटे योग ना मिल्यो, विविध उपाय लगाया रे।। ८ ।।
वेश्या कहे किम साहिवा, थया छो आप उदासी रे।
सव वृत्तान्त सुणावियो, वेश्या बोली कर हाँसी रे।। ९ ।।
दशमा तुम पूरा हुओ, ढील न करीये लगारो रे।
वचन लग्यो जिम ताजणो, निकल्या थई अणगारो रे।।१०।।
वहु वर्षों का सजम पालने, निर्मल केवल लीधो रे।
'खूब' कहे ते मुनिवरु, काम किया सव सीधो रे।।११।।

: २८ :

धर्मरुचि

(तर्ज—जला की)

मुनिवर धर्मघोप ना शिष्य तपस्वी गुणधारी हो, धर्मरुची अणगार।
था पर वारी अणगार, धर्मघोपना शिष्य तपस्वी गुणधारी हो मुनि ।।१।।
मुनिवर विचरत विचरत चम्पा नगरी आया हो, धर्मरुची अणगार।
था पर वारी अणगार, विचरत विचरत चम्पा नगरी आया हो मुनि ।।२।।
मुनिवर आज्ञा लई शिष्य गोचरी सिधाया हो, धर्मरुची अणगार।
थाँ परवारी अणगार, आज्ञा लई शिष्य गोचरी सिधाया हो मुनि ।।३।।

---

१ दृढ।

मुनिवर मासखमण के पारणे शहर मे आया हो, धर्मरुची अणगार ।
थां पर वारी अणगार, मास खमण के पारणे शहर मे आया हो मुनि ॥४॥
मुनिवर फिरता फिरता [1]नागश्री के घर आया हो, धर्मरुची अणगार ।
थाँ पर वारी अणगार, फिरतां फिरतां नागश्री के घर आया हो मुनि ॥५॥
मुनिवर कडवा तुम्बा को आहार मुनि ने वहरायो हो, धर्मरुची अणगार ।
थाँ पर वारी अणगार, कडवा तुम्बा को आहार मुनिने वहरायो हो मुनि ॥६॥
मुनिवर जहर हलाहल जाण गुरुजी फरमावे हो, धर्मरुची अणगार ।
था पर वारी अणगार, जहर हलाहल जाण गुरुजी फरमावे हो मुनि ॥७॥
मुनिवर देखी निरवद्य स्थान जाई परठाओ हो, धर्मरुची अणगार ।
था पर वारी अणगार, देखी निरवद्य स्थान जाई परठाओ हो मुनि ॥८॥
मुनिवर परठण आया अजयणा[2] जाणी हो, धर्मरुची अणगार ।
थां पर वारी अणगार, परठण आया अजयणा जाणी हो मुनि ॥९॥
मुनिवर आहार कियो सब खीर खाड सम जाणी हो, धर्मरुची अणगार ।
था पर वारी अणगार, आहार कियो सब खीर खाड सम जाणी हो मुनि ॥१०॥
मुनिवर अनशन करके सर्वार्थ सिद्ध पधारया हो, धर्मरुची अणगार ।
थां पर वारी अणगार, अनशन करके सर्वार्थ सिद्ध पधारया हो मुनि ॥११॥
मुनिवर तिहा थी चवी महाविदेह मे मुक्ति सिधासे हो,मुनि धर्मरुचीअणगार ।
थां पर वारी अणगार, तिहाथी चवी महाविदेह मे मुक्ति सिधासे हो मुनि ॥१२॥
मुनिवर कहे 'खूबचन्द' आनन्द मुनि गुण गाया हो, धर्मरुची अणगार ।
थां पर वारी अणगार, कहे 'खूबचन्द' आनन्द मुनि गुण गाया हो मुनि ॥१३॥

: २६ :

कपिल मुनि

(तर्ज—पूर्ववत्)

मुनिवर कंपिल ब्राह्मण नगर उज्जैनी मे रहतो हो, कपिल मुनिराज ।
था पर वारी मुनिराज, कंपिल ब्राह्मण नगर उज्जैनी मे रहतो हो मुनि ॥१॥
मुनिवर तिहां नृप दान दो मासा नित्य देतो हो, कपिल मुनिराज ।
थां पर वारी मुनिराज, तिहा नृप दान दो मासा नित्य देतो हो मुनि ॥२॥

१ एक ब्राह्मणी का नाम । २. अयतना-जीवहिंसा ।

मुनिवर नारी कहन से जावे सोना हाथ नही आवे हो, कपिल मुनिराज ।
थां पर वारी मुनिराज, नारी कहन से जावे सोना हाथ नही आवे हो मुनि ।३।
मुनिवर रात अँधारी प्रभात समय दर्शावि हो, कपिल मुनिराज ।
था पर वारी मुनिराज, रात अँधारी प्रभात समय दर्शावि हो मुनि ।।४।।
मुनिवर मारग जाता हरे, जान घेरयो गिफ्त[1] माही हो,कपिल मुनिराज ।
थाँ पर वारी मुनिवर, मारग जाता हरे जान घेरयो गिफ्त माही हो मुनि ।।५।।
मुनिवर नृप निर्णय कर कहे तू माग देऊं सोही हो, कंपिल मुनिराज ।
थाॅ पर वारी मुनिराज, नृप निर्णय कर कहे तू माँग देऊँ सोही हो मुनि ।।६।।
मुनिवर एकान्त विचारी ने अधिको लोभ बधायो हो, कपिल मुनिराज ।
थाँ पर वारी मुनिराज, एकान्त विचारी ने अधिको लोभ वधायो हो मुनि।।७।।
मुनिवर मन सुलट्यो श्रेणी चढता केवल पायो हो, कपिल मुनिराज ।
थाँ पर वारी मुनिराज, मन सुलट्यो श्रेणी चढता केवल पायो हो मुनि ।।८।।
मुनिवर ओघा पात्र लाय मुनि को देवता दीना हो, कपिल मुनिराज ।
थाँ पर वारी मुनिराज ओघा पात्र लाय मुनि को देवता दीना हो मुनि ।।९।।
मुनिवर खूबचन्द कहे मुनिराज अनन्त सुख पाया हो, कपिल मुनिराज ।
थाँ पर वारी मुनिराज खूबचन्द, कहे मुनिराज अनन्त सुख पाया हो मुनि ।।१०।।

: ३० :

धन्ना सेठ

(तर्ज—महला मे बैठी हो रानी कमलावती)

सामल हो श्रोता शूरा ने लागे वचन ज्यूं ताजणो ।
कायर ने लागे नाही कोय ।। टेर ।।

नगरी तो राजगृही ना वासीया, सेठ धन्नाजी जग मे सार ।
पूरब पुण्य थी बहु रिद्ध पामीया, आठ नारया ना भरतार ।। १ ।।
एक दिन धन्नोजी बेठा पाटले, स्नान करे छे तिण वार ।
आठो ही नारया मिलने प्रेम से, कूड रही छे जलधार ।। २ ।।
सुभद्रा नारी चौथी तेहनी, मन मे थई छे दिलगीर ।
आसू तो निकल्या तेहना नैण से, संजम लेवे छे मुझ वीर[2] ।। ३ ।।

---

१ गिरफ्तार कर लिया २ भाई-शालिभद्र ।

प्रेम धरी ने धनजी पूछियो, भामण क्यो थई छे उदास।
शंका मत राखो थे मुझ आगले, कारण तो कहोनी विमास ॥ ४ ॥
कामण[1] कहे छे कंथा माहरा, वीरा ने चढियो छे वैराग।
एक-एक नारी नित की परिहरे, सजम लेवा की रही छे लाग ॥ ५ ॥
धनजी कहे छे भोली बावली, कायर दीसे छे थारो वीर।
सजम लेणो तो दिल मे धारियो, तो किम करनी फिर ढील ॥ ६ ॥
सुभद्रा नारी कहे छे कन्त ने, मुख से बनावे फोकट वात।
ई सुख छांडी ने वाजो शूरमा, प्रीतम जब जानू थारी बात ॥ ७ ॥
तत्क्षण धन्नोजी उठने वोलीया, कामण रहीजो म्हासू दूर।
संजम लेवागा अब इण अवसरे, जब मैं वाज्यांला जग मे शूर ॥ ८ ॥
बे कर जोडी ने सुन्दर बीनवे, कह्यो हँसी के वश बोल।
काची की साची न कीजे साहिवा, हिवडे विचारी ने बाहिर खोल ॥ ९ ॥
सजम लेणो तो साहिबा सोहिलो[2], चलणो छे कठिन विचार।
बावीस परीसा सहवा दोहिला[3], ममता मारी ने समता धार ॥१०॥
उत्तर पर उत्तर हुआ अतिघणा, आया साला के भवन उच्छाव।
दोऊ मिल साथे सजम आदरा, कायर उतरे नी नीचे आव ॥११॥
साला बहनोई मिल संजम लियो, श्रीवीर जिनन्दजी के पास।
शालीभद्रजी सर्वार्थ सिद्ध गया, धन्नाजी शिवपुर वास ॥ १२ ॥
संवत उगणीसे इकसठ साल मे, कीनो गढ चित्तौड चौमास।
मुनि नन्दला तणा शिष्य गावीयो, वछित फलेगा सब आस ॥१२॥

: ३१ :

गोकुल की गूजरियाँ

(तर्ज—मन्दिर मे काई ढूढतो डोले थारे घट मे श्रीभगवान्)

आवो ये सब राय तो मेलो, गऊ पालो, यूं नही समझेलो ॥ टेर ॥
गोकुल की गूजरिया आपस मे कर रही हेलम हेलो।
इण रस्ते से लाभ घरयो छे क्यो ना सम्भाले बीजो गेलो ॥ १ ॥

---

१ स्त्री २. सहज ३ कठिन।

यो कानो नानो मतवालो कूड कपट को थेलो ।
दही दूध की फोडे जावड्या[1] कर देवे रेलम ठेलो ।। २ ।।
यूं डरिया तो काम न चाले दुनिया भरम धरेलो ।
कूट पीट ने कर दो सीधो यो पिण याद करेलो ।। ३ ।।
कुण जाणे कहो मात यशोदा ऐसो नन्द जणेलो ।
कंसराय ने अर्ज करा तो क्यो नही न्याय करेलो ।। ४ ।।
जो पुण्य पोते होय जणी का दुर्जन काई करेलो ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे छे सब ही सुलटी पडेलो ।। ५ ।।

· ३२ ·

गोकुल की गूजरियाँ

(तर्ज—तू सुन मारी जननी आज्ञा देवो तो सजम आदरू)

म्हारो मही[2] मत लूटोजी, मैं छूं गोकल की काना ! गूजरी ।। टेर ।।
खारक खाड खोपरा मिश्री, जिन को लागे दान ।
दान मही को कभी न सुनियो, बाबा नन्द की आन रे ।। १ ।।
मन मे आण जरा डर काना, किम थे छोडी लाज ।
मथुरा मे जरासिंघ जमाई, कंस करे छे राज रे ।। २ ।।
इण जमना के घाट पै तू, आकर करे किलोल ।
भेरा[3] करी ग्वाल्या मटकिया, फोडे मार गिलोल रे ।। ३ ।।
मत माने ज्यो करे कन्हैया, तुझ मे हाल न वीती ।
सीधी तरह समझावां हम सब, मतना माड अनीती रे ।। ४ ।।
गोकुल और मथुरा के वीच मे, यो जमना को घाट ।
दही दूध ले जावे गूजरी, तू बीच पाडे वाट[4] रे ।। ५ ।।
सोलह वर्ष गोकुल विषे सरे, लीला करी अनेक ।
'खूबचन्द' कहे जो पुण्य पोते, चले न किस की एक रे ।। ६ ।।

· ३३ ·

कृष्णजन्म

(तर्ज—अष्टपदी)

पुरुषोत्तम प्रगट्या अवतारी, जगत मे महिमा विस्तारी ।। टेर ।।

---

१ मटकिया । २ छाछ ३ इकट्ठा करके ४ डाका ।

देवकी को नन्दन है नीको, हुवो जादव कुल मे टीको ।
भादव वदी दिन अष्टमी को, जन्म जव हुओ हरिजी को ।।

दोहा— तिण अवसर वसुदेवजी मन का सोच मिटाय ।
कोमल कर मे लेय कान्ह को, जावे गोकुल माय ।।
तुरत फुरती हुआ त्यारी ।। १ ।।

भवन से आया उतर हेठा, द्वार के ताला जड़्या सैंठा ।
कंस का पहरा बाहर वैठा, निकल जाने को नही रस्ता ।।

दोहा— चरण अगुष्ट लगावियो, गोविन्द को तिण वार ।
खड़खड ताला टूट पड्या कोई, सड सड खुल्या द्वार ।।
अखंडित निकल गये बाहरी ।। २ ।।

अंधेरी रात घटा छाई, जोर से गाजे गगन मांई ।
चमकती बिजल्या दर्शाई, वायरो वाजे जोश खाई ।।

दोहा— अति उमग आकाश से, पड रही जल की धार ।
सहस्र नाग छाया कर दीनी, पडे न बून्द लगार ।।
जिन्हो का पुण्य वडा भारी ।। ३ ।।

निकल मथुरा से गोकुल धावे, अपट जमुना पूर जावे ।
निकलवा मारग नही पावे, विविध मिसलत[1] मन मे ठावे ।।

दोहा— पग फरस्यो गऊपाल को, जमुना हुई दो भाग ।
वसुदेवजी तुरत निकल गये, हुलस्यो हियो अथाग ।।
गोकुल मे पहुँचे गिरधारी ।। ४ ।।

यशोदा के हाथ जाय दीनो, प्रेम से गिरधर को लीनो ।
नन्दजी महोच्छव खूब कीनो, दान बहु याचक ने दीनो ।।

दोहा— आये मथुरा मे निज घरे, वसुदेवजी चाल ।
दिन दिन वीज कला ज्यो वढता आनन्द मे नदलाल ।।
कोई नही जाने नर नारी ।। ५ ।।

कृष्ण दिन्न दिन्न भया मोटा, हाथ मे दण्ड लिया छोटा ।
ग्वाल सग रमे दड़ी दोटा, शत्रु के हुआ जेम सोटा ।।

---

१. विचार

दोहा— सोला वर्ष गोकुल विषे, लीला करी अनेक।
तीन खंड का नाथ हुआ तूं पूरब पुण्य तो देख॥
जगतवल्लभ कहे नर नारी॥ ६॥
दलाल्या[1] धर्म तणी कीनी, शास्त्र मे साख[2] देख लीनी।
सज्जन पर सुदृष्टि कीनी, भलाया जग मे बहु लीनी॥
दोहा— महा मुनि नन्दलालजी, तस्य शिष्य कहे ऐम।
पुण्य प्रताप वंछित फल पावे, रखो धर्म का नेम॥
माडलगढ जोड करी त्यारी॥ ७॥

: ३४ :

चौवीसी

(तर्ज— प्रभावती)

चौवीसी जिनराज जगत मे सुख सम्पति आनन्द बरताया॥ टेर॥
वनिता नगरी तिहा नाभिराजा, मरुदेवी नन्द ऋषभ जिनराया।
चौरासी लाख[3] पूर्व नो आयु, पाच सौ धनुष नी ऊंची काया॥ १॥
अयोध्या नगरी जितशत्रु राजा, विजयानन्द अजित जिनराया।
बहतर लाख पूर्व नो आयु, चार सौ धनुष नी ऊंची काया॥ २॥
सावत्थी नगरी जितारथ राजा, सेना दे[4] रानी सम्भव जिनराया।
साठ लाख पूर्व नो आयु, चार सौ धनुष नी ऊंची काया॥ ३॥
वनिता नगरी सम्वर राजा, सिद्धारथ नन्द चौथा जिनराया।
पचास लाख पूर्व नो आयु, साडी तीन सौ धनुष्य नी ऊंची काया॥ ४॥
कौशम्बी नगरी मेघरथ राजा, सुमगलानन्द सुमति जिनराया।
चालीस लाख पूर्व नो आयु, तीन सौ धनुष नी ऊंची काया॥ ५॥
कौशम्बी नगरी श्रीधर राजा, सुखमा दे नन्द पद्म प्रभु जिनराया।
तीस लाख पूर्व नो आयु, अढाई सौ धनुष नी ऊंची काया॥ ६॥
वाणारसी नगरी प्रतिष्ठ राजा, पृथ्वी दे नन्द सुपास जिनराया।
वीस लाख पूर्व नो आयु, दो सौ धनुष नी ऊंची काया॥ ७॥
चन्द्रपुरी नगरी महासेन राजा, लक्ष्मादे नन्द चन्दप्रभु जिनराया।
दस लाख पूर्व नो आयु, डेढ सौ धनुष्य नी ऊंची काया॥ ८॥

---

१ दलाली २ साक्षी। ३ पूर्व—एक आगम प्रसिद्ध सख्या ४ देवी

काकन्दी नगरी सुग्रीव राजा, रामा दे नन्द सुविधि जिनराया।
दोय लाख पूर्व नो आयु एक सौ धनुप नी ऊंची काया ॥ ९ ॥
भद्दिलपुर नगरी दृढरथ राजा, नन्दा दे नन्द शीतल जिनराया।
एक लाख पूर्व नो आयु, नेऊ[1] धनुप नी ऊची काया ॥ १० ॥
सिद्धपुर नगरी विष्णुराजा, विष्णुदे नन्द श्रेयाम जिनराया।
चौरासी लाख वर्ष नो आयु, अस्सी धनुष नी ऊची काया ॥ ११ ॥
चम्पापुर नगरी वसुपूज्य राजा, जयादे नन्द वासुपूज्य जिनराया।
वहतर लाख वर्ष नो आयु, सत्तर धनुप नी ऊची काया ॥ १२ ॥
कपिलपुर नगरी कीर्तिवर्म राजा, सामादे नन्द विमल जिनराया।
साठ लाख वर्ष नो आयु, साठ धनुप नी ऊंची काया ॥ १३ ॥
अयोध्या नगरी सिंहसेन राजा, सुजसा नन्द अनन्त जिनराया।
तीस लाख वर्ष नो आयु, पचास धनुप नी ऊंची काया ॥ १४ ॥
रतनपुर नगरी भानु राजा, सुव्रता नन्द धर्म जिनराया।
वीस लाख वर्ष नो आयु, पैतालीस धनुप नी ऊची काया ॥ १५ ॥
हस्तनापुर नगरी अश्वसेन राजा,अचला दे नन्द शान्ति जिनराया
एक लाख वर्ष नो आयु, चालीस धनुप नी ऊंची काया ॥ १६ ॥
गजपुरी नगरी तिहा सुर राजा, सुरादे नन्द कुन्थु जिनराया।
पिच्चाणु सहस्र वर्ष नो आयु, पैतीस धनुप नी ऊंची काया ॥ १७ ॥
नागपुरी नगरी सुदर्शन राजा, देवकी नन्द अरह जिनराया।
चौरासी सहस्र वर्ष नो आयु, तीस धनुष नी ऊची काया ॥ १८ ॥
मिथिला नगरी तिहा कुम्भ राजा,प्रभावती जाई मल्ली जिनराया।
पचावन सहस्र वर्ष नो आयु, पच्चीस धनुष नी ऊंची काया ॥ १९ ॥
राजगृही नगरी सुमित्र राजा, पद्मावती नन्द वीसवां जिनराया।
तीस सहस्र वर्ष नो आयु, बीस धनुप नी ऊची काया ॥ २० ॥
मथुरा नगरी विजयसेन राजा, विपुलादे नन्द नमि जिनराया।
दस सहस्र वर्ष नो आयु, पन्द्रह धनुष नी ऊची काया ॥ २१ ॥
सोरिपुर नगर समुदविजय राजा, सिवादे नन्द नेमि जिनराया।
एक सहस्र वर्ष नो आयु, दस धनुष नी ऊची काया ॥ २२ ॥

१ नव्वे।

वाणारसी नगरी अश्वसेन राजा, वामादे नन्द पारस जिनराया।
एक सौ वर्ष नो पूरो आयु, नव हाथ नी ऊंची काया ॥ २३ ॥
क्षत्रियकुण्डग्राम सिद्धारथ राजा, त्रिशलादे नन्द वीर जिनराया।
बहतर वर्ष सर्व नो आयु, सात हाथ नी ऊची काया ॥ २४ ॥
सवत उन्नीसे साल पचावन जिन गुण गाय हिया हुलसाया।
'खूबचन्द' कहे नन्दलाल गुरुजी, नीमच माही अति सुख पाया ॥ २५ ॥

: ३५ :

श्री रतनचन्द्जी महाराज का गुणानुवाद

(तर्ज—ते गुरु चरणा रे नमिये)

रतन मुनि गुणीजन रे पूरा, हुआ तप सजम मे शूरा ॥ टेर ॥
गॉव कभेडो रे गिरि मे, तिहा जन्म लियो शुभ घडी मे।
जोवन की वय जद[1] रे आया, मन वैराग मजीठ का छाया ॥१॥
गुरु राजमलजी के पासे, लियो सजम आप हुलासे।
साथे देवीचन्दजो रे साला, ते तो निकल्या दोनू लारा ॥२॥
निज घर नारी रे छोडी, ममता तीन पुत्र से तोडी।
छ वर्ष पीछे रे ते पिण, सब निकल गया तज सगपण ॥३॥
छतीस वर्ष सजम रे पाल्यो, जाने नर भव लाभ निकाल्यो।
अठारा से अठोतर मे जाया, उन्नोसे पचास मे स्वर्ग सिधाया ॥४॥
उगणी से इकोतर के माही, जाको जश कीर्ति मुख गाई।
कभी तो होगा रे तिरना, मुझे नन्दलाल गुरुजी का शरना ॥५॥

: ३६ :

गुरु नन्दलालजी महाराज का गुणानुवाद

(तर्ज—पूज्य मुन्नालालजी नित ध्यावो रे)

अहो म्हारा मन का मनोरथ फलिया रे, नन्दलाल गुरुजी म्हाने मिलिया॥टेर॥
[2]ई तो सजम लेई शुद्ध पाले रे, भव जीवां के घट दया घाले रे।
ई तो न्याय मारग मे चाले ॥ १ ॥

---

१ जब। २ यह तो।

ई तो बावीस परीसा[1] जीते रे, ई तो चाले गुरु की रीते रे।
जाको दिन दया धर्म मे बीते ॥ २ ॥

ई तो पाप अठारहना त्यागी रे, जाकी मिथ्या भ्रमना भागी रे।
जाँकी सुरत मुगत से लागी ॥ ३ ॥

ई तो निर्मल महाव्रत पाले रे, नित दोप बयालीस टाले रे।
ई तो विपय कपाय निवारे ॥ ४ ॥

ई तो अमृत वैन सुनावे रे, भव जीव सुन तृपत थावे रे।
जांको रोम रोम हरपावे ॥ ५ ॥

जाने तजिया सब घर धन्दा रे, जाने मेट्या जगत का फंदा रे।
जाको नाम लिया नव नदा[2] ॥ ६ ॥

सीधो मुगति पथ बतावे रे, जाने सुर नर शीश नमावे रे।
जाका खूबचन्द गुण गावे ॥ ७ ॥

: ३७ :

पूज्य श्री मुन्नालालजी महाराज के गुणानुवाद

(तर्ज—ख्याल)

पूज्य श्री मुन्नालालजी शीतल स्वभावी गुण भण्डार है ॥ टेर ॥
बैठ सभा के बीच मे सरे, करते ज्ञान प्रकाश।
वाणी सुन श्रोता के हृदय, सुमति करे निवास रे॥ १ ॥
गुरु-गम्म करी धारणा पूज्यजी, बहुत सूत्र के जान।
अर्थ पाठ भिन्न भिन्न समझावे, सबको पडे पिछान रे ॥ २ ॥
क्रिया - पात्र बाल ब्रह्मचारी, सागर वर गम्भीर।
क्षम्या भाव शुद्ध संजम पालक, शूरवीर महाधीर रे ॥ ३ ॥
दर्शन किया मन प्रसन्न होत है,शशी सम सोम दिदार।
क्या तारीफ करू पूज्यजी का, गुण है अपरम्पार रे ॥ ४ ॥
सोमवार शुद्ध चौथ इक्यासी, श्रावण मास शुभ आया।
महामुनि नन्दलाल तणा शिष्य, हर्ष हर्ष गुण गाया रे ॥ ५ ॥

---

१ परीपह-कष्ट। २ निधि।

: ३८ :

पूज्य मुन्नालालजी महाराज का गुणानुवाद

(तर्ज—मनडो मोह्यो रे २)

प्यारा लागे रे, प्यारा लागे रे।
श्री मुन्नालाल जी है पूज्य सागे[1] रे॥ टेर॥
रतनपुरी प्रसिद्ध शहर है मुल्को मे सब जाने रे।
जणी[2] नगर के बीच जनम पूज लीनो थाने रे॥ १॥
बाल वय मे संजम पूजजी, पिता संग मे लीनो रे।
उदयसागर के चरणकमल मे चित धर दीनो रे॥ २॥
सेवा करके पूज्यपाद की, सूत्र ज्ञान बहु कीनो रे।
सजम माही लीन चित वैराग्य मे भीनो रे॥ ३॥
सागरसम गम्भीर पूज्य के मान दंभ नही दरसे रे।
वाणी जैसे मधुर आपकी, अमृत बरसे रे॥ ४॥
प्रकृति बडी शान्त आपकी, क्रोध नजर नही आवे रे।
करके दर्शन पूज्यराज का, आनन्द पावे रे॥ ५॥
न्यायवन्त और सरल स्वभावी, ज्ञान गुणाकर भारी रे।
कहाँ तक करूं वखान पूज्यजी की है बलिहारी रे॥ ६॥
जय विजय सदा होवे आपकी, जहां पर आप पधारो रे।
धर्म ध्यान का लगे ठाठ, होवे उपकारो रे॥ ७॥
उगणी से गुणयासी भादवो, मन्दसौर के मॉही रे।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य, ऐसे जोड बनाई रे॥ ८॥

: ३९ :

मुनिराजों के गुणानुवाद

(तर्ज—तू सुन म्हारी जननी आज्ञा देवो तो)

पूज्य मुन्नालालजी मीठी मनोहर वाणी आपकी॥ टेर॥
महीमंडल मे विहार विचरते, बहुत वर्ष मे आये।
ज्ञानवन्त गुणवन्त सन्त, गुणतीस संग मे लाये॥
रतनपुरी महाराज पधारे, रोम रोम हुलसाये रे॥ १॥

---

१ साक्षात् २ जिस।

वादीमानमर्दक स्थेवर, मुनि नन्दलाल विद्वान ।
पंडित है मुनि देवीलालजी, सूत्र रहस्य के जान ॥
भीमराजजी मुनि गुणी, भद्रिक भाव लो मान रे ॥ २ ॥
खूब मुनि सन्तो का दास, मुनि चौथमल विख्यात ।
केसरीमल कस्तूरचन्दजी, सगा है दोनो भ्रात ॥
शंकरलाल और राधाकृष्णजी सेवा करे दिन रात रे ॥ ३ ॥
मोतीलालजी विनयवान और व्यावच मे भरपूर ।
मयाचन्दजी तपस्वी मोटा, कर्म करे चकचूर ॥
प्यारेलाल हजारीमलजी, रहते हुकुम हजूर रे ॥ ४ ॥
कजोडीमल भेरूँलाल और छगनलाल सुखदाई ।
चाँदमल और वृद्धिचन्द खुश तप संजम के माई ॥
रामलाल और नाथूलाल ये आठो ही गुरु भाई ॥ ५ ॥
भेरूँलाल और नाथूलालजी गुलावचन्द गुणवान ।
इक ठाणा सुखलालजी सरे ग ायन-कला निधान ॥
शोभालाल और छव्वालालजी सेंसमल विद्वान् रे ॥ ६ ॥
देवीलाल के सव सन्तो की है सेवा का शौक ।
नाम वतायो अलग अलग गुणतीस सन्त का थोक ॥
वखाण की लग रही झडी वीच शहर चांदनीचौक रे ॥ ७ ॥
तप संजम आचारवन्त मुनिवर का दर्शन पाया ।
साल गुणयासी ज्येष्ठ वदि शुभ अष्टमी का दिन आया॥
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य सतो का गुण गाया रे ॥ ८ ॥

: ४० :

पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का गुणानुवाद

(तर्ज—ख्याल)

पूज्यश्री शीतल चन्द समान, देख लो गुण रत्नो की खान ॥ टेर ॥
जिन मारग मे दीपता सरे तीजे पद महाराज ।
कलूकाल मे प्रगट हुआ एक आप धर्म की जहाज ॥ १ ॥
पूर्व जन्म मे आप पूज्यजी पूरा पुण्य कमाया ।
धन्य छे माता आपकी सरे ऐसा नन्दन जाया ॥ २ ॥

-भव जीवा ने तारता सरे कृपा करी दयाल।
रामपुरे महाराज विराज्या रया कल्पतो काल ॥ ३ ॥
मीठी वाणी सुनी आपकी खुशी हुआ नर नार।
फागुन सुद पूनम के ऊपर घणो कियो उपकार ॥ ४ ॥
उगणी से तिरेसठ[1] मे पूज्यजी ठाणा एक दश आठ।
रामपुरा मे खूब लगाया दया धर्म का ठाठ ॥ ५ ॥
हाथ जोड ने करूं रे विनती अर्जी पै चित दीजे।
बनी रहे सुनजर आपकी दर्शन वेगा दीजे ॥ ६ ॥
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य कहे सुनो गुरुदेवा।
वो दिन भलो ऊगसी स म्हाने मिले आपकी सेवा ॥ ७ ॥

: ४१

तपस्वी श्री बालचन्द्रजी महाराज का गुणानुवाद

(तर्ज—आज रग वरसे रे)

निज गुण परख्या रे, निज गुण परख्या रे।
मुनि बालचन्द्रजी ने नैणा निरख्या रे ॥टेर॥

मालव देश सुशोभित जानो, रतनपुरी सुखदाई रे।
ओस वश मे जन्म लियो जैनी कुल माई रे ॥ १ ॥
जोवन वय मे सुनी पूज्यश्री उदयचन्दजी की वाणी रे।
लियो मुनि पद धार जगत सुपना सम जाणी रे ॥ २ ॥
कियो ज्ञान अभ्यास आप नित इच्छुक शुद्ध क्रियाके रे।
महिमावन्त सन्त गुण आगर पुंज दया के रे ॥ ३ ॥
मग्न सूत्र स्वाध्याय बीच शुद्ध प्रभु जाप के जपीया रे।
चौथ भक्त आदि तप तन से बहु विधि तपीया रे ॥ ४ ॥
मारवाड मेवाड देश वलि मालव मे फिर आया रे।
स्यालकोट जम्मू तक अति उपकार कराया रे ॥ ५ ॥

नोट—इस वर्ष मुनि श्री सन्तोपचन्दजी महाराज, पण्डित मुनि श्रीमगनलालजी महाराज, पण्डित मुनि श्रीप्रतापमलजी महाराज, व्यावची मुनि श्री लक्ष्मीचन्दजी महाराज, पण्डित मुनि श्री हीरालालजी महाराज आदि की दीक्षा हुई।

जैनाचार्य श्री मुन्नालालजी सुयश जग मे पाया रे ।
धर्म प्रेम आपस मे मिल जुल खूब निभाया रे ॥ ६ ॥
पूज्यश्री और तपसीजी के अन्यो अन्य चित पूरा रे ।
सजम का दिया साज अन्त तक रया न दूरा रे ॥ ७ ॥
चौरासी के साल चैत वद चौथ शनीचर आया रे ।
रतनपुरी मे अनशन कर सुरलोक सिधाया रे ॥ ८ ॥
वादी मान मर्दक स्थेवर नन्दलाल महा मुनिराया रे ।
तस्य शिष्य होय मग्न आज गुण गाय सुनाया रे ॥ ९ ॥

: ४२ :

शालिभद्र कुमार

(तर्ज—यू ही मत जावो जमारो हार)

दान सुपातर दिया जिन्होने सफल किया अवतार ।
धन्य श्री शालिभद्र कुमार ॥ टेर ॥

पूर्व जन्म ग्वाल्या के भव मे, निर्धन निर आधार, नीठ कर करता गृह गुजार ।
माता करे मजदूरी लडका, लेकर वाछरु लार, चरावा जावे वन्न मुझार ॥
साझ पड्या पीछा घर आता, इम करता केई दिन जाता ।
जिकर सुनो नर नार ॥ १ ॥

लडके को कोई खीर खिलाई, तृपत हुआ अपार, दौड कर घर आया तत्कार ।
कहे मात से खीर खिला मुझ, वोले वारंवार, मात जव मन में करे विचार ॥
उस लड़के ने जव हठ कीनी, चार जनी मिल वस्तू दीनी ।
हो गई खीर तईयार ॥ २ ॥

माता पुत्र को शीघ्र वुलाकर, थाल परोसी खीर, आप तो गई भरने को नीर ।
उसी वक्त पुन योग पधारे, शूरवीर और धीर, तपस्वी मोटा गुण गम्भीर ॥
घर आये बालक हुलसाई, मुनिराज को खीर वहराई ।
परत किया संसार ॥ ३ ॥

मुनिराज तो गया ठिकाने, मात आई उस वार, देख कर मन मे करे विचार ।
इतनी खीर खा गयो पुत्र, नित काटे भूखअपार, मात की लाग गई [1]टूकार ॥
उसी वक्त मर गया वो कु वर, राजगृही नगरी के अन्दर ।
लिया जिन्होने अवतार ॥ ४ ॥

---

१. नजर ।

जन्म लियो गऊ भद्र सेठ घर, हो रहे मंगलाचार, शहर मे हुलसे बहु नरनार।
जोबनवय मे आया कुंवर को,व्याही बतीसी नार,भोगवे पुण्य तणा फल सार॥
गऊभद्र सेठ जब संजम लीनो, अन्त समय जब अनशन कीनो।
पाया सुर - अवतार ॥ ५ ॥

ज्ञान लगाकर देखा पुत्र पर,जाग्यो मोह अपार,जिन्हो की निशदिन करतो सार।
वस्त्र आभूषण भोजन केरी, तेतीस पेटी सार, देवता मेले नित्य सवार॥
देखो जिनका पुण्य सवाया, श्रेणिक नृप जिन के घर आया।
देखन शाल कुरार ॥ ६ ॥

सब ऋद्धि को जान कारमी,तजी बत्तीसी नार, जिन्होने लिया है सजम भार।
अनशन कर सर्वार्थ सिद्ध पहुँचे,चव लेसी भवपार,जिन्हो का चौपी मे अधिकार॥
'खूबचन्द' कहे मन्दसोर मे, दान सुपातर दो मुनिवर ने।
वेग हुवे निस्तार ॥ ७ ॥

: ४३ :

रहनेमि व राजमती का संवाद

(तर्ज—छोटी कडी)

श्री समुद्रविजयजी के लाल बडे यशधारी, बडे यशधारी।
किम तज कर राजुल नार गये गिरनारी ॥ टेर ॥

तुम सज कर जादव जान व्याह को आये, व्याह को आये।
हो रहे राग रग बहुत लोक हुलसाये।
पशुओ की सुनी पुकार आप जिनराये, आप जिनराये।
हो गये वैरागी बीद[1] सजम चित लाये।
तोरण से रथ को फेर चले असवारी, चले असवारी ॥ १ ॥
राजुलजी सुण्या अवहाल तुरत मुरछानी, तुरत मुरछानी।
सती वेग होय हुशियार बोले इम वानी।
या गुप्त रही न बात जगत सब जानी, जगत सब जानी।
मुझ छाडी विन अपराध सुमत सहलानी।
मेरी आठ भवो की प्रीति पलक ना पारी, पलक ना पारी ॥ २ ॥

---

१ दूल्हा।

सती करके एम विचार मन्न वश कीनो, मन्न वश कीनो।
सती महल मन्दिर सिणगार सभी तज दीनो।
सती लेकर संजम भार काम सिघ कीनो, काम सिघ कीनो।
सती विहार कियो वर्षा से चीर सहु भीनो।
गिरनार गुफा में गई धार हुशियारी, धार हुशियारी ॥ ३ ॥
तिण गुफा माँय रहनेमजी कियो है ध्यानो, कियो है ध्यानो।
राजुलजी नजराँ देख अग कंपानो।
यो कहे नेम राजुलजी शक मत आनो, शंक मत आनो।
श्री समुद्रविजयजी का लघु नन्द मोय जानो।
संसार तणा सुख भोग लेस्या व्रत धारी, लेस्यां व्रत धारी ॥ ४ ॥
पुन राजमती रहनेम को एम समभावे, एम समभावे।
तुम भोग छोड कर योग लियो किस दावे।
थे मोटा कुल का महाराज लाज नही आवे, लाज नही आवे।
मन कर नही वछू इन्द्र यहां खुद आवे।
थाने वार वार धिक्कार वोलो नी विचारी, वोलो नी विचारी ॥५॥
सुन राजमतीजी का वैन नैन शरमाया, नैन शरमाया।
सुवचन मुझे महासतीजी आप फरमाया।
इम धर्म ठिकाने लाय कर्म खपवाया, कर्म खपवाया।
श्री रहनेमी राजुलजी मोक्ष पद पाया।
मुझे लगी आश दिल माँय दर्श करवारी, दर्श करवारी ॥ ६ ॥
मैं अरज करू कर जोड नाथ मोय तारो, नाथ मोय तारो।
तेरे शरणागत आधार कार्य मेरा सारो।
श्री नन्दलालजी महाराज ज्ञान भडारो, ज्ञान भडारो।
तस शिष्य खूबचन्द कहे दास चरणारो।
ये चौपन साल 'छोटीसादडी' स्तवन कियो त्यारी, स्तवन कियो त्यारी ॥ ७ ॥

४४

अरण श्रावक की दृढ़ता

(तर्ज—मत जाना गिरनार नेम फिर क्या करना धन को)

समकित दृढ देखन सुर आया रे, समकित दृढ देखन सुर आया।
धन धन अरणक श्रावकजी शुद्ध धर्म ध्यान ध्याया ॥ टेर ॥

चपा नगरी का बहु वाण्या मिल मनसूबो धारी।
लूण समुद्र मे जहाज कमावा हुआ वेग त्यारी ॥
किराणो लीनो महाराज किराणो लीनो।
वहु जहाज विपे भर दीनो, अपनो भी जापतो कीनो ॥
महूरत शुभ देख्यो चित चाया रे, महूरत शुभ देख्यो चित चाया ॥ १ ॥

जहाज चली समुदर के अन्दर मिल्यो जोग ऐसो।
हुआ उलकापात गगन मे अब कीजे कैसो ॥
घन्न वहु गाजे, महाराज घन्न वहु गाजे।
वहु दिशि वायरो वाजे, आभा मे बीजली छाजे ॥
लोग वहु जहाज मे घबराया रे, लोग वहु जहाज मे घबराया ॥ २ ॥

कर पिशाच को रूप एक सुर ऊभो गगन माही।
वार वार नाचे अति कूदे खडग हाथ माही ॥
लार मुख पडती, महाराज लार मुख पडती।
दोई आख्या लाल फरकंती,मुख अगनी जाल निकलती॥
भुजा दोई ऊची कर आया रे, भुजा दोई ऊची कर आया ॥ ३ ॥

सर्प लपेट्या तन ऊपर रूड माल गला माही।
[1]मनख्या [2]शियाला घुघू[3] कंघ पर लीना बैठाई ॥
कायर जन कपे, महाराज कायर जन कपे।
इम सुर अरणक ने जपे, थने धर्म छोडवो नही कल्पे ॥
छुडावण मैं तुझने आया रे, छुडावण मैं तुझने आया ॥ ४ ॥

मुख से कहे यह जिन धर्म खोटो तो कछू हुवे नाही।
नही तर जहाज [4]तौक ऊचासे नाखू जल माही ॥
अरणक नही बीनो, महाराज अरणक नही बीनो।
सागारी अनशन कीनो, तब अवधिज्ञान सुर दीनो ॥
डग्यो नही मन वचन काया रे, डग्यो नही मन वचन काया ॥ ५ ॥

दृढ धर्मी श्रावक ने जानी उपसर्ग सहु मेट्या।
[5]सागे रूप कर लियो देव खुद चरण आय भेट्या ॥

---

१ विल्लिया २. सियार ३. उल्लू ४. उठाकर ५ साक्षात्।

वहुत हुलसाया महाराज वहुत हुलसाया।
पचवर्ण फूल वरसाया, सवही अपराध खमाया ॥
शक्र इन्द्र गुण थारा गाया रे, शक्र इन्द्र गुण थारा गाया ॥ ६ ॥

दो अमोल कुण्डल की जोडी श्रावक ने दीनी।
देव गयो निज स्थान आप दृढताई देख लीनी ॥
जावरा मांही महाराज जावरा मांही।
खूवचन्द लावणी गाई, मन वाछित सम्पति पाई ॥
चार सन्त चौमासा ठाया रे, चार सन्त चोमासा ठाया ॥ ७ ॥

. ४५ .

कपिल ऋषि का लोभत्याग

(तर्ज—पूर्ववत्)

वदू नित कंपिल ऋषिराया रे वदू नित कंपिल ऋषिराया।
धन्य पुरुष वह जगत बीच निज आतम समझाया ॥ टेर ॥

ब्राह्मण केरी जात उज्जैनी नगरी मे रहतो।
तिहा नृप दो माशा सुवर्ण नित विप्र दान देतो ॥
विप्र की नारी महाराज विप्र की नारी।
कहे पीऊ से वारम्वारी, थे जावो होय झट त्यारी ॥
सुवर्ण दो माशा दे राया रे, मुवर्ण दो माशा दे राया ॥१॥

सुवर्ण काज नारी की कहन से लेवण चित चावे।
दिन ऊगां वह जाय सदा पण हाथ नही आवे ॥
एक दिन भाई महाराज एक दिन भाई।
सूतो थो नीद के मांही, तव अर्द्ध रात्री आई ॥
नीद से चमक उठ धाया रे, नीद से चमक उठ धाया ॥२॥

घर से निकल राह मे जाता गिस्त घेर लीनो।
चोर जान फिर पकड भूप के हाजिर कर दीनो ॥
लग्यो तव धुजने महाराज लग्यो तव धुजने।
तू साच कहदे मुझने, सव गुनाह माफ है तुझने ॥
विप्र से पूछे इम राया रे, विप्र से पूछे इम राया ॥३॥

कंपिल कहे कर जोड भूप से अरजी सुन लीजे ।
सुवरण काज निकला निज घर से चाहे सो कीजे ।।
नृप खुश होई महाराज नृप खुश होई ।
तू माग माग मुख सोई, मैं देवूंगा तुझ वोई ।।
विप्र तव मन मे हुलसाया रे, विप्र तव मन मे हुलसाया ।।४।।
कपिल ब्राह्मण मनमे चिन्तवे, तोलो एक केऊं ।
अधिक अधिक इम लोभ बढाया मैं तो राज माग लेऊं ।।
मन्न सुलटाया महाराज मन्न सुलटाया ।
जिस कारण घर से आया, यह हाल जिन्हो से पाया ।।
चेतन को ज्ञान दे समझाया रे, चेतन को ज्ञान दे समझाया ।।५।।
परिणामो की लहर चढी तब शुक्ल ध्यान ध्याया ।
तत्क्षण राज सभा के माई केवल पद पाया ।।
महोत्सव सुर कीनो महाराज महोत्सव सुर कीनो ।
ओघा पात्र हाजर कर दीनो, मुनिराज होय यश लीनो ।।
पाचसौ चोर को समझाया रे, पाचसौ चोर को समझाया ।।६।।
कर्म खपाई मोक्ष पहुँचा कपिल ऋषिराया ।
जिनके दर्शन काज मेरा तो मन निश दिन हुलसाया ।।
दर्श कब पाऊ, महाराज दर्श कब पाऊ ।
पद पाचो का गुण गाऊ शिवपुर का सुख नित चाऊं ।।
'खूवचन्द' यही मन भाया रे 'खूवचन्द' यही मन भाया ।।७।।

: ४६ :

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती को धर्मोपदेश

(तर्ज—द्रोण)

ब्रह्मदत्त द्वादशमा चक्री राया, महाराज जिन्हो को चित मुनिरायाजी ।
भव सागर तिरन के काज बहुत हितकर समझायाजी ।। टेर ।।
एक कपिलपुर नगरी का बाग के माही, महाराज साधुजी विचरत आयाजी ।
ब्रह्मदत्त चक्री पण आय मुनि को शीश नमायाजी ।।
तब मुनिराज ब्रह्मदत्त को ज्ञान सुनाया, महाराज एक चित ध्यान लगानाजी ।
मैं कहूँ ज्ञान के जोर सभी तुम सुनो बयानाजी ।।
आपा रहे पाचभव लार हेत नही टूटा, महाराजपहले भव दास कहायाजी ।।१।।

दूजा भव मे कालिजर पर्वत माही, महाराज मृग भव दोनो पायाजी ।
वहा आयो पारधी देख साध कर वाण चलायाजी ।।
तिहा थकी मरी ने गगा नदी के काठे, महाराज हंस का भव मे आयाजी ।।
चौथा भव मे चण्डाल तणे घर पुत्र कहायाजी ।।
तिहा कठ कला से राग अलापन करता, महाराज नगर से भूप कढायाजी ।।२।।
आपा दोनो मरन के काज पहाड पै चढिया, महाराज हेटे मुनिराज विराजाजी ।
तिहा सुन्यो आपा उपदेश अपन को गुरु निवाजाजी ।।
आपा दोनो गुरु के पासे सजम लीनो, महाराज, वैक्रय लव्धी पायाजी ।
आपा दोनो विचरता लार शहर हस्तिनापुर आयाजी ।।
तिहा जाता गोचरी पडित देख पिछाने, महाराज,शहर से वाहर कढायाजी ।।३।।
तुम रोष तणे वश धूंवो वैक्रय कीनो, महाराज, भूपति सज कर आयोजी ।
तेहनी रत्ना रानी पग पूज सभी अपराध खमायोजी ।।
तुम देख रानी को रूप मुंह से यो वोले, महाराज, चित मे ऐसी चाऊँजी ।।
मेरी करनी का फल होय मैं भी ऐसी रिद्ध पाऊ जी ।।
मैं वरजा नियाणो मत करो वात नही मानी, महाराज आपा दोई सुरपद पायाजी ।।४।।

इन पाच भवो तक लार रहे थे दोनो, महाराज, छठा भव माही जुदाजी ।
अव मानो हमारी कहन रास्ता लो मुगत का सूधाजी ।।
छ खण्ड का राज तुम तप सजम से पाया, महाराज,कारमी रिध को जानोजी ।
मत राचो भोग के माय पडेगा फिर पछतानोजी ।।
तव चक्रवर्ती यो मुनिराज से वोले, महाराज, आपने क्या फल पायाजी ।५।
मुनिराज कहे पूरव भव करनी कीनी, महाराज, जिन्हो से वहु रिद्ध पायाजी ।
मैंने परभव का डर आन भोग छिन मे छिटकायाजी ।।
मैं संजम लेकर शिवपुर मारग लागो, महाराज तुझे समझावा आयोजी ।
रहो छट्ठा भव मे लार मनुष्य भव दुर्लभ पायोजी ।।
मुनिवर की वात नरपति एक नही मानी, महाराज भोगमे भूप लुभायाजी ।।६।।
चित मुनिराज चारित्तर चोखो पाली, महाराज मुनीश्वर मोक्ष सिधायाजी ।
तिहा नही सोग संताप अचल सुख शिवपुर पायाजी ।।
कोई ऐसे मुनि से निशदिन ध्यान लगावे, महाराज जिन्होसे आनद वरतेजी ।

बहु मिले यश और मान काज सब इच्छित फलतेजी ।।
यो मन्दसोर मे 'खूबचन्द' इम गावे, महाराज तीन सन्त चौमासा ठायाजी ।।७।।

: ४७

श्रेणिक राजा को उपदेश

(तर्ज—द्रोण)

था मगध देश का श्रेणिक भूप मिथ्याती, महाराज,जब से अच्छा दिन आयाजी ।।
कुछ हटा मोहनीय कर्म सुगुरु की सगति पायाजी ।। टेर ।।
कोई दिन नृपति चहुँ विधि सेना सज के, महाराज, सैल करने को धायाजी ।
एक मंडीकुक्ष है बाग वहा खुद चलकर आयाजी ।।
तिहा मुनि अनाथी यतीधर्म के पालक, महाराज, रहे वैराग मे छायाजी ।
बैठे हैं ध्यान मे मगन आप दरखत की छायाजी ।।
तब देख दूर से सुन्दर रूप मुनि का, महाराज, भूपति अचरज पायाजी ।।१।।
नही दूर नही नजदीक मुनि पै आया, महाराज, चरण मे शीश नमायाजी ।
यो पूछे भूप कर जोड आपकी कोमल कायाजी ।।
इस तरुण वय मे जोग लिया किस कारण, महाराज, उत्तर देवे मुनिरायाजी ।
मैं था अनाथ नरनाथ बात सुन विस्मय पायाजी ।।
अब मैं हूँ नाथ तुम करो मौज दुनिया की,महाराज,मनुष्यभव दुर्लभ पायाजी ।।२।।
तू खुद अनाथ अब नाथ बने यहाँ किसका, महाराज, भूप सुन के घबरायाजी ।
मैं युगल देश का नाथ आप कैसे फरमायाजी ।।
असली अनाथ का मतलब तू नही जाने,महाराज, कहू अब सुन महारायाजी ।
मैं नगरी कौशम्बी रहतो बहुत घर मे थी मायाजी ।।
मेरे मात तात घर नार भ्रात भगनी का, महाराज था मुझ पर प्रेम सवायाजी।३।
एक रोज हुई थी तन मे बहुत असाता, महाराज विविध इलाज करायाजी ।
जो कुटुम्ब नाथ होता तो क्यो नही दुःख मिटायाजी ।।
मुझ लेना जोग जो आज रोग मिट जावे, महाराज नियम ऐसा दिल ठायाजी ।
तब उसी रात नरनाथ रोग सब ही विरलायाजी ।।
दिन ऊगा तुरत जब सजम का पद लीना, महाराज जो अब मैं नाथ कहायाजी ।४।
फिर साधु की पहिचान मुनि बतलाई, महाराज बाद उपदेश सुनायाजी ।
तब हुआ नृप को ज्ञान सभी अपराध खमायाजी ।।
उस ही दिन से नृप कुगुरु का सग छोडा, महाराज रग समकित का छायाजी ।

शुद्ध देव गुरु को सेव तीर्थंकर गोत्र उपायाजी ॥
श्री नन्दलालजी मुनि तणाँ शिप्य गावे,महाराज, विचरता सोजत आयाजी ॥५॥

४८ :

कृष्ण की महिमा

(तर्ज—द्रोण)

ये कृष्ण और वलभद्र हुवे दो भाई,
महाराज आय यादव कुल माईजी।
लियो सुयश जग मे खूव फैल रही कीर्ति सवाईजी ॥टेर॥

यह द्वारावती एक नगरी वीर वखाणी,
महाराज, सूत्र मे वर्णन चालेजी।
तिहा कृष्ण भोगवे राज सुखे प्रजा ने पालेजी॥
तिण अवसर विचरत नेमनाथ शिवगामी,
महाराज द्वारिका नगरी आयाजी।
एक सहस्र वन है बाग वहां उतरे जिनरायाजी॥
तब खबर हुई नगरी का लोग हुलसाया,
महाराज परिषदा वन्दन आईजी ॥१॥

श्री कृष्ण भूप पण यही बात सुन पाया,
महाराज तुरत भेरी वजवाईजी।
ले सेना साथ गज हौदे वैठ आवे हुलसाईजी॥
तिहा आय सभा मे नेमनाथ ने भेट्या,
महाराज प्रेम धर शीश नमायाजी।
तिहा सेवा करे कर जोड भूप मन घणा उमायाजी॥
तब नेमनाथ भगवान देशना दीनी,
महाराज सुने सब चित्त लगाईजी ॥२॥

तब वन्दना कर कर गई परिषदा सारी,
महाराज कृष्ण तव अर्ज गुजारीजी।
कहो द्वारावती को हाल प्रभु तुम जानो सारीजी॥
तब नेमनाथ भगवान् भेद सभलायो,

महाराज सूत्र मे शाख वखाणीजी ।
नही कियो यहाँ विस्तार लावणी बढती जाणीजी ।।
तव कृष्ण भूप कर जोड वदना कीनी,
महाराज गया निज नगरी माईजी ।।३।।
तिहा राजसभा मे आप सिंहासन वैठा,
महाराज द्वारिका नगरी माहीजी ।
झट राजपुरुष को भेज वही सव वात जनाईजी ।।
जो भवी जीव ससार कारमो जानी,
महाराज प्रभु पै सजम लेवेजी ।
ताकू तीन खड का नाथ हर्ष से आज्ञा देवेजी ।।
हलु कर्मी होय सो मोह-नीद से जागे,
महाराज पडहो तो दियो वजाईजी ।।४।।
पद्मावती प्रमुख आठ कृष्ण की राण्या,
महाराज कई कुंवराण्या चेतीजी ।
कई राजा राजकुमार सुधारी नर भव खेतीजी ।।
यो धर्मदलाली करी हरि तन मन से,
महाराज सफल नर भव कर लीनोजी ।
होसी द्वादशमा जिनराय सूत्र मे निर्णय कीनोजी ।।
श्री नन्दलालजी मुनि तणा शिष्य गावे,
महाराज जोड चितौड बनाईजी ।।५।।

: ४६ :

सुमति कुमति का निर्णय

(तर्ज—द्रोण)

ये कुमति सुमति का जिकर सुनो सब भाई,
महाराज दोनो अपनी हठ तानेजी ।
है कौन अच्छी और कौन बुरी नर शठ क्या जानेजी ।।टेर।।
मिथ्यात्व महल मे चेतन की मति मोई,
महाराज कुमति कपटण जग माईजी ।
सुमति सुं मिलन दे नाय आप लीनो विलमाईजी ।।

कहे सुमति पिया से थे कुमति का संग गाई,
महाराज रया छो क्यो मुरझाईजी।
खट खंड पति सग लाग जिन्होने दुर्गति पाईजी॥
सुर असुर नर इन्द्र कई ऋपियो को,
महाराज कुमति छल लीना छानेजी॥१॥
कर रोप कुमति यो सुमति सोक से वोली,
महाराज रहम तुझ को नही आयाजी।
जो राजा राजकुमार थी जिनकी कोमल कायाजी॥
हीरा पन्ना माणक मोती सुवर्ण का,
महाराज भर्‌या भंडार सवायाजी।
जिनका निज भवन छुडाय जोग तेने दिलवायाजी॥
ले झोली पातरा घर घर भीख मगाई,
महाराज पडा जो तेरे पालेजी॥२॥
कहे सुमिति कुमति तू सुन काले मुख वाली,
महाराज यहां तू किसे डरावेजी।
जितने दुनिया मे पाप है वे सब आप करावेजी॥
इस भव मे तू प्रत्यक्ष सुख वतावे,
महाराज, पीछे तू नर्क पठावेजी।
विष-मिश्रित का दृष्टान्त साफ ज्ञानी फरमावेजी॥
जो है नुगरा बेसमझ तेरे संग लागे,
महाराज पूछ जाकर पंडिताने जी॥३॥
जो लकापति राजा रावण वलवत की,
महाराज नीयत तैंने पलटाईजी।
श्री रामचन्द्र महाराज की सीता नारी हराईजी॥
तैंने सोने की लका का नाश कराया,
महाराज उसे दिया नर्क पठाईजी।
हो रहा जिनका वद नाम आज दुनिया के माईजी॥
तू बुरी बुरी फिर बुरी अरी दुर्भागन,
महाराज, संत जन तुझे वखानेजी॥४॥

कहे सुमति मैंने पाप्यो का पाप गमाया,
महाराज उन्हो का काज सुधाराजी।
कई मेल दिया सुरलोक कई को मोक्ष मुझाराजी ।।
श्री नन्दलालजी मुनि तणा शिष्य गावे,
महाराज गुरु मेरा है उपकारीजी।
उपदेश-छटा जो सुने उनका दे भर्म निवारीजी ।।
जो गुरु कहे वो सीख हियामे धारो,
महाराज सुमति सुख देगा थानेजी ।।५।।

: ५० .

संयति राजा का त्याग

(तर्ज—द्रोण)

कपिलपुर का था नाम सयति राजा,
महाराज, मोह अज्ञान का छायाजी ।।
जव मिले गुरु गुणवान ज्ञान का रग लगायाजी ।।टेर।।
कोई दिन साथ लेकर चतुरगी सेना,
महाराज, अहेडे करी चढाईजी।
लिये पशु जीव को घेर नृप जाकर वन माहीजी ।।
तब देख दूर से एक मृग का टोला,
महाराज कुछ भी नही सोचे अन्यायोजी।
वेरहम वाण दिया फैंक बीध दी जान पराईजी ।।
।।शेर।। उस केसरी वन मे द्रुम की शीतल छाया,
जहाँ खडे ध्यान धर गृधभाली मुनिराया।
सहे सीत ताप जिन की है कोमल काया,
रहे श्रमण धर्म मे लीन सदा मन भाया ।।
।।मिलत।। वो मृग भाग कर उसी स्थान पर आया,
महाराज वहा पर गिर गई कायाजी ।।१।।
पीछे से अश्व चढ भूप वही चल आया,

महाराज जो वही मृग दर्शायाजी ।
फिर देखा मुनि को उसी वक्त भूपति भय पायाजी ।।
तव खडा खडा महिपाल विचारे मन मे,
महाराज कप रही जिनकी कायाजी ।
यह हैं तो मुनि तेजवान करू मैं कौन उपायाजी ।।

।।शेर।। सुख इच्छुक निश्चल धार अश्व छिटकाया,
कर जोड तुरत नजदीक मुनि के आया ।
यो कहे जो कुछ मैंने अपराध कमाया,
सव माफ करो महाराज शरण मे आया ।।
।।मिलत।। मैं नही जानू यह होगा मिरग सतो का,
महाराज पता यह तो अव पायाजी ।।२।।

मुनिराज ध्यान मे मगन न कुछ भी बोले,
महाराज महीपति फिर भी डरियाजी ।
मैं मूढ अज्ञानी जीव आप छो ज्ञान का दरियाजी ।।
कंपिलपुर का जो मैं हूँ सयति राजा,
महाराज करो करुणा इस विरियाजी ।
ज्यो होवे मुझेसतोष आज सव ही दुख टरियाजी ।।

।।शेर।। तव ध्यान खोल मुनि मधुर वचन फरमावे,
दिया अभयदान मुझ से तू भय मत पावे ।
उत्तम नर भव हर वक्त हाथ नही आवे,
प्रजापालक हो क्यो पर जान सतावे ।
।।मिलत।। दे अभयदान तू भी इन जीवो को,
महाराज जगत मे ले ले भलायाजी ।।३।।

फिर मुनि कहे सुन नृप एक चित धर के,
महाराज सोच तू कहा से आयाजी ।
जनमे सो मरे जरूर सूत्र मे जिन फरमायाजी ।।
तेरा राज पाट घर ठाठ अंतेवर सेना,
महाराज धरी रहेगी सब मायाजी ।
जो अपनी अपनी मान यो ही सव छोड़ सिधायाजी ।।

॥शेर॥ ये पुण्य पाप दो चीज साथ आवेगा,
तू कंचन - वर्ण शरीर छोड जावेगा।
दुनिया गुण अवगुण होगा सो गावेगा,
जो किया यहा का आगे फल पावेगा॥

॥मिलत॥ सुन सन्तो का उपदेश यो बोले,
महाराज मैं तो यो ही जनम गवायाजी ॥४॥

अब कृपा कर मुझ भव सागर से तारो,
महाराज हुआ महीपति वैरागीजी।
तव मिट गयो तिमिर अज्ञान सुरत मुगति से लागीजी॥
यह किनकी रय्यत और मैं हूँ किनका राजा,
महाराज विचारे यो वडभागी जी।
सुपना ज्यूं जान ससार राज रिद्धि छिन मे त्यागीजी॥

॥शेर॥ गृद्धभाली जैसा गुरुदेव पुण्य से पाया,
फिर आप मुनि होई राज ऋषि कहलाया।
दिन रात गुरु का जो कुछ हुक्म बजाया,
कर करके महेनत गुप्त ज्ञान धन पाया॥

॥मिलत॥ फिर आज्ञा लेकर हो गये एकल बिहारी,
महाराज धर्म - मारग दीपायाजी॥५॥

मारग मे क्षत्रिय राजऋषीश्वर मिलिया,
महाराज मुनि का देख दीदाराजी।
मुनि कहो आपको नाम कौन गुरु देव तुम्हाराजी॥
गृधभाली मुनि मेरे हैं धर्म - आचारज,
महाराज संयति नाम हमाराजी।
मैंने सुनके सत्य उपदेश किया त्यागन ससाराजी॥

॥शेर॥ इतनी सुन क्षत्रियराज ऋषि फरमावे,
सुख से विचरो मुनि आप जिधर दिल चावे।
दुनिया मे बहुत कुपथ जो चले चलावे,
उनकी सगति हरगिज होनी नही पावे॥

॥मिलत॥ वैराग सहित दृढ रहो सदा संजम मे,
महाराज करो पराक्रम मन चायाजी ॥ ६ ॥

फिर सुनो मुनि हुये पहले जिन - शाशन मे,
महाराज भरत सागर महारायाजी ।
मघवाजी सनतकुमार रूप अति सुन्दर पायाजी ॥
श्री शान्ति कुन्थु अरनाथ पुण्य प्रतापी,
महाराज छे छे प्रभु पदवी पायाजी ।
महापदम और हरिसेन करी एक छत्तर छायाजी ॥

॥शेर॥ दशमा चक्री जयसेन नाम कहलाया,
जाने छे छे खण्ड का राज तुरत छिटकाया ।
लेकर संजम फिर आतम जोर लगाया,
यो कर्म काट केवल ले मोक्ष सिधाया ॥

॥मिलत॥ तज दिया राज भंडार दशारण भद्दर,
महाराज मान जाका रहा सवायाजी ॥ ७॥

प्रत्येकवुद्ध करकड़ू परमुख राजा,
महाराज राज पुत्रो को दीनाजी ।
हुवे ऐसे ऐसे भूप जिन्होने संजम लीनाजी ॥
कर अष्ट कर्म को अत मोक्ष पद पाया,
महाराज काज आतम का कीनाजी ।
मुनि निश्चल रहना आय मिला जिन मारग भीनाजी ॥

॥शेर॥ देकर शिक्षा कर गये विहार ऋषिराया,
शुद्ध जोग पाय मुनि संयति मोक्ष सिधाया ।
एक निम्वाहेडा शहर सुनो सव भाया,
उगणीसे सित्तर के साल चौमासा ठाया ॥

॥मिलत॥ नन्दलाल मुनि है गुणी ज्ञान के सागर,
महाराज सत्य उपदेश सुनायाजी ॥ ८ ॥

: ५१ :

भृगु पुरोहित व इक्षुकार राजा

(तर्ज—द्रोण)

जो जान लिया ससार का सगपण कच्चा,
महाराज, कहो फिर कैसे रहेगाजी।
तब छाया जिगर वैराग तो आखिर संजम लेगाजी ।।टेर।।
था राजपुरोहित इक्षुकार नगर का वासी,
महाराज, जिनके यस्सा घर नारीजी।
फिर युगल पुत्र पुण्यवान प्राण वल्लभ सुखकारीजी ।।
धन का पूरण भंडार बहु विध भरिया,
महाराज, कमी जिनके कुछ नाहीजी।
तब पुरोहित को यह बात याद पहले की आईजी ।।
।।शेर।। एक दिन जैन के साधु कही मुझ ऐसी,
क्यों फिकर करे तूं पुत्र तणा फल लेसी।
चाहे जितना करो उपाय कभी नही रहसी,
वो बालपणे मे आखिर संजम लेसी ।।
।।मिलत।। ये मोटी वस्ती जान विचरता साधु,
महाराज, आया विन कैसे रहेगाजी ।। १ ।।
यो करके हृदय विचार पुत्र के कारण,
महाराज, वन्न मे वास वसायाजी ।।
निज नन्दन को बुलवाय पुरोहित कैसे भरमायाजी ।।
कोई दिन कोहा तुम देखो जैन के साधु,
महाराज, नजर उनके मत आनाजी।
दिल चाहे वहा चुपचाप हो के जल्दी छिप जानाजी ।।
।।शेर।। रहे सीस उघाडो मूंडे मुंहपति बाके,
वो वांचे सरस वखान दया मुख भाखे।
कर मे झोली फिर काख मे ओघो राखे,
नित चाले हलवी चाल रोश नही जांके ।।
।।मिलत।। तुम भूल चूक उनकी सगति मत करना,
महाराज, तुम्हे भारी दुःख देगाजी ।।२।।

वे गुप्तपने शस्तर झोली मे राखे,
महाराज चाकू और छुरी कटारीजी।
बालक को पकड़ सिताव लेते वे गहना उतारीजी ।।
पुरोहितजी तो बहकाया कसर नही राखी,
महाराज, टाल्यो ना टले कठेईजी।
पण पथ भूल कर सत तुरत आ गया वठेईजी ।।
।।शेर।। तब देख मुनि को भग्गु पुरोहित घबराया,
मैं जिनके कारण शहर छोड यहा आया।
इनको यहा का शठ मारग कौन बताया,
जो खैर हुआ सो हुआ मन्न समझाया ।।
।।मिलत।। अब ऐसा करूं उपाय दाव नही लागे,
महाराज, बात सब बनी रहेगाजी ।।३।।
तब भग्गु पुरोहित झट उठ मुनि पै आया,
महाराज, अरज करके घर लायाजी।
सब विधि सहित निर्दोष आहार पानी वहरायाजी ।।
कर जोड़ कहे तुम सुनो अरज गुरु ज्ञानी,
महाराज, मति दूजे घर जावोजी।
इसी गली मे होकर आप यहां से वेग सिधावोजी ।।
।।शेर।। मेरे युगल पुत्र नादान समझते नाही,
अविनीत कुपातर सन्तो को दुखदाई।
मैंने पूर्वजन्म मे कीनी पाप कमाई,
जो ऐसे पुत्र मेरे घर जनमे आई ।।
।।मिलत।। सुन बात गली मे तुरत साधुजी चाल्या,
महाराज, यहाँ कुछ लाभ मिलेगाजी ।।४।।
तब दोनो पुरोहित का पुत्र खेलता रमता,
महाराज, गली के सन्मुख मिलियाजी।
अहो बंधव नजर लगाव यह कुण आवे चलियाजी ।।
तब देख मुनि को तुरत वेहूँ डर भागा,
महाराज, पथ जगल को लीनोजी।
एक मोटो दरखत देख ऊपर विश्रामो कीनोजी ।।

॥शेर॥ तिण दरखत नीचे दोनो मुनि चल आया,
शुद्ध क्रिया करके बैठे शीतल छाया।
तिहां दोनो भाई की थर थर कपे काया,
पण सांच झूंठ का हाल भेद नही पाया ॥
॥मिलत॥ ऊपर से नीचे देखे एक दृष्टि से,
महाराज, तमस अब दूर हटेगाजी ॥५॥

मुनिराज, करे अब आहार बहुत यत्ना से,
महाराज, प्राणी का प्राण उगारेजी।
यह दयावान गुणखान मनुष्य को कैसे मारेजी ॥
ऐसे तो मुनि हमने पहले कहा देखे
महाराज, ध्यान चोखो चित आण्योजी।
तब जातीसुमरण ज्ञान पाय पूरब भव जाण्योजी ॥
॥शेर॥ उतरे नीचे मुनिवर को शीश नवाया,
अहो भाग्य आज जगल मे दर्शन पाया।
क्या करें गुरु मा बाप हमे बहकाया,
जो तुम से डर के यहा भाग चल आया ॥
॥मिलत॥ गृहवास त्याग तुम पासे सजम लागा,
महाराज, कौन अब रोक सकेगाजी ॥६॥
कर नमस्कार झट मात तात पै आया,
महाराज, गलत हम को भरमायाजी।
वो निर्दोषी मुनिराज जिन्हो मे दोप बतायाजी ॥

(तर्ज—एक कडी)

साधुजी सकल विचारी, तेतो पूरण पर उपकारी हो ॥
पिताजी गजब करी ॥१॥
वे बोले निर्वद्य वाणी, लेवे निर्दूषण अनपाणी हो ॥ २ ॥
लाधे अनलाधे समता राखे, पण दीन वचन नही भाखे हो ॥ ३ ॥
ना किण ने दुख उपजावे, ते तो पाप लग्या पछतावे हो ॥ ४ ॥
गुरु गुणवन्त विवेकी, मैं तो प्रत्यक्ष लीनो देखी हो ॥ ५ ॥

(तर्ज—द्रोण)

अब दो आज्ञा मैं सजम को पद लूंगा,
महाराज नही तुम से ललचाताजी।
है कौन पुत्र कौन मात तात झूठा सव नाताजी ॥
॥शेर॥ सुन वात पुरोहित के आसू आगये नैना,
यो कहे पुत्र से तात मोह वश वेना।
नित नये करो शृङ्गार पहनो गहना,
तुम गृहवाम मे पालो धर्म की ऐना ॥
॥मिलत॥ फिर तुम साथे मैं भी संजम लेऊँगा,
महाराज ऐसी फिर कौन कहेगाजी ॥७॥
कहे पुत्र धर्म में ढील कभी नही करना,
महाराज, तात हो गये वैरागीजी।
तब जस्सा नामा नार पति से वोलन लागीजी ॥
ये दोनो पुत्र तो निश्चय संजम लेगा,
महाराज होन गत कौन मिटावेजी।
जो जैन मुनि के बैन कहो खाली किम जावेजी ॥
॥शेर॥ नही माने पुरोहित पुरोहितानी मन्न विचारे,
मुझ पति पुत्र निज आतम कारज सारे।
घर माही रह कर यो ही जनम कौन हारे,
मुझे लेना सजम भार इन्हो के लारे ॥
॥मिलत॥ धन माल त्याग कर चारो ही सजम लीनो,
महाराज कीर्ति क्यो नही पसरेगाजी ॥ ८ ॥
तब इक्षुकार नृप भग्गू पुरोहित को छंड्यो,
महाराज सभी धन माल मगायोजी।
भर भर गाडा के माय लाय भडार नखायोजी ॥
ये सुनी वात रानीजी कहे राजा से,
महाराज, काम आछो नही कीनोजी।
इन बाता शोभा नांय दान दे पाछो लीनोजी ॥
॥शेर॥ यो बिना विचारे बात हमे क्यो कहवो,
तो जान बूझ कर फिर घर मे क्यो रहवो।

सब विषय भोग तज जल्दी संजम लेवो,
हुवे आतम का कल्याण धर्म सुध सेवो ।
॥मिलत॥ ऐसा तो वचन हलुकर्मी जीव को लागे,
महाराज, पाप से वही डरेगाजी ॥ ६ ॥
कमलावती रानी संजम की दिल धारी,
महाराज, भूप निज मन समझावेजी ।
एक धर्म विना कोई और जीव के सग न आवेजी ॥
यों कर विचार राजा रानी मिल दोई,
महाराज, भोग छिन मे छिटकायाजी ।
अनुक्रमे छेहू जीव वास मुक्ति का पायाजी ॥
॥शेर॥ हो गये सिद्ध भगवान भजो सब भाई,
जिनके सुमरण से कमी रहे कुछ नाई ।
ये दिल्ली शहर उगणीसे सडसठ माई,
मगसर बुध वारस के दिन जोड बनाई ॥
॥मिलत॥ श्री नन्दलालजी मुनि तणा शिष्य गावे,
महाराज, गुणी को ज्ञान लगेगाजी ॥१०॥

: ५२ :

थावच्चा पुत्र

(तर्ज—लगडी)

जो होवे पुन्यवान जीव, उपदेश उसी को तुरत लगे ।
ससार त्याग के मुनि पद धार मोक्ष के पंथ लगे ॥टेर॥
सोरठ देश द्वारिका नगरी धनपति देव बसाई है ।
सुरलोक सरीखी सूत्र मे वरणन कर दर्शाई है ॥
करे राज नदजी के लाल आनन्द झडी बर्साई है ।
सब अर्द्ध भरत मे अखंडित आण जिन्हो की छाई है ॥
॥शेर॥ उस वक्त श्री नेमजी करते हुवे उपकारजी ।
सहस्र अठारा साथ ले, मुनिराज का परिवारजी ॥
नन्दन वन उद्यान मे जहा द्वारिका के बहारजी ।
प्रभुजी पधारे विचरते सुर बोले जय जयकारजी ॥
॥छोटी कडी॥ हुई खबर शहर मे बहु जन आनन्द पाया ।

जिनराज चरण भेटन को मन्न उमाया।
वस्त्राभूषण सज शृङ्गार सवाया॥
सव एक दिशी मे मिल मिल वन्दन धाया।

॥द्रोण॥ सुनकर कोलाहल शब्द कृष्णजी सोचे,
महाराज तुरत भेरी वजवाईजी।
ले साथ वहुत परिवार आया नन्दन वन मांईजी॥
श्री नेमनाथ जिनवर का दर्शन पाया,
महाराज चरन वन्दे वन मांईजी।
करे सन्मुख सेवा आप वैठ, परिषदा के माईजी॥

॥पणिहारी॥ थावच्चा कुंवर भी आविया, सुनो गुणी जन हो २
इब्भ सेठा को नद, गुणी जन हो॥१॥
वेकर जोड जिनद ने, सुनो गुणी जन हो २
वैठा शीश नमाय गुणी जन हो॥२॥
दीनी धर्म देशना सुनो गुणी जन हो २
श्री नेमनाथ भगवान गुणी जन हो॥३॥
प्रसन्न हुई सारी सभा सुनो गुणी जन हो २
खुलिया अन्तर नैन गुणी जन हो॥४॥

॥मिलत॥ वाह वाह वाणी जिनन्द आप की,
नर नारी गुण करन लगे॥१॥
वाणी सुन सव गई परिषदा कुंवर थावच्चा अर्ज करे।
प्रभु संजम लेसु माता से मागू आज्ञा जाऊँ घरे॥
जिम सुख हो तिम करो धर्म मे ढील किया नही गर्ज सरे।
करि तुरत वन्दना आया निज भवन माता के पांव परे॥

॥शेर॥ वाणी श्री जिनराज की सुनी आज मैंने मातजी।
साफ झूठा संसार ये स्वप्ना सम दर्शातजी॥
संयम की मुझ आज्ञा दीजे जननी खुशी के साथजी।
जो जो घड़ी अनमोल ये जावे सो फिर नही आतजी॥

॥छोटी कडी॥ ये सुनी वात जब मात तुरत मुर्छाई।
हुई सावचेत अन्तरमूहूर्त के मांई॥

गद्‌गद बोले यो नैना जल वर्षाई।
मत काढो बात मैं जीऊ जहां लग ताई॥

॥द्रोण॥ थावच्चा कुंवर कर जोड अभी मुख बोले,
महाराज, काल यह किस दिन आवेजी।
मैं नही जानु यह बात, मात पहले कुण जावेजी॥
बत्तीस नार इभ्भ सेठो की परणाई,
महाराज, रूप रभा दर्शाविजी।
धन का भरिया भंडार रिद्धि छोडी किम जावेजी॥

॥पणिहारी॥ भोग अशुची अशाश्वता, सुनो गुणी जन हो २
जो राचे मूढ गंवार गुणी जन हो॥१॥
पाई स्वार्थ की साहबी सुनो गुणी जन हो २
रत्न जडित का महल गुणी जन हो॥२॥
साधपणो नही सोहिलो गुणी जन हो २
चलनो खाडा की धार गुणी जन हो॥३॥
करना मुश्किल लोच का सुनो गुणी जन हो २
यह है सुकुमार शरीर गुणी जन हो॥४॥

॥मिलत॥ भुजा करि भव - सागर तिरना,
सूरवीर कोई पार लगे॥२॥
सुनो मात जो सुख अभिलाषी, तिन को कठिन दे दर्शाई।
सजम मे शूरा, उनको तो कुछ भी है मुश्किल नाई॥
दे दे न्याय थावच्चा माता अच्छी तरह लिया समझाई।
पर एक न मानी, पुत्र को आखिर आज्ञा फरमाई॥

॥शेर॥ भेटना हरिराय के नजराना कीना जायजी।
कहो मातजी किम आवीया दीजे दर्शायजी॥
प्राणप्यारा पुत्र आज गया वदवा जिनरायजी।
वाणी सुनता प्रभु की वैराग्य दिल मे छायजी॥

॥छोटी कडी॥ मैं दिया बहुत दृष्टात कसर नही राखी।
नही माना एक समझा समझा कर थाकी॥

फिर दीनी आज्ञा उसको संजम लेवा की।
है मुझ इच्छा दीक्षा महोत्सव करवा की ।।

।।द्रोण।। मैं छत्र चवर के काज राज पै आई,
महाराज, लवाजमा भी वरुशावोजी।
सुन वात कहे हरिराय मात अपने घर जावोजी ।।
तुझ पुत्र को दीक्षा महोत्सव मैं करसूं,
महाराज, और होय सो फरमावोजी।
करूं सफल मनोरथ आज कोई शका मत लावोजी ।।

।।पणिहारी।। राजन पति महाराजवी, सुनो गुणी जन हो २
वस यही अरज महाराज, गुणी जन हो ।।१।।
इम कह निज घर आगई, सुनो गुणी जन हो २
तव पीछे से हरिराय, गुणी जन हो ।।२।।
बहु परिवार से परवरया, सुनो गुणीजन हो २
हो गज हौदे असवार गुणी जन हो ।।३।।
थावच्चा माता के घरे, सुनो गुणी जन हो २
आया त्रिखंडका नाथ गुणी जन हो ।।४।।

।।मिलत।। दिया मात सन्मान जहां पर गोविन्दके गुण होन लगे ।।३।।
लाल बुलाकर लेई गोद मे शिर पर हरिजी हाथ धरे।
संजम मत लेवो, भोगवो रिद्ध मौज मे रहो घरे ।।
द्वारिका नगरी स्वर्ग सरीखी, देखे जिन्हो का नैन ठरे।
जहा खुशी तुम्हारी, करो दिल चाहे कोई नही दखल करे ।।

।।शेर।। सुख से वसो नगरी विषे तुम मुझ भुजा की छायजी।
कहो साफ दिल खोल के मुझ से तू मत शरमायजी ।।
जो कुछ भी तकलीफ तो तुम दीजिये दर्शायजी।
जिसका उपाय वह मैं करूँ सव रोग ही मिट जायजी ।।

।।छोटी कडी।। तव कहे कुवर कर जोड अरज सुन लीजे।
मेरे जन्म मरण के दुःख दूर कर दीजे ।।
जो ऐसी दवा देने मे ढील नही कीजे।
मैं मानूगा उपकार आप यश लीजे ।।

॥द्रोण॥ जो घर बैठा सहज ही रोग मिट जावे,
महाराज, फिर सजम लेनाजी।
क्षुधादिक जो बावीस, परीषह नाहक मे सहनाजी ॥
सुर असुर मनुष्य की भी ये सामर्थ नाई,
महाराज, कृष्ण यो बोले बैनाजी।
निज करनी के अनुसार मिटे सब दुख की सेनाजी ॥

॥पणिहारी॥ इसीलिये महाराजवी, सुनो गुणी जन हो २
मैं लेऊ सजमभार गुणी जन हो ॥१॥
कर्म रोग सब मेटने, सुनो गुणी जन हो २
मैं जाऊं मोक्ष मझार गुणी जन हो ॥२॥
मुझको मना मत कीजिये, सुनो गुणी जन हो २
दो आज्ञा बकसाय गुणी जन हो ॥३॥
इतनी बात सुनी हरि, सुनो गुणी जन हो २
तब जान्यो दृढ वैराग्य गुणी जन हो ॥४॥

॥मिलत॥ जिम सुख हो तिम करो लाल हरि वार वार यो कहन लगे ॥४॥

आज्ञाकारी पुरुष भेजकर कृष्ण पडहो दियो बजवाई।
यह कुंवर थावच्चा लेवे वैराग्य [1]छती रिध छिटकाई ॥
इनके साथ नरपति आदि दे सेठ और सारथवाई।
कोई सजम लेवे हरि का साफ हुकम उसके ताई ॥

॥शेर॥ जो जो स्वजन तज नीकले पिछले की सार सम्भालजी ।
यथा योग्य जिम सुख हुवे तिम करसी श्री गोपालजी ॥
सहस्र पुरुष त्यारी हुवे मोह ममत दीनो टालजी।
कृष्णजी महोत्सव कीयो बड़ी धूम से तत्कालजी ॥

॥छोटी कडी॥ श्रीनेमनाथ जिनवर से सजम लीना।
दुनिया का झगडा सभी दूर कर दीना ॥
छति रिद्धि त्यागकर उत्तम कारज कीना।
करी धर्म दलाली लाभ हरिजी लीना ॥

॥द्रोण॥ कर विनय गुरु से चौदह पूरब भणीया,

---

१. छती–मौजूदा ।

महाराज आज्ञा जिनवर की पायाजी ।
एक सहस्र शिष्य ले लार विहार कीनो मुनिरायाजी ॥
जहा गये तहा जय विजय धर्म की कीनी,
महाराज जगत मे सुयश पायाजी ।
फिर अनशन कर पुण्डरीक गिरि से मुक्ति सिधायाजी ॥

॥पणिहारी॥ छठे अंग[1] अधिकार छे सुनो गुणी जन हो २
पंचम अध्ययन मुझार गुणी जन हो ॥१॥
ते अनुसारे लावणी सुनो गुणी जन हो २
करी पच रंगत मे त्यार गुणी जन हो ॥२॥
महा मुनि नन्दलालजी सुनो गुणी जन हो २
गुरु दीनो हुकम फरमाय गुणी जन हो ॥३॥
संवत उनीसे इकोतरे सुनो गुणी जन हो २
कियो चार ठाणा चौमास गुणी जन हो ॥४॥
॥मिलत॥ देश हाडोती कोटा शहर जहा धर्म ध्यान का ठाट लगे ॥५॥

५३ .

प्रद्युम्नकुंवर चरित्र

(तर्ज—द्रोण)

यह प्रजन कुंवर की प्रगट सुनो पुन्याई,
महाराज मात रुकमणि का जायाजी ।
ज्याने भोग छोड लिया जोग रोग कर्मो का मिटायाजी ॥टेर॥

एक सोरठ नामा देश द्वारिका नगरी,
महाराज राज पाले हरि रायाजी ।
था तीन खड का नाथ जिन्हो का पुण्य सवायाजी ॥

रुकमणि आप की प्रेमवती पटराणी,
महाराज जिन्हो का नन्दन नीकाजी ।
तसु प्रजन कुंवरजी नाम हुआ जादव कुल टीकाजी ॥

---

१. ज्ञाताधर्मकथा नामक शास्त्र ।

निज मात बात सगपण की दिल मे धारी,
महाराज दूत को तुरत बुलायाजी ।।१।।
तूं जा कुन्दनपुर राय रुकमिया पासे,
महाराज युगल कर जोड वधानाजी ।
अरु कुशल क्षेम है सभी यहाँ का हाल सुनानाजी ।।
फिर कहिजे वल्लभ वेदरवी तुझ कुवरी,
महाराज तुम्हे इतनो यश लीजोजी ।
यो कही आपकी बहिन प्रजन कुवर को दीजोजी ।।
ले समाचार कुन्दनपुर दूत सिधाया,
महाराज भूप को आय वधायाजी ।।२।।
दिया पत्र नृप के हाथ प्रेम से खोला,
महाराज वांचता रीश भराईजी ।
रे दुष्टन! तुझको पत्र भेजता लाज न आईजी ।।
जब चन्देरी को शिशुपाल नृप मोटो,
महाराज जिन्हो से करी सगाईजी ।
वो आया परणवा काज युक्ति से [1]जान सजाईजी ।।
मैं किया बहुत भगिनी का हर्ष वधावा,
महाराज जिन्होने कपट कमायाजी ।।३।।
मिल भुवा भतीजी गुप्त परणे गोविन्द को,
महाराज बाग मे लिया बुलाईजी ।
वहा पूजा के [2]मिस जाय आप हरि संग सिधाईजी ।।
कर गई फजीता दुर्जन लोग हसाया,
महाराज वश मे छाप लगाईजी ।
केई शूरवीर सरदार जिन्हो की बात गमाईजी ।।
वो मेरी तरफ से मर गई बहिन रुकमणि,
महाराज रोप कर शब्द सुनायाजी ।।४।।

---

१. बरात २ बहाना

मुझ इष्ट कान्त वल्लभ बेदरवी कुंवरी,
महाराज डूम को दू परणाईजी ।
पण भूल चूक मैं कभी न दूं यादव कुल माहीजी ।।
यूं कही दूत को तुरत विदा कर दीना,
महाराज द्वारिका नगरी आयाजी ।
रुकमणी पूछे धर प्रेम दूत सब हाल सुनायाजी ।।
यो सुणी पिहर की वात हरि पटराणी,
महाराज केइ मन धड़ा उठायाजी ।।५।।

या बात सुण्या बिन किम रहे भामा राणी,
महाराज और जादव की नारीजी ।
जो जाएगा तो आज हसी करसी गिरधारीजी ।।
यो बैठी करत विचार महल के मांही,
महाराज कुंवर इतने चल आयाजी ।
दो हाथ जोड धर प्रेम मात को शीश नवायाजी ।।
क्यो फिकर करो मुझ मात वात फरमावो,
महाराज, करूं सब मन का चायाजी ।।६।।

तब माता रुक्मणी कही हकीकत सारी,
महाराज, कुवर यू कहे मैं जाऊंजी ।
जो है मामा को वचन वोही मैं पार लगाऊंजी ।।
मुझ मामा की जो है बेदरवी कुवरी,
महाराज, परण कर निज घर आऊ जी ।
सुण मात आप के लाय बीदणी[1] पाय लगाऊ जी ।।
कर विनय सर्व ही मन का सोच मिटाया,
महाराज, कुंवर अब करत चढायाजी ।।७।।

एक शाम्भ कुंवर श्री जाम्ववती का जाया,
महाराज, जिन्हो से राय मिलाईजी ।
है खीर नीर सम वीर दोउन के प्रीति सवाईजी ।।

---

१. वहू ।

मिल सलाह करी यूं युगल वीर की जोडी,
महाराज, तुरत कुन्दनपुर आयाजी।
विद्या के जोर से आप डूम का रूप बनायाजी॥
केइ घोडा ऊंट और साथे पाडा बकरा,
महाराज, बाग मे डेरा लगायाजी॥८॥

तहां दोनो भाई ऊठे आप मध्य राते,
महाराज वशी और वीणा बजावेजी।
छः राग और छत्तीस रागिनी मिल कर गावेजी॥
सुन राग कई जगल का जीव लुभाना,
महाराज, राग पसरयो पुर माईजी।
सब राजादिक नर नार सुने एक धुन्न लगाईजी॥
परभात हुआ तो मुख मुख शब्द उचारे,
महाराज, राग मे खूब रिझायाजी॥६॥

यो चारो दिशि मे फिरता राग अलापे,
महाराज, कौन यह कहा पर गावेजी।
वन माय ढूंढता फिरे लोक पण भेद न पावेजी॥
इम करता इक दिन कुन्दनपुर मे आया,
महाराज, फिरे सग लोग लुगाईजी।
या सुनी बात नरनाथ डूम को लिया बुलाईजी॥
तिहा बैठा जाजम डाल भूप के आगे,
महाराज, मनुष्य नही जाय गिनायाजी॥१०॥

वो बेदरवी कुंवरी पिण देखन आई,
महाराज, तात लै गोद बिठाईजी।
हरिनन्द देख कर रूप मगन हो गयी मन माईजी॥
तब प्रजन कुंवरजी तान मिलाकर गावे,
महाराज, राग मे राग सुनावेजी।
एक समझे कुंवरी सुने लोक पिण भेद न पावेजी॥

॥पणिहारी॥ प्रजन कुंवर कहे तान मे सुन कुंवरी ए २
हूँ नही ढोली दमाम कुंवरी ए॥१॥

देवपुरी सम द्वारिका सुन कुंवरी ए २
तिहा राज करे घनश्याम कुंवरी ए ।।२।।
माता रुकमणी माहरी सुन कुंवरी ए २
उनको नन्दन जाण कुंवरी ए ।।३।।
जादव वश वडो घणो सुन कुंवरी ए २
तिऊ खण्ड मे आण कुंवरी ए ।।४।।
जो मन होवे ताहरो सुन कुवरी ए २
तो मुझे करो भरतार कुंवरी ए ।।५।।
तुम हम जोडी सारखी सुन कुवरी ए २
तुष्ट हुआ करतार कुवरी ए ।।६।।
मेरे जिसा वर नही मिले सुन कुवरी ए २
सर्व विद्या परवीण कुंवरी ए ।।७।।
जो चूकी इण अवसरे सुन कुंवरी ए २
तो [1]झूरेगी दिन रेण कुंवरी ए ।।८।।
डावा डोल मन क्यो करे सुन कुवरी ए २
तूं मन को भर्म मिटाय कुवरी ए ।।९।।
डूम बना तुझ कारणे सुन कुंवरी ए २
आया रूप छिपाय कुवरी ए ।।१०।।
।।मिलत।। विद्या से आपनो रूप लिया पलटाई,
महाराज, देख कुंवरी मन भायाजी ।।११।।
जितने आलिम वहा राजसभा मे आये,
महाराज सभी को डूम दिखावेजी ।
पिण असली राज कुवार नजर कुवरी के आवेजी ।।
तन मन से गाय बजाय लिया विश्रामा,
महाराज, डूम से पूछे रायाजी ।
तुम कौन देश मे बसो कहो तुम कहा से आयाजी ।।
है सोरठ नामा देश द्वारिका नगरी,
महाराज वहा से हम चल आयाजी ।।१२।।

---

१ रोएगी ।

तब राय रुखमियो कहे डूम तुम मागो,
महाराज, सोही तुम को मिल जावेजी ।
तब कुंवर कहे धन माल हमारे कुछ नही चहावेजी ॥
मैं दोऊं जणा हाथो से करा रसोई,
महाराज, हमे या कुंवरी दीजेजी ।
तो खटपट सब मिट जाय आप इतनो यश लीजेजी ॥
सुन बात भूप के रोश जोश चढ आया,
महाराज, धक्का दे बहार कढायाजी ॥१३॥
महेला मे सूती कुंवरी आप अकेली,
महाराज, सजी शृंगार सवायाजी ।
या है रजनी की वक्त हुवे अब मन का चहायाजी ॥
तब राजसुता यो मन्न ही मन्न विचारे,
महाराज, तुम्हे हरिनन्द कहाओजी ।
जो जाणो मन की बात यहा पर जल्दी आओजी ॥
हिम्मत करके बेधडक आप मुझे व्याहो,
महाराज, होय सब ही मन चायाजी ॥१४॥
सुण प्राणनाथ कहूँ बात ईश्वर की साखे,
महाराज, यदि तुम नही आओगाजी ।
तो अपहत्या को पाप साफ कहूँ तुम सिर होगाजी ॥
विद्या से जाण झट कुंवर तिहा चल आया,
महाराज, वीद का वेश वनाईजी ।
कुंवरी को पकड कर हाथ नींद से तुरत जगाईजी ॥
हथलेवो जोडकर विधी व्याह की सारी,
महाराज, कुवर फेरा फिर आयाजी ॥१५॥
कुवरी के पास दिन ऊगत दासी आई,
महाराज, अति मन अचरज पाईजी ।
परणेतुं वेश लख तुरत राय को वात जणाईजी ॥
सुनते ही दौड राजा राणी मिल आया,
महाराज, मौन कुंवरी कर लीनीजी ।
रे वश लजावणहार तें भी चोखी गति कीनीजी ॥

तुझ कारण दुष्टन ! वचन दूम से हारा,
महाराज, वहिन से वैर वसायाजी ॥१६॥

कर कोप दूत को भेजा उपवन माहीं,
महाराज, डूम को लिया बुलाईजी।
निज पुत्री दीनी सोप नही सोची दिल माईजी ॥
कुंवरी को लेकर डूम वाग मे आया,
महाराज, मोहनी पीछी जागीजी।
मै दी डूमड को सौंप वात आछी नही लागीजी ॥
पीछी लेवन को भूप वाग मे आया,
महाराज, डूम का पता न पायाजी ॥१७॥

वैठा गम खाई भूपति वात विसारी,
महाराज, कुंवर तव फौज वनाईजी।
दिया वन के वीच पड़ाव राय को वात जणाईजी ॥
सुन मामाजी मैं प्रजन कुवर चढ आया,
महाराज, मुझे कुवरी परनावोजी।
या करो युद्ध तो आओ सामने जोर जनाओजी ॥
या सुणी बात नरपति मन मे पछतावे,
महाराज, करूँ अव कौन उपायाजी ॥१८॥

जो करूँ युद्ध तो वैर वसेगा दुगुणा,
महाराज, जोर जादव को पूरोजी।
है कौन अधिक वलवान इन्हो से सूर सनूरोजी ॥
मैं प्रजन कुवर से जाय करूँ नरमाई,
महाराज, बात जब रहे हमारीजी।
यो करके खूब विचार आप झट हुआ तैयारीजो ॥
जब मामाजी को आता देख कुवर के,
महाराज, हिए अति हर्ष भरायाजी ॥१९॥

मारग मे कियो मिलाप हेत कर लोन्हो,
महाराज, तुरत तम्बू मे पेठाजी।
मामाजी और भाणेज दोऊ आसण पर वैठाजी ॥

इतने तो उठ बेदरवी कुंवरी आई
महाराज, तात को शीश नमायाजी ।।
मिट गयो सकल जजाल प्रेम से बटें बधायाजी ।
पुनि करी ब्याह की रीति दायजो दीन्हो,
महाराज, सीख ले कुवर सिधायाजी ।।२०।।
श्री प्रजन कुवर कर फतह द्वारिका आया,
महाराज, कामण्या कलश बधावेजी ।
घर घर मे मंगलाचार लोक मुख मुख यश गावेजी ।।
नित मात तात को नमे कुंवर कर जोडी,
महाराज, कीर्ति पसरी पुर माईजी ।
इन वोही बेदरवी परण मात के पाव लगाईजी ।।
तब मात रुक्मणि मगन हुई मन माही,
महाराज, खुशी का पार न पायाजी ।। २१ ।।
निज भामणि सग मे राजकुवर सुख भोगे,
महाराज, करी मोजा मन मानीजी ।
फिर लीन्हा सयम भार सुनी जिनवर की वानीजी ।।
कर विनय अंग द्वादश कठे कर लीना,
महाराज, तपस्या खूब कमाईजी ।
था राजकुंवर सुकुमाल जिन्हो की यह अधिकाईजी ।।
जिन सोलह वर्ष का पूरण सयम पाला,
महाराज, वास मुक्ति का पायाजी ।। २२ ।।
संवत उगणोसे साल कहूं चौसट का,
महाराज, धन्न तेरस रविवारेजी ।
यह करी जोड परमान ढालसागर अनुसारेजी ।।
एक निम्बाहेडा शहर दीपता भारी,
महाराज, सभी श्रावक सुखदाईजी ।
हुआ धर्म ध्यान का ठाठ खूब चौमासा माईजी ।।
श्री नन्दलालजी महाराज तणा शिष्य गावे,
महाराज, ज्ञान मुझे गुरु बतायाजी ।। २३ ।।

५४

शाम्बकुंवर चरित्र

(तर्ज—द्रोण)

यह प्रजन कु वर का शाम्भ कुंवर लघु भाई,
महाराज, दोहुन की माता न्यारीजी।
है तीन खण्ड का नाथ तात जिनका गिरधारीजी ॥
या युगल वीर की जोड दीपती भारी,
महाराज, प्रेम आपस मे पूराजी।
चले निज कुल की मर्याद घडी एक रहे न दूराजी ॥
खुश होय एक दिन प्रजन कु वरजी बोले,
महाराज, भाई तुम शंक न राखोजी।
जो मन की इच्छा होय वही मुझ आगे भाखोजी ॥
कर अरज तात से वोही चीज दिलवाऊं,
महाराज, माग जो मरजी थारीजी ॥ १ ॥

कहे शाम्भ कु वर कर जोडी बात सुन भाई,
महाराज, और मुझ कुछ नही चहावेजी।
दिया वचन लगावे पार आप फिर नही पलटावेजी ॥
सुरलोक सारखी है यह द्वारिका नगरी,
महाराज, चित्त मे खूव उमावोजी।
करूँ छै महीना तक राज तात से आप दिलावोजी ॥
लीजे इतनो यश आश सुफल कर दीजे,
महाराज, यही बस अरज हमारीजी ॥ २ ॥

तव प्रजनकुंवर ले साथ शाम्भ कु वर को,
महाराज, सभा मे दोउ मिल आयाजी।
अति हर्ष सहित कर जोड तात को शीश नवायाजी ॥
दीनो आदर हरिराय प्रेम से पूछे,
महाराज, कहो जो भाव तुम्हाराजी।
करूँ सफल मनोरथ आज वचन नही फिरे हमाराजी ॥

सुन तात आपसे और कछू नही मागू,
महाराज, कुंवर यो कहे विचारीजी ॥ ३ ॥

मैं सोलह वर्ष से आय आपसे मिलियो,
महाराज, आज तक कभी न जाचाजी।
अब मागू सो वक्साय सभालो आपकी वाचाजी ॥
इस द्वारामति का राज मास खट ताई,
महाराज, शाम्भ कुवर ने दीजेजी।
ज्यो वनी रहे सब बात जगत मे यो यश लीजेजी ॥
सुन वात द्वारिकानाथ वचन का वन्ध्या,
महाराज, तुरत दीन्ही मुखत्यारीजी ॥ ४ ॥

अव शाम्भ कुंवरजी राज मौज से पाले,
महाराज, खूव धन धन कहलावेजी।
पिण तजी लाज मर्य्याद आप कुव्यसन कमावेजी ॥
जो उत्तम कुल की नार नजर मे आवे,
महाराज, जिन्हो से करत अनीतीजी।
ऐसे पुरुषो की क्यो न होय जग वीच फजीतीजी ॥
नगरी का लोक मिल सब यो सलाह विचारी
महाराज, मुकुन्द से अर्ज गुजारीजी ॥ ५ ॥

सुन बात कृष्ण लोगो को दिया दिलासा,
महाराज आप महला मे आयाजी।
सब जाम्बवती को माण्ड नन्द का हाल सुनायाजी ॥
तब तडक भडक कर महाराणीजी वोले,
महाराज, विनय इतनी सुन लीजेजी।
ये लोग उडावे बात आप तो चित्त न दीजेजी ॥
यदि झूठ होय तो प्रत्यक्ष आज दिखाऊँ,
महाराज, उठ चल सग हमारीजी ॥ ६॥

तब जाम्बवती झट उठ पति संग चाली,
महाराज, हरिजी हो गया आगेजी।

खुद बहुत वर्ष का बुड्ढा बावा बन गया सागेजी ।
उस जाम्बवती को गूजरी आप बनाई,
महाराज, बरस सोलह परमाणेजी ।
इम कियो वैक्रिय रूप लोग कोई भेद न जाणेजी ॥

(तर्ज — रमा सुत मोहना मोहना)

हरिजी चालिया चालिया, काई कम्पित तास शरीर ॥टेर॥
अति दीपती गूजरी, ज्यो इन्द्राणी अवतार ॥ १ ॥
दीसे वेष सुहामणो, काई नेवर को झणकार ॥ २ ॥
मोत्यां की सिर चूनरी, कांई मटक्यां लीनी मेल ॥३॥
लोक देख हासी करे, काई जोड मिली परमाण ॥ ४ ॥
गोविंद के परवा नही, काई चाल्या मध्य बाजार ॥५॥

॥मिलत॥ दोउ फिरता फिरता राज द्वार पे आया,
महाराज, [1]जावण्या नीचे उतारीजी ॥ ७ ॥

लो दूध दही लो दूध दही यो बोले,
महाराज, कुवर सुन बाहिर आयोजी ।
लख गूजरनी का रूप तुरत मन मे मुरझायोजी ॥
कहे कुवर सुन तू गूजरनी बात हमारी,
महाराज, नही हम लूट मचावांजी ।
तू चाल महल मे दूध दही को भाव जचावाजी ॥
बुड्ढा बालम यो कहे यही पर ले लो,
महाराज, नही तो मरजी तुम्हारीजी ॥ ८ ॥

मैं हूँ बुड्ढो या बालक वधू हमारी,
महाराज, अवस्था यौवन थारीजी ।
को जाने मन की बात नही परतीत तुम्हारीजी ॥
दोउ हाथ पकड कर खेंचा खेंच मचावे,
महाराज, झपट ले चाल्यो माहीजी ।
अरे मान मूढ मतिहीन ऐसी क्यों करत अन्याईजी ॥

---

१. दूध की मटकी ।

तव कृष्ण आप निज रूप प्रगट कर लीन्हा,
महाराज, पुत्र से कहे ललकारीजी ॥ ९ ॥
रे लाज हीन ! तू देख मात या तेरी
महाराज, कहा ले जावे आगीजी ।
झट छोड मात को हाथ गयो महला मे भागीजी ॥
तब कृष्ण और महाराणीजी मिल दोनो,
महाराज, आए निज भवन मुझारीजी ।
देखी तुझ नन्दन टेव बोल यूं कहे गिरधारीजी ॥
तव जाम्ववती कर जोड कत से बोली,
महाराज, अभी बालक बुध ब्यारीजी ॥१०॥
फिर दूजे दिन गोपाल सिंहासन बैठा,
महाराज, भरी थी सभा रसीलीजी ।
तिहा आया शाम्भकु वर हाथ से घडता खीलीजी ॥
क्या चीज बनाओ तात बात यू पूछे,
महाराज, कुवर कहे रोश भराईजी ।
जो करे काल की वात ठोकु उनका मुख माहीजी ॥
कोपित हो गोविन्द देश निकाला दीन्हा,
महाराज, कर्म गति टरे न टारीजी ॥११॥
सुन प्रजन कु वर यह बात तात पै आया,
महाराज, बहुत कीन्हो नरमाईजी ।
है मुझ बान्धव नादान, हाल कुछ समझे नाहीजी ॥
मैं जानू जबर अपराध आपका कीना,
महाराज, राज तो वडा कहावेजी ।
यह गुन्हा मुझे बक्शाय वचन पीछा पलटावेजी ॥

(तर्ज—नागजी पूनम के दिन जन्मीया हो नागजी)

तातजी, प्रजन कु वर इम विनवेरे काई,
करजोडी पावा पडी हो तातजी ।
तातजी, राजनपति प्रभु आपकी रे काई,
महिमा जग मे है बडी हो तातजी ॥ १ ॥

तातजी, पुत्र कुपूत होवे सहीरे कांई,
मावित अलग करे नही हो तातजी।
तातजी, छेदन भेदन जो करे रे काई,
चन्दन गुण छोड़े कही हो तातजी ॥ २ ॥
तातजी, यंत्र में पीले शेलडी[1] रे कांई,
दुश्मन को नरपति करे हो तातजी।
तातजी, लक्कड जल ऊपर तिरे रे कांई,
पानी अवगुण नही धरे हो तातजी ॥ ३ ॥
तातजी, खुशबू देकर फ़ूलडारे काई,
मर्दक पै नही ध्यान दे हो तातजी।
तातजी, बन्धन तर्जन सभी सहे रे कांई,
गऊ मधुर पय दान दे हो तातजी ॥ ४ ॥
तातजी, बड़पन विरद विचार ने रे कांई,
पुत्र पे कोप न कीजिए हो तातजी।
तातजी, सुदृष्टि निहार ने रे काई,
प्रति आश्वासन दीजिए हो तातजी ॥ ५ ॥
॥मिलत॥ निज नन्दन की हरि एक बात नही मानी,
महाराज, तर्क इतनीक निकारीजी ॥ १२ ॥
है सत्यभामाजी जो तुझ मोटी माता,
महाराज, हस्ति ऊपर बैठावेजी।
और चमर उडाती आप द्वारिका मांही लावेजी ॥
तो है मुझ आज्ञा रहो राज के माही,
महाराज, कुवर सुन वहाँ से चलियोजी।
अति हर्ष सहीत झट आय शाम्भकुँवर से मिलियोजी ॥
मैं सुखदायक उपाय करी आया हूँ,
महाराज, फिर,तो तकदीर तुम्हारीजी ॥१३॥
कहे शाम्भकुवर तुम बन्धव बात विचारो,
महाराज, मात देखा नही चहावेजी।
तो ऐसी अदब के साथ कहो कैसे लइ जावेजी ॥

---

१. ईख।

वैताढ्यगिरि विद्याधर उत्तर श्रेणी,
महाराज, 'मेघकुट' नगर तुम्हारोजी।
तिहा दीजे जल्दी मेल खुशी चित होय हमारोजी ॥
लीजे यश यह भी वक्त निकल जावेगी,
महाराज, आप हो पर उपकारीजी ॥१४॥

जरा धीरज धर तू क्यो इतनो घबरावे,
महाराज, जोर विद्या को भारीजी।
झट पलट दिया तसु रूप करी जिम देवकुमारीजी ॥
भामाजी का रमणीक बाग के माही,
महाराज, वृक्ष की शीतल छायाजी।
शिला पट्ट पर बेठाय कपट का वचन सिखायाजी ॥
यो खेल रचा कर गया द्वारिका माही,
महाराज, बात तो खूब सुधारीजी ॥१५॥

ले सखिया लार तिण अवसर भामा राणी,
महाराज, बाग मे खेलन आईजी।
अति दिव्य रूप कु वरी को देख मन अचरज पाईजी ॥
भामाजी भोली भेद कछु नही पाई,
महाराज, पास कुंवरी के आईजी।
बहु दे आदर सन्मान बात पूछे हुलसाईजी ॥
तुम कुन हो बाईराज बात फरमावो,
महाराज, सूर्ति[1] तुझ मोहनगारीजी ॥१६॥

तब शाम्भ कु वर कहे नयना जल बरसाई,
महाराज, मात सुन बात हमारीजी।
इस मृत्यु लोक के माय मैं हूँ इक दुखनी नारीजी ॥
मैं विद्याधर राजा की वल्लभ कु वरी,
महाराज, यहाँ मामो लेई आयोजी।
सूती तरु तल भर नीन्द दुष्ट मुझ छोड सिधायोजी ॥

---

१ सूरत।

(तर्ज—है सुण पथीडा वात कहो धूर छेह थी)

है सुण मायड़ली, पिता है बेपरवाह जो,
माता ने मैं छूं वल्लभ डीकरी रे लो ॥ १ ॥
है सुण मायडली, चक्रवर्ती पाले राज जो,
तिणथी अर्धराज छे म्हारा तात ने रे लो ॥२॥
है सुण मायडली, बात सुणेगा मात जो,
झुर झुर ने पिंजर ते होसी सही रे लो ॥३॥
है सुण मायडली, यह मुझ बालक वय जो,
भोली ढाली कुछ समझूं नही रे लो ॥४॥
है सुण मायडली, कौन करे मुझ सार जो
सुख दुख की बात कौन मुझे पूछसो रे ॥५॥
है सुण मायडली, अब मुझ राह बताव जो,
गुण नही भूलूं मैं जीवू जहाँ लगे रे लो ॥६॥

॥मिलत॥ कहे सत्य भामाजी बाई रुदन मत कर तू,
महाराज, खुलो तकदोर तुम्हारीजो ॥१७॥

सुभानू कुंवर मुझ पुत्र दीपतो भारी,
महाराज, कहावे नन्द हरि को जी ।
नन्याणु[1] कुंवरया साथ व्याह अब होसी नीकोजी ॥
जो मन्न होय तो तू यो अवसर मत चूके,
महाराज, मौज कर जो मन मानीजी ।
सब कुंवरान्यां के माय तुझे करसू पटरानीजी ॥
सुन मात बात परमान करूं मैं थारी,
महाराज, अरज इतनीक हमारीजी ॥१८॥

मैं भूचर तो सपना मैं कभी नही वछू,
महाराज, आज की वक्त विचारू जी ।
मुझे हर्ष सहित ले चलो तो दिल मे निश्चय धारूंजी ॥
फिर गज होदे तुम हाथे चमर ढुराऊ,

---

१ निन्यानवे ।

महाराज, हुई खुश भामारानीजी ।
मोटे मडान[1] वधाय तुरत नगरी मे आनीजी ॥
अब वटे वधायां खूब शहर के माही,
महाराज, करे महिमा नर नारीजी ॥१६॥
अब सतभामाजी विवाह कुंवर को रचियो,
महाराज, द्रव्य खरचे दिल चायोजी ।
घुर रहे वाजिन्तर नाद लगन दिन नेडो[2] आयोजी ॥
तद गुप्त पणे कुंवरी ब्राह्मण से बोले,
महाराज, रीति कुल की नही छोडूजी ।
मैं ऊपर रखूं हाथ तभी हथलेवो जोडूजी ॥
सुण भामाजी यूं कहे तुरत कुंवरी से,
महाराज, रीति होय सो कर थारीजी ॥२०॥
तब कुंवरी अपना हाथ रखा ऊपर ही,
महाराज, फिरे फेरा अब सागेजी ।
निन्याणवे कुंवरिया माय आप हुई सबके आगेजी ॥
अति हर्ष सहित किया व्याह मात नन्दन का,
महाराज, भवन दीना वक्साईजी ।
सुभानू कुंवर की नार सवी मिल भीतर आईजी ॥
तब प्रजन कुवर तत्क्षण विद्या को सुमरी,
महाराज, किया निज रूप तैयारीजी ॥२१॥
अब शाम्भ कुंवरजी देव कुवर जिम दीपे,
महाराज, सेज पर वैठा आईजी ।
सब राण्या देखी रूप तुर्त मन मे मुरझाई जी ॥
चो तर्फ सेज के सर्व प्रेमदा बैठी,
महाराज, फूली जिम केशर क्यारीजी ।
कर अलकार सुभानू कुवर आया उस वारीजी ॥
तिहाँ शाम्भ कुंवर को वैठा देख पलग पै,
महाराज, कोप चढियो अति भारीजी ॥२२॥

---

१ वडा ठाट-वाट । २ नजदीक ।

रे लाज हीन ! मुझ सेजा मे किम आयो,
महाराज, तुझे कुमति भरमायोजी ।
तव शाम्भ कुंवर कर नेत्र लाल उनको घुरकायोजी ।।
सुभानू कुवर झट दौड मात पा आयो,
महाराज, हकीकत माण्ड सुनाईजी ।
सुन सतभामाजी शीघ्र गति तिहाँ चल कर आईजी ।।
अति क्रोध करीने करडा वचन सुनाया,
महाराज, दुष्ट तू निकल बहारीजी ।।२३।।
जब देश निकाला तात तुझे दीना था,
महाराज, यही कैसे विलमायोजी ।
माधव की आज्ञा भंग करी पीछो किम आयोजी ।।
छिप के कब तक रहसी इस आगन मे,
महाराज, नाम जिनको गिरधारीजी ।
यदि लगी खबर फिर बोल कौन गति करसी थारीजी ।।

(तर्ज.—फाग)

मुरली वारो रे, मुरली वारो रे ।
वो शीश पर मुकुट वारो रे ।।टेर।।

शाम्भ कुवर ने सत भामा कहे सुन ले बात हमारी रे ।
तीन खड को नाथ थारो गिरधारी रे ।।१।।
कसराय को मुकुट पाडियो परभव मे पहुँचायो रे ।
स्वयम्बर मडप माय से मुझ व्याही लायो रे ।।२।।
काली दह मे कूद पड्यो अरू करी वज्र की छाती रे ।
गेंद लेइने पाछो निकल्यो नाग नाथी रे ।।३।।
जरासिध को मान विडार्यो हस्ती दत उखाड्या रे ।
जेष्टी मल से युद्ध करी पकड पछाड्या रे ।।४।।
देशवटो पडवा ने दीनो जरा काण नही राखी रे ।
पांडु मथुरा जाय बसाई सूतर[1] साखी रे ।।५।।

---

१ सूत्र-शास्त्र ।

प्रजन कुंवर थारी भड़ ऊपर मदद करे छे भारी रे ।
जाम्बवती पण लाजसी वा माता थारी रे ॥६॥
बडा बड़ा की शान बिगाडी ऊ[1] थारी कब राखे रे ।
इण लक्षण से जाणजे कई स्वाद चाखे रे ॥७॥
॥मिलत॥ तब शाम्भकुवर कर जोड मात से बोले,
महाराज, अर्ज एक सुनो हमारीजी ॥२४॥
मैं किया वचन परमाण आण नही लोपी,
महाराज, जोर हो जहा पुकारोजी ।
मैं हूँ निरदोषी आज तात क्या करे हमारोजी ॥
मैं पुढवी शिला पट ऊपर बैठो थो,
महाराज, बाग की शीतल छायाजी ।
मुझे गज होदे बैठाय आप यहाँ लेकर आयाजी ॥
सुन माता तुझ उपकार कभी नही भूलू,
महाराज, रोष की हद विस्तारीजी ॥२५॥
फिर शाम्भ कुवर निजस्थान गया निकल के,
महाराज मौज मे रहे सदाईजी ।
तब भामा रानी तुरत कथ के सन्मुख आईजी ॥
दो हाथ जोड सब वीतक हाल सुनाया,
महाराज, हरीजी यू हस बोलाजी ।
उसे गज होदे बैठाय चमर कहो किसने ढोलाजी ॥
मैं साच कहूँ राणीजी रोष नही कीजे,
महाराज, कुबुद्ध या है सब थारीजी ॥२६॥
तब सतभामाजो रोष अत्यन्त चढाया,
महाराज, करी तुम झूठी मुझ ने जी ।
तेरो पलट्यो नही स्वभाव गवाल्या जाणू तुझ ने जी ॥
यो बड बड करती गई महल के माई,
महाराज, बडी समता दिल धारीजी ।
यह कपटभरा ससार खूब रहना होशियारीजी ॥

---

१ वह, श्रीकृष्ण से अभिप्राय है ।

फिर शाम्भ कुंवर पच्चास अतेवर परनी,
महाराज, सेज सुख विलसे भारीजी ।। २७ ।।
फिर नेमि जिनन्द की सुनी आपने वाणी,
महाराज, धर्म का मर्म पिछानाजी ।
है झूठा सब ससार सार एक संजम जानाजी ।।
हरि की आज्ञा ले तुर्त भोग छिटकाया,
महाराज, सूत्र मे वर्णन चाल्योजी ।
श्री प्रजन कुंवर की तरह आप शुद्ध सजम पाल्योजी ।।
कर अष्ट कर्म को अन्त सिद्ध पद पाया,
महाराज, काज सब लिया सुधारीजी ।। २८ ।।
सवत उन्नीसो पैसठ चैत सुदि माही,
महाराज, तिथि एकम गुरुवारेजी ।
यह जुगत बनाई जोड़ ढालसागर अनुसारेजी ।।
मेवाड देशगढ़-चित्रकूट सुखकारी
महाराज, तीन मुनि विचरत आयाजी ।
वहां है श्रावक गुणवान मेरा दिल लगे सवायाजी ।।
श्री नन्दलालजी मुनि तणा शिष्य गावे,
महाराज, गुरु मेरा है उपकारीजी ।। २९ ।।

: ५४ :

दान की महिमा

(तर्ज—लगडी)

अभयदान प्रभाव भविकजन भव भव मे सुख पावेगा ।
मुनिराज सुनावे वही नर ज्योति मे ज्योति समावेगा ।। टेर ।।
पूर्वभव हस्ती के भव मे एक जीव की करी दया ।
हुवे मेघकुवरजी श्रेणिक राजा के घर आ जन्म लिया ।।
यौवनवय मे आए कुंवरजी वहत्तर कला मे प्रवीन भया ।
तव श्रेणिक राजा आठ कन्या के संग मे व्याह किया ।।
।।शेर।। राजकुवर सुकुमाल हैं और चलते कुल की चालजी ।
सुख भोगते ससार का वीता है कितना कालजी ।

पुण्य योग से उस नगर मे छै काय के प्रतिपालजी ।
समोसरे चौवीसमे जिनराज दीन – दयालजी ।।

।।छोटीकडी।। हुई खबर शहर मे बहुत लोग हुलसाया ।
राजादिक वन्दन मेघ कुँवर भी आया ।।
तब तीन लोक के नाथ जिनेश्वर राया ।
प्रभु समोसरण के बीच उपदेश सुनाया ।।

।।चलत।। सुनी मेघ कुवार जान्यो अथिर ससार,
जिसने लिया सजम भार काम सफल किया २ ।।
किया उग्र विहार बहु तारे नर नार,
खूब किया उपकार जग यश लिया २ ।।
सजम पाल के सुजान, गए विजय विमान,
बत्तीस सागर के प्रमान भोगे सुख तिहा २ ।।
छट्ठे अङ्ग के मभार हैगा बहु विस्तार,
सुन लेना नर नार यहा सकोच दिया २ ।।

।।मिलत।। महा विदेह क्षेत्र मे जन्म ले के, कर्मों का रोग मिटावेगा ।।१।।
प्रथम देवलोक के अन्दर शक्रेन्द्र ने किया बखान ।
मनुष्य लोक मे दयालू, मेघरथ जैसा नही इनसान ।।
एक देवता ने यूं सुनकर, दिल मे शंका लीनी ठान ।
मैं जाय डिगाऊ, उसी दम रूप वैक्रिय किया महान् ।।

।।शेर।। धर्म ध्यान मे लीन नृपति, पौषध शाला मायजी ।
देवता कबूतर हो गिरा, जल्दी से गोदी मायजी ।।
तब पारधी कहने लगा, सुनिए श्री महारायजी ।
मम भक्ष्य मुझ को दीजिये, रहा भूख से घबरायजी ।।

।।छोटी कडी।। तब राय कहे सरणे, आया नही पावे ।
तेरी इच्छा हो सो माँग, और मिल जावे ।।
तब कहे पारधी, इस पै दया जो आवे ।
तो इसके बराबर अपना मास दिलावे ।।

।।चलत.। सुनके राजा ने यह हाल, तराजू मगवाई तत्काल ।
करके कुछ भी नही ख्याल, काया खण्डन करी२ ।।

देव अवधि से जान, सच्चा दयालू राजान।
झूका कदमो मे आन, नही देरी करी२ ॥
पीछे मेघरथ राय, व्रत पाले चित्त लाय।
गए सर्वार्थ सिद्ध मांय, पूर्ण स्थिति करी २ ॥
वहा से चवकर के आन, हस्तिनापुर के दरम्यान।
पिता विश्वसेन लो जान, अचला मातेश्वरी २ ॥

॥मिलत॥ शान्ति नाथ हुवे स्मरण कीजे, शान्ति-शान्ति वरतावेगा ॥२॥

यदुकुल भूषण समुद्र विजय की, शिवादेवी है महारानी।
अङ्गजात जिन्हो के हुवे हैं, रिष्टनेमि जिनवर ज्ञानी ॥
जूनागढ चले व्याह करन श्री कृष्ण चन्द्र है अगवानी।
चली वरात धूम से, देख छवि जनता मन मे हुलसानी ॥

॥शेर॥ नगर जूनागढ पति श्री उग्रसेन के द्वारजी।
तोरण वन्दन आवता पशु गण की सुणी पूकारजी ॥
पशु इकट्ठे क्यो किए कहे नेमिजी उस वारजी।
सुन सारथी ने यू कहा, तुम व्याह हित सरकारजी ॥

॥छोटी कड़ी॥ यू सुन के नेमि प्रभु दिल मे करे विचारा।
मुझ व्याह निमित्त पशुओ का होय संहारा ॥
दिए भूषण खोल कर सारथि को उस वारा।
फिर सहस्र पुरुष सग, प्रभुजी ने सयम धारा ॥

॥चलत॥ सुनके राजुलजी यह हाल, मुरछानी तत्काल।
फेर सूरत सभाल, ऐसे प्रकट कही २ ॥
विन गुनाह भरतार, मुझ छोड़ी निराधार।
अव कौन का आधार, लेना संयम सही २ ॥
सग सात सौ कुवारी, निश्चय दिल मे विचारी।
लीना मुनि व्रतधारी, गिरनार पै गई २ ॥
उतराध्ययन के मझार, हैगा वहुत विस्तार।
दोनो किया खेवा पार, केवल ज्ञान लही २ ॥

॥मिलत॥ रिष्टनेमि राजुलजी का गुण, कोई तन मन से गावेगा ॥३॥

जगह-जगह सूत्रो के अन्दर बहुत किया जिनवर विस्तार।
दया धर्म को धार कर, भवसागर से होगए पार ॥

धर्मरुचि मुनि दया निमित्त, कडुवे तूम्बे का किया आहार ।
पर नागसिरि पै, उन्होने, द्वेष भाव नही किया लगार ।।

।।शेर।। दया धर्म दिल धारके, कई पाए अविचल स्थानजी ।
अल्प बुद्धि है मेरी किन-किन का दू प्रमानजी ।।
जीव रक्षा धर्म पर, जिसका हमेशा ध्यानजी ।
देव स्वर्गो के झुके उसके चरण मे आनजी ।।

।।छोटी कडी।। यो जान सभी जीवो की जतना करना ।
तो भवसागर से जलदी होगा तरना ।।
मुनिराजो की नित शिक्षा दिल मे धरना ।
जो शिव रमणी को चाहो भाई वरना ।।

।।चलत।। ऐसी अरिहंत वानी, जिसमे दया ही वखानी,
जिनके चित्त मे समानी, हुए भव पारी २ ।।
ऐसी लावनी बनाई, साल चौपन के माही,
जीवागंज माही गाई, सुनो नर नारी २ ।।
नन्दलालजी महाराज, तरण तारण की जहाज,
सारे आत्मा के काज, बडे उपकारी २ ।।
हीरालालजी महाराज, वाणी घन जिम गाज,
ठाणा सात से विराज, रहे यश धारी २ ।।

।।मिलत।। खूबचन्द और चौथमल कहैं, दया पाल तिर जावेगा ।। ४ ।।

५५ :

शील की महिमा

(तर्ज —लगडी)

शील रत्न का करो जतन, श्री जिनवर ऐसे फरमावे ।
श्री शील व्रत के नियम से मन वाछित सम्पति पावे ।।टेर।।

चम्पा नगरी सुभद्र सेठ, धनवन्त बसे उस नगरी माय ।
सुभद्रा नामा, कहीजे एक पुत्री वल्लभ सुख दाय ।।
बालपने से जैनधर्म श्रावक के व्रत पाले चित्त लाय ।
मा बाप उसी को एक दिन मिथ्यात्वी घर दी परणाय ।।

॥शेर॥ सती सुभद्रा ऊपरे सासू करे तकरारजी ।
जैन धर्म को छोड़ दे शुचि धर्म ले तू धारजी ॥
सुभद्रा कहै सासु सुनो, जिन धर्म है एक सारजी ।
सुख से सती रहती सदा, आगे सुनो अधिकारजी ॥

॥छोटी कडी॥ तिण अवसर विचरत, जिनकल्पी मुनिराया ।
कृपा करके चम्पा नगरी मे आया ॥
चक्षु मे वायु योगे फूस भराया ।
नैनो से झरता नीर शहर मे आया ॥

॥चलत॥ सती देख मुनिराय, हर्ष आया दिल माय,
मुनि वन्दे चित्त लाय, गुणग्राम करे २ ॥
सती आख सामे देख, मन आया है विवेक,
फूस काढ़ दिया एक, सासु शक धरे २ ॥
बहू कुलक्षणी नार, शर्म आई ना लगार,
छू लिये अणगार, मिथ्या कलक धरे २ ॥
सुभद्रा नित्यमेव, करे प्रभुजी की सेव,
जिन शासन का देव, कैसे शान्ति करे २ ॥

॥चलत॥ सुभद्रा सती को कलक उतारन, देव अति मन हुलसावे ॥१॥
चारो पोल चम्पा नगरी के, जड़ दीने सुर मन आनी ।
कइ लोक नगर के आये खोलन को मिल राजा रानी ॥
यह द्वार जब खुले देवता यु बोले नभ से बानी ।
सती काचा सूत से, चालनी बाध काढ़ छिटके पानी ॥

॥शेर॥ नृप उपाय कीने बहुत, पर खुले नही वह द्वारजी ।
लोक आश्चर्य हो रहे, यह हुवा कौन विचारजी ॥
नृप कराई घोषणा, धन धन पुरुष घर-नारजी ।
द्वार खोले नगर के, वह सतियो मे है सारजी ॥

॥छोटी कड़ी॥ सुभद्रा सती सुन सासू से जतलावे ।
मैं करूँ वही प्रयत्न द्वार खुल जावे ॥
बहू कुलक्षणी तू नार मुझे समझावे ।
फिर सती होन को जाय शर्म नही आवे ॥

॥चलत॥ सती आई दिल धार, कच्चे सूत से उस वार,
बाधी चालनी ततकार, जल काढ लिया २ ॥
सती गिना नमोकार, जल छीटा है तिवार,
चम्पा नगरी के द्वार, तिन खोल दिया २ ॥
बहु देख नर नार, खुशी हुवे है अपार,
यह सतियो के सरदार, जग यश लिया २ ॥
सासू आई तिणवार, नमी सती के चरणार,
कलक दिया है उतार, हृदय हुलस रह्या २॥

॥मिलत॥ जय जय शब्द सुर बोले गगन मे, पुष्प वृष्टि तिहा वर्षावे ॥२॥
रामचन्द्रजी बहु पुन्यवन्ता, शीलवती तसु सीता नार।
वन वास सिधारे, भाई लक्ष्मणजी भी रहते थे लार॥
उसी समय त्रिखण्डपति, राजा रावण आया ततकार।
रघुवर की नारी, सती सीता को ले गया लक मझार॥

॥शेर॥ सती सीता दिल बीच मे, लीना नियम यह धारजी।
रघुवर दिन इकीसवें, मिल जाय, तो लूँ आहारजी॥
सीता प्रति रावन कहै, मुझ ले पति सिर धारजी।
सब रानियो के बीच मे कर दूँ तुझे पटनारजी॥

॥छोटी कडी॥ बहु लाल पाल कर, रावन चित्त ललचावे।
सीता रघुवर बिन सुपने मे और नही चावे॥
बडे बडे भूप मिल रावण को समझावे।
सीता दो पीछी सौप बात रह जावे॥

॥चलत॥ त्रिखंडराय बात मानी कुछ नाई।
रहा मोह मे उलझाय, समझे कुछ नाई २॥
रावन कहै दिलधार,भाई लक्ष्मण दोनो लार।
वसें वन के मझार, कैसे सके आई २॥
पवनसुत हनुमान, कहीए महा पुन्यवान।
आए लका के दरम्यान, तिहा बाग माही २॥
कहे सीता से आवाज, रामचद्रजी महाराज।
सुख चैन मे है आज, चिंता मिटवाई २॥

।।मिलत।। रामचन्द्रजी के समाचार सुन, सती अति मन हर्पावे ।।३।।
सीताजी का समाचार लेकर हनुमान सिधाया है।
श्रीरामचन्द्रजी जिन्हो के पास तुरत ही आया है।।
रामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी सुनकर अति सुख पाया है।
दल वादल लेकर शीघ्र लकागढ पर चढ़ आया है।।

।।शेर।। रामचन्द्रजी जीतिया, जिसका वहुत अविकारजी।
नगरी अयोध्या आ गये, सीता को लेकर लारजी।।
लोक शहर के यूं कहे शील त्यागा सीता नारजी।
शका मिटाने को सती अव [१]धीज करे दिल धारजी।।

।।छोटी कड़ी।। तव स्नान करी अग्नि का कुण्ड भराया।
नगरी का वहु नर नार देखने आया।।
सती कहे राम तज अवर पुरुप जो चाया।
तो अग्नि कुण्ड के वीच भस्म हो काया।।

।।चलत।। ऐसा कहके हवाल, सती पड़ी तत्काल।
कुछ आया नही आल, देखे नर नारी २।।
सीता सती के गुणगान, कर रहे नभदरम्यान।
देव स्वर्गो से आन, जय जय कारी २।
शील शीतल करादे आग, विघ्न जातेहै सव भाग।
यश मिलता है अथाग, सम्पत्ति भारी २।।
जवाहरलालजी महाराज, तरण तारण की जहाज।
सारे आत्मा के काज, बड़े उपकारी २।।

।।मिलत।। 'खूबचन्द' और चौथमल कहे शील सदा सुख प्रगटावे ।। ४ ।।

. ५६ .

तप की महिमा

(तर्ज —लगडी)

शासन पति शास्त्रो के वीच, तपस्या का महातम फरमाया।
शुद्ध करके करनी, गये कई स्वर्ग कई शिव-पद पाया ।।टेर।।

---

१. अग्नि परीक्षा।

सावत्थी नगरी के बाहर रहता एक खधक सन्यासी ।
गृद्ध भालीजी का है वो शिष्य वेद पुराण का अभ्यासी ॥
पिगल निर्ग्रन्थ श्रावक आकर पाच प्रश्न कीने खासी ।
तब पडा भर्म मे, जवाब नही आया होगया उदासी ॥

॥शेर॥ कयगला के बाग मे, समोसरे जिनराजजी ।
खन्दकजी सुन के चले, निज संशय मेटन काजजी ॥
वीर कहे सुन गोयमा, तुझ मित्र मिलेगा आजजी ।
यो पूछे गौतम, वह लेगा सयम, यह कहो गरोब निवाजजी ॥

॥छोटी कडी॥ हा संयम लेगा प्रभु मुख से फरमाया ।
इतने खन्दकजी आके शीश नमाया ॥
कहैं मन की बात सब खोल जिनेश्वरराया ।
प्रश्नो का किया खुलासा भर्म मिटाया ॥

॥झेला। तब हितकरजी उपदेश जिनेश्वर दीना, खन्दकजी सयम लीना ।
एकादशजी अग भणी हुआ प्रवीना, रहे नित्य वैराग्य मे भीना ॥
तप मोटाजी गुण रत्न[1] छम छर कीना, आदेश लेइ प्रभु जीना ॥
बारा पडिमाजी करि शरीर सुकाई दीना, ले आज्ञा अनशन कीना ॥

॥मिलत॥ द्वादश मे सुरलोक गये, भगवती मे जिनवर फरमाया ॥१॥
श्रेणिक नृप की दशमी भार्या, महासेन कृष्णा रानी ।
कोणिक राजा की छोटी माता है शास्त्रो से जानी ।
उसी समय मे विचरत आये, महावीर केवल ज्ञानी ।
सती गई वन्दने, सुनी वैराग्यमई अमृत बानी ॥

॥शेर। समवसरण के बीच मे, यो कहे कर जोडजी ।
जनम मरण की आग से, बचने की येही ठौडजी[2] ॥
वैराग्य दिल मे लायके, दिया मोह ताता तोडजी ।
कोणिक भूप महोत्सव किया, सयम लिया घर छोडजी ॥

॥छोटी कडी। चन्दनबालाजी की हुई चेली गुणवन्ती ।
पढ गई इग्यारह अङ्ग विनय नित्य करती ॥

---

१ गुणरत्न सवत्सर एक प्रकार की तपस्या है । २ ठौर, स्थान ।

शुद्ध संयम पाले रहे पाप से डरती ।
गुरुणी से पूछ वर्धमान आविल तप करती ।।

।।झेला।। एक आबिलजी एक वास दो आविल कर गई,अनुक्रमे सौ तक चढ गई।
विच-विच मे जी एक-एक वास करती गई एक एक आंविल बढ़ती गई ।।
वर्ष चौदहजी तीन मास वीस दिन भर गई,तप कर कर काया गर गई।
किया अनशन जी सव गरज जीव की सर गई ससार समुद्र तर गई ।।

।।मिलत।। सत्तरह वर्ष का सयम पाला, अन्तगड़ शास्त्र मे दर्शाया ।।२।।
आनन्द नामा गाथापति रहे वाणिया गाम नगर मांही ।
श्रीवीर जिनद की वाणी सुन, श्रावक व्रत लिया हुलमाई ।।
एक दिवस करके विचार, घर सौंप दिया निज सुत तांई ।
पौषध शाला मे आय, शुद्ध इग्यारह पडिमा ली ठाई ।।

।।शेर।। तप कर जोर लगा रहे, नही मन मे ग्लानजी ।
रक्त मास वहु सूख गया, शास्त्र मे वहुत वयानजी ।।
अवसर जान अनशन किया, और ध्यावे निर्मल ध्यानजी ।
शुभ भावना वर्तावता उपज्या है अवधि ज्ञानजी ।।

।।छोटी कडी।। तिन अवसर विचरत वीर जिनेश्वर आया ।
तसु शिष्य गौतम अणगार महा मुनिराया ।।
ले आज्ञा गोचरी करण शहर मे आया ।
लोगो के मुख आनन्द की वात सुन पाया ।।

।।झेला।। दर्शन देवेजी गौतम स्वामीजी आया, आनन्दजी शीश नमाया ।
किया प्रश्नजी मैंने अवधिज्ञान यह पाया, तव गौतम फरक बताया ।।
कहै आनन्दजी मैंने सत्य स्वरूप बताया शका युत गौतम आया ।
सच्चा आनन्दजी कहै वीर जिनेश्वर राया, गौतमजी आन खमाया ।।

।।मिलत।। वीस वर्ष श्रावक धर्म पाली, प्रथम स्वर्ग मे सिधाया ।।३।।
कई साधु कई महासती, कई श्रावक कई का हो गया निस्तार ।
जिन आगम मे देख लो, बहुत किया जिनवर विस्तार ।।
पंचम आरे के कई जीव जिन - मार्ग को जाने निज सार ।
करे तपस्या जिससे होता, अपना आत्म - उद्धार ।।

॥शेर॥ शक्ति जान शरीर की कई, करते है उपवास जी।
शूरवीर परिणाम से कई, करते दो दो मास जी॥
जिन मार्ग मे जूझते, कर्मो का करते नाश जी।
वैराग्य मे नित लीन रहे, करे ज्ञान का अभ्यास जी॥

॥छोटी कडी॥ इस विधि करनी कर कई मोक्ष जाते हैं।
वहा गए बाद फिर यहा नहीं आते है॥
करनी से कई सुरगति के सुख पाते हैं।
तपस्या का महातम मुनिराज गाते हैं॥

॥झेला॥ उगणीसेजी उगणी से तिरसठ सुन भाई, मृगसिर सुदि चौदश आई।
छै ठाणाजी, मिल शहर निम्बाहेडा माई, छे रात रहा सुखदाई॥
गुरु वन्दूजी श्रीजवाहरलालजी चितलाई, जिनकी कीर्ति जगमे सवाई।
कर कृपाजी मुझ दिया ज्ञान बकसाई, मैंने सब ही सम्पत्ति पाई॥

॥मिलत॥ 'खूबचन्द' और 'चौथमल' कहे, सदा रहे सुयश छाया॥ ४॥

: ५७

भाव की महिमा

(तर्ज—लगडी)

शुद्ध लेश्या परिणाम जोग, शुभ भली भावना भावेगा।
चेतन सुन प्यारे तू इस से ज्योति निरंजन पावेगा॥टेर॥

आदिनाथ महाराज जिन्हो के नन्दन भरतेश्वर भूपाल।
छै खण्ड माही जिन्हो की वरते आण अखण्ड रसाल॥
चौदहरत्न नवनिधि के नायक, सोलह सहस्र सुर अंगरखवाल।
राज सभा मे विराज्या, सोहे ज्यो मोत्या बीच लाल॥

॥शेर॥ राणिया इतनी हैं जिनके, एक लाख बाणवे हजारजी।
महल बयालीस भूमियाँ नाटक तणा झणकारजी॥
बत्तीस सहस्र नृप मुकुट धारी, हाजिर रहै दरबारजी।
और घणी है साहबी, क्या क्या करूं विस्तारजी॥

॥छोटी कडी॥ एक दिन भरतजी सब सिणगार सजाया।
तन निरखन काजे शीश महल मे आया॥

तिहा रत्न सिंहासन बैठ निरखते काया ।
मुंदरी विन उंगली देख अचम्भा आया ॥

॥झेला॥ दूजी मुंदरीजी जब खोली हाथ से पूरी, तब लागत सूनी सूनी ।
पुदगल का जी पुद्गल का स्वरूप विचारा, तब सब सिणगार उतारा ॥
शुद्ध मन से जी फिर भली भावना भाई, जब केवल प्रगट्या आई ।
लियो संजमजी दश सहस्र भूप समझाया, भरत मुनिवर मोक्ष सिधाया ॥

॥मिलत॥ मन वाञ्छित कारज सिद्ध होवे, जो ऐसी भावना भावेगा ॥१॥

चन्द्रगुप्त राजाजी के नन्दन, नाम जिन्हो का [1]प्रशनचन्द्र ।
वीर जिनन्द की वाणी सुन, जोग लिया तजिया सब फद ॥
राजगृही नगरी तिण अवसर, विचरत आये वीर जिनन्द ।
लेकर आज्ञा वन मे, ध्यान धरा मुनि प्रशनचन्द्र ॥

॥शेर॥ सूर्य सन्मुख नेत्र अरु, ऊँचे किये दोऊ हाथ जी ।
ध्यान से चित्त चल गया, लोगों की सुनकर बात जी ॥
जिनवर वन्दन कारने, तब निकला नरनाथ जी ।
वन मे आते हुवे, मुनि देखिया साक्षात जी ॥

॥छोटी कडी॥ श्रेणिक नृप प्रभुजी को वन्दे शीश नमाई ।
प्रश्न पूछा कर जोड एक चित लाई ॥
वन माही खड़ा एक मुनि ध्यान के माही ।
इस वक्त चवे तो कौन गति मे जाई ॥

॥झेला॥ त्रिसला नन्दनजी त्रिसला नन्दन इम फरमावे, अब चवे तो सातवी जावे ।
तिहा मुनिवरजी ततक्षण मन को सुलटावे, भर्म मिटा ध्यान शुद्ध आवे ॥
क्षण अन्तरजी फिर पूछ्या जिनन्द फरमावे, अब चवे तो सर्वार्थ सिद्धि जावे ।
श्रेणी चढताजी तब केवल प्रगट्या आई, सुर महोत्सव किया हुलसाई ॥

॥मिलत॥ प्रश्नचन्द्र मुनिराज मोक्ष गये, जिनका ध्यान लगावेगा ॥२॥

धनदत्त सेठ का पुत्र कहिए, एलायचीनामा कुमार ।
यौवनवन्ती देख नटवी का रूप मोह्या ततकार ॥
आय महल मे सोता एकन्त, बात कही नहिं जावे बहार ।
जब मात पिता ने पूछिया कहो बेटा है कौन विचार ॥

---

१ प्रसन्नचन्द्र ।

॥शेर॥ नटवी व्याहो मुझ भणी, यों पुत्र कहे सुणो तातजी।
एक बात मानी नही समझा लिया बहु भातजी॥
नट के पास आय कर यो सेठजी कहे बातजी।
कन्या दे मुझ पुत्र को, बहु द्रव्य दू साक्षातजी॥
॥छोटी कडी॥ कहे नटवा सेठजी सुनिये वात हमारी।
कन्या व्याहूं तुम पुत्र रहै मुझ लारी॥
घर आय सेठ सुत से कहता हितकारी।
नहिं छोडी हठ जो ली मन माही विचारी॥
॥झेला॥ एक नगरीजी नगरी मे नाचने आया, वासो पर खेल रचाया।
एक मुनिवर जी एक तपस्वी महा मुनिराया, नगरी मे गोचरी आया॥
रूपवन्तीजी कइ तिरिया आहार बहरावे, मुनि नीची नजर लगावे।
नट चिंतवेजी अहो धिगधिग काम विकारा, धन जग मे यह अणगारा॥
॥मिलत॥ शुद्ध भावो से केवल पाया, यो कोई मोह छिटकावेगा॥३॥
नगरी अयोध्या आदिनाथ महाराज पधारे दीन दयाल।
माता मोरा देवी पुत्र से मिलन काज आई ततकाल॥
आदेश्वर तू ध्यान खोल मुख बोल मुझे बतलाओ लाल।
जिनवर नहिं बोले, मात जब चले पीछे फिरके ततकाल॥
॥शेर॥ हाथी ऊपर बैठ कर आते थे शहर मझार जी।
माजी तो यो मन चिंतवे झूठा सभी ससार जी॥
शुभध्यान से मोह कर्म का ततक्षण किया सहार जी।
भाव चरित शुद्ध कर पाया है केवल सार जी॥
॥छोटी कडी। माजी मोरा देवी उसही वक्त शिव पामी।
सूत्रो के बीच फर्माया सुधर्मा स्वामी॥
यो शुद्ध भावो से कई जीव मोक्ष मे जावे।
किन किन का बताऊ नाम पार नही आवे॥
॥झेला॥ उगणीसेजी उगणीसे छपन सुन भाई, फागन वदि चौदश आई।
तिन दिवसेजी तिण दिवसे जोड बनाई, मैंने बैठ सभा मे गाई॥
मोटा मुनिवरजी कहूँ नाम देवजी जाहरो, चौदह ठाणा परिवारो।
गुरु वन्दूजी श्रीजवाहरलालजी अणगारो, तसु शरणो तुम चरणा रो॥
॥मिलत॥ 'खूबचन्द' और 'चौथमल' कहै सुख मिले भाव शुद्ध भावेगा॥४॥

: ५८ :

परदेशी राजा का चरित्र

(तर्ज—लगडी)

केशी कुवर महाराज समण भव-सागर से तिरने वाले।
मुनि भान ज्ञान के आप अज्ञान तिमिर हरने वाले ।।टेर।।
पार्श्वनाथ महाराज गये शिव धाम नाम जयकारी है।
जिनके शासन मे हुवे मुनि आप बडे गुणधारी है।।
चार ज्ञान चवदे पूर्वी अप्रतिबंध विहारी है।
तरु - जिम समभावी दया निधि पूरण परउपकारी है।।
।शेर।। सावत्थी का वाग मे आये विचरते महाणजी।
मुनि आगमन सुन वदवा कई जा रहे इन्सानजी।।
परदेशी राजा का है चित्त नामा परधानजी।
भेजा हुआ आया यहा राजा के घर महमानजी।।
।।छोटी कडी।। इस ने भी सुनी यह वात चित्त हुलसाया।
वैठे रथ मे मुनिराज समीपे आया।।
फिर मौका देख गुरु ऐसा ज्ञान सुनाया।
खुल गये जिगर के नैन प्रेमरग छाया।।
।।द्रोण।। व्रत धार चित्त जो हुआ श्रावक सेंठा,
महाराज, विनय कर शीश नमायाजी।
रथ माही वैठ कर आप पीछा नगरी मे आयाजी।।
राज की तरफ से मिली सीख चितजी को,
महाराज, हिये अति हर्ष भरायाजी।
मुनिराज दर्शन के काज वाग मे चल कर आयाजी।।
।।चलत।। करके वदना सिताप, चित्तजी बोले यूं साफ,
नगरी सितम्बका आय, कभी करजो मया २।।
परदेशी नामा राय, एक माने जीव काय,
मोटो करे छे अन्याय, घट घालो दया २।।
मुनिराज ततकाल, दीनी वाग की मिसाल,
करके जवाव सवाल, मन प्रशन भया २।।

अर्ज कबूल कराय, यहाँ से तुरत सिधाय,
नगरी सितम्बिका आय, हाल भूप को कया २ ॥

॥मिलत॥ कब आवे मेरे गुरु यहाँ अब सब कारज सरने वाले ॥१॥
सावत्थी नगरी से दयानिधि सीतम्बका नगरी आया ।
उपकार जानके, पाच से सतो को सग मे लाया ॥
चित्त प्रधान सुनि मुनि आगमन अति चैन चित मे पाया ।
परदेशी भूप को करी तजवीज वहा लेकर आया ॥

॥शेर॥ राजा और प्रधान दोनो, अश्व लिया कर धारजी ।
इधर उधर टेलावता, आया नजर अणगारजी ॥
सुण चित्त यह जड मूठ, कौन है बेकारजी ।
बैन तो मीठा लगे है दीपता दीदारजी ॥

॥छोटी कडी॥ तब चतुर चित्त यूं कहे सुनो महाराया ।
यह केशी कुवर महाराज मैं भी सुन पाया ॥
यह अलग अलग दो माने जीव और काया ।
है पूरण ज्ञान भण्डार तजी मोह माया ॥

॥द्रोण॥ इतनी सुन के नृप चितजी से रहा पूछी,
महाराज, मुनि पां दोऊ मिल आयाजी ।
है अवधि ज्ञान तुम पास पूछे परदेशी रायाजी ॥
ज्यो दाण चोर बनिया उपट राह पूछे,
महाराज, मुनि दृष्टात सुनायाजी ।
तैने सतो का अपराध किया नही शीप नवायाजी ॥

॥चलत॥ सुन कर सतो के बैन, नृप किया नीचे नैन,
मेरे असल मे सेन जब कठिन कही २ ॥
राजा बोले यो सिताप, क्षम्यावन्त साधु आप,
गुन्हा कीजे सब माफ मेरी भूल रही २ ॥
थोडी बखत के काज, यहा बैठू मैं आज,
मरजी होय तो महाराज, दीजे हुक्म सही २ ॥
जरा समझ राजान, यह तो तेरा ही आराम,
हम तो साधु है महान, करें मना नही २ ॥

।।मिलत।। राजा मन मे जान गया ये मुझे निहाल करने वाले ।।२।।
बैठा भूप पूछे कर जोडी क्या मानो तुम करो मया ।
तव भरी सभा मे मुनीश्वर जीव अरु काया अलग कह्या ।।
मेरा दादा था अति पापी, नही थी उनके जरा दया ।
वह आयुष्य करके तुम्हारी कहेन मुझव तो नर्क गया ।।
।।गेर।। मैं पोता अति प्राण प्यारा, कहै मुझे वह आयजी ।
तो जीव काया है अलेदा, मान तो तुम वायजी ।।
मधुर वैन मुनिवर कहै, सुन ध्यान धरके रायजी ।
तेरा दादा नर्क से कैसे सके वह आयजी ।।
।।छोटी कडी।। तेरी सूरीकंता नार करके सिणगारा ।
अन्य पुरुप के साथे विलसे सुख संसारा ।।
तैंने खुद आखो से देख लिया कर्म सारा ।
सच बोल उसे क्या देवे दण्ड भूपारा ।।
।।द्रोण।। तत्काल खडग निकाल उसे मैं मारूं,
महाराज, करे तुमसे नरमाईजी ।
मत मारो मुझे महाराज करूं ऐसा कभी नाईजी ।।
क्या कहो आप मैं हरगिज कभी न छोड़ू
महाराज, कहे फिर तर्क उठाईजी ।
मैं मिलूं कुटम्व से जाय आऊं पीछे क्षण माहीजी ।।
।।चलत।। राजा कहै यू विचार मेरा है वह गुन्हेगार,
मैं तो छोडू नही लगार, कैसे घर जावे २ ।।
इसी भव मे साक्षात, उसके कुटम्व के साथ,
दु ख आराम की वात, किम दरसावे २ ।।
तेरा दादा कहूँ साफ, करके अष्टादश पाप,
गया नरक मे आप, यहा किम आवे २ ।।
जीव काया न्यारी मान, राज तू है विद्वान्,
झूठी टेक मती तान, मुनि फरमावे ।।२ ।।
।।मिलत।। नही मानू महाराज तुम तो बुद्धि से कथन करने वाले ।।३।।
मेरी दादी थी गुणवन्ती दया धर्म से हटी नही ।
करी वहुत तपस्या तुम्हारी कहन मुझव सुरलोक गई ।।

उनको कौन रोकने वाला वह अपने आधीन रही ।
मैं था अति प्यारा आज दिन तक नही मुझ से आन कही ।।

।।शेर।। दादी आ वर्णन करती, सुरलोक का बयानजी ।
तो जीव काया है अलेदा, लेतो क्यो नही मानजी ।।
भूप कहे इस न्याय से, मेरा है मत परमानजी ।
कीजे खुलासा बात का, बैठे है सब इन्सानजी ।।

।।छोटी कड़ी।। इतनी सुन कर मुनिराज नजीर सुनावे ।
कर स्नान भूप तू देव पूजवा जावे ।।
एक पुरुष देख [1]तारछ मे तुझे बुलावे ।
सच बोल वहा तूं जावे के नही जावे ।।

।।द्रोण।। नरनाथ कहै जाना तो दूर रहने दो,
महाराज, उधर देखूँ भी नाईजी ।
वह महा अशुचो स्थान और दुर्गन्ध उस माईजी ।।
इस मनुष्य लोक की दुर्गन्ध ऊची जावे,
महाराज, पाच सौ जोजन ताईजी ।
इस कारण करके राय देव यहाँ सके न आईजी ।।

।।चलत।। अब तो समझ तू राय, पक्ष छोड दे अन्याय,
अलग मान जीव काय, अपनी क्यो ताने २ ।।
सच्ची कहूँ मुनिराय, यह तो बुद्धि से बनाय,
दीनी युक्ति जमाय, हम नही माने २ ।।
एक चोर हाथ आया, लोह कोठी मे धराया,
पूरा जापता कराया, ठाया पुरुषाने २ ।।
केही दिनो मे कढाया, वह तो मरा दर्शाया,
छेक नजर न आया, करी पहिचाने २ ।।

।।मिलत।। कैसे मानू जीव अलग कहो सगय दूर हरने वाले ।।४।।
लेकर ढोल को कोई पुरुष जाकर बैठे भुहरा माई ।
ऊपर से सिल्ला ढाक कर लेप करे अति चतुराई ।।

---

१ सडास, अशुचि स्थान ।

भीतर ढोल का शब्द करे वहा बाहर निकसे के नाई ।
सच बोल नरपति छिद्र क्या देवे किसी को दर्शाई ॥

॥शेर॥ छिद्र मही के नही पड़े, पर शब्द निकले आयजी ।
प्रतीत कर इस न्याय से, परदेशी नामा रायजी ॥
जीव भेद पाषाण को, ऊँचा इसी तरह आयजी ।
दोनो चीजें है अलग, मान ले मुझ वायजी ॥

॥छोटी कड़ी॥ तुम बुद्धिमान मुनि दीनी युक्ति जमाई ।
मेरे तो दिल मे हरगिज बैठे नाई ॥
एक दिन चोर को मारा सास रुकाई ।
लोह की कोठी मे दीना उसे धराई ॥

॥द्रोण॥ फिर ढक्कण ढाँक छिद्र को बध कराया,
महाराज, रक्खा कीतने दिन ताँईजी ।
देखा तो खोल के कीडे बहुत उसके तन मांईजी ॥
बाहिर से भीतर जीव जिधर से आए,
महाराज, छिद्र देता दर्शाईजी ।
तो लेता मान महाराज तर्क करता भी नाईजी ॥

॥चलत॥ गोला लोहे का झाल, दिया अग्नि मे डाल,
धमता देखा थे भूपाल, हाँ हाँ भूप कही २ ॥
धमे धमण दबाय, तामे अग्नि भराय,
उस गोले के राय, छिद्र होय या नही २ ॥
नृप कहे यो विचार, उस गोले के मझार,
छेद होय ना लगार, यह तो बात सही २ ॥
बस यही मिसाल, मान मान महिपाल ।
मिथ्या भरम को टाल, मुनि बहुत कही २ ॥

॥मिलत॥ नही मानू महाराज तुम तो बुद्धि से कथन करने वाले ॥५॥
सब जीवो की शक्ति सरीखी है या नही मुझे दीजे कही ।
तब मुनिवर बोले सरीखी शक्ति है इसमे फर्क नही ॥

तरुण पुरुष दिल चाहे वहा खुद डाले तीर तो पडे जही ।
उतनी ही दूर पै लघु बालक से कहो किम जाए नही ॥

॥शेर॥ धनुष नवा जीवा नवी दृढ बन्ध उसके राय जी ।
तरुण पुरुष जब तीर वावे जाय के नही जाय जी ॥
भूप कहै हा क्यो न जावे मुनि दिया फिर न्याय जी ।
धनुषादिक कच्चा हुवे तो फिर जाय के नही जाय जी ॥

॥छोटी कडी॥ इतना तो दूर वह तीर जाय कभी नाई ।
बस यही न्याय तूँ समझ नृप मन माही ॥
यह तरुण पुरुष सम जीव धनुष तन माई ।
जैसा हो वैसा प्राक्रम दे दर्शाई ॥

॥द्रोण॥ क्यो करे तान ले मान जीव और काया,
महाराज, भूप कहै शीष हिलाईजी ।
तुम बुद्धिमान् महाराज मानू मैं हरगिज नाईजी ।
जितना लोहे का भार तरुण ले जावे,
महाराज, धरी कावड के माई जी ।
उतनी ही दूर अति वृद्ध क्यो न ले जाए उठाईजी ॥

॥चलत॥ जो यह बात मिलती महान, जीव काया लेता मान,
इतनी करने से तान, मेरे गरज कही २ ॥
कावड नवी हो तो राय, लोहा धरके उस माय,
तरुण पुरुष उठाय, लेकर जाय या नही २ ॥
नृप कहै हाँ ले जाय, फिर बोले मुनिराय,
कावड जीरण हो तो राय, अब बोल सही २ ॥
नही नही कृपाल, कावड जीरण दयाल,
मुनि जीव पे मिसाल, उतार दई २ ॥

॥मिलत॥ नही मानूं महाराज तुम तो बुद्धि से कथन करने वाले ॥६॥
पहले तोल त्राजू मे चोर कू मारा खून निकला भी नही ।
किया प्रश्न सातवा फिर तोला तो वजन मे आया वही ॥
कमती होता जरा वजन मे तो मैं लेता मान सही ।
फिर तर्क उठा के सन्तो से झूठी तान करता भी नही ॥

॥शेर॥ हवा भरी चर्म दीवडी, देखी कभी थे रायजी ।
हा हा देखी स्वामीजी, कृपा करो फरमायजी ॥
पहले तोल वध खोल दे, नही रहै हवा उस मायजी ।
फिर तोले तो वजन मे, कमती होवे या नायजी ॥

॥छोटी कडी॥ वह वजन माय कमती तो हुवे कभी नही ।
बस यही न्याय तू समझ नृप मन माही ॥
जो रूपी हवा नही देवे भार दर्शाई ॥
तो जीव अरूपी ये क्या वजन गिनाई नाई ॥

॥द्रोण॥ क्यो करे तान, ले मान जीव और काया,
महाराज, भूप कहे शीप हिलाईजी ।
तुम बुद्धिमान महाराज मानू मैं हरगिज नांईजी ॥
एक मारा चोर तत्काल वहुत खड करके,
महाराज, जीव फिर देखा उस माईजी ।
जो आता नजर तो लेता मान हठ करता नाईजी ॥

॥चलत॥ मुनि कहै यो विचार, राजा तू तो है गवार ।
जैसा था वो कठियार, कोई फर्क नही २ ॥
कठियारा किस न्याय, मुझे कहो मुनिराय ।
आप दीजे फरमाय, मिटे भरम सही २ ॥
मिल कर बहु कठियार, गया वन के मझार ।
उसमे था एक गवार, उसको ऐसे कही २ ॥
इस अरणी से तत्कार, लीजे अग्नि निकार ।
करजे रसोई तैयार, आवा इन्धन लही २ ॥

॥मिलत॥ वो मूर्ख अरणी को कापी खड खंड मे अग्नि भाले ॥७॥
नही मिली अरणी मे अग्नि, सोच करे आँसू डारे ।
इन्धन ले लेकर आए जगल से वे सब कठियारे ॥
पूछी वात मूर्ख से तव तो वितक हाल कह्या सारे ।
अरणी को घीस के वताई अग्नि काढ कर तत्कारे ॥

॥शेर॥ आहार कर फिर इन्धन लेकर गये वे नगरी मायजी ।
जैसा काम उसने किया वैसा किया थे रायजी ॥

छती अग्नि अरणी मांही नही आये नजरे रायजी ।
जीव काया है अलेदा मान ले इस न्यायजी ॥

॥छोटी कडी॥ प्रतिष्ठित पुरुष तुम होकर सन्त सयाणा ।
इन बहुत मनुष्य का हुआ यहा पर आना ॥
जड मूढ कहा सो मुझे तो है गम खाना ।
पर है क्या योग आपको ऐसा वचन फरमाना ॥

॥द्रोण॥ तूं जाणे नृप सच बोल परिषदा कितनी,
महाराज, परिषदा चार बताई जी ।
अब अलग अलग दड नीति चारो की दे दरशाई जी ॥
जो कोई पुरुप अपराध करे राजो का,
महाराज, देवे उसे सूली चढाई जी ।
करे वैश्य जाति के बाहर माहण दे छाप लगाईजी ॥

॥चलत॥ ऋषियो की सभा माय, कोई वाद करे आय ।
चाल सीधी चले नाय, तेना दुष्ट हिया २ ॥
जोश साधु को आय, जड मूढ फरमाय ।
वह तो यही दण्ड पाय, कहूँ साफ इहा २ ॥
बस नीति को संभाल, तू भी चला टेढो चाल ।
तब मैंने भी महिपाल, यही दण्ड दिया २ ॥
तुम सुणो हो कृपाल, जो था पहला ही सवाल ।
उस पै देने से मिसाल, मैं तो समझ गया २ ॥

॥मिलत॥ क्यो इतनी हठ करी पूछे मुनि शिव सुख के वरने वाले ॥८॥
ज्ञानादिक के काज आज महाराज प्रश्न किया विस्तारी ।
मुनि पूछे नृप से होते कहो कितनी किसम के व्योपारी ॥
चार तरह के होते वणिक जाने बात दुनिया सारी ।
ले माल उधारा दाम देना फिर उनके अखत्यारी ॥

॥शेर । देवे गुण बोले नही, गुण बोले देवे नाय जी ।
देवे और गुण भी करे, नही देवे शठ भिड जाय जी ॥
तीन योग्य व्यवहारिये, अयोग्य एक कहेवाय जी ।
मैं भी जाणू है नृप तूं, चौथे सरीखा नाय जी ॥

॥छोटी कड़ी॥ विद्वान् पुरुष तुम माही बहुत चतुराई।
ज्यो त्यो करके देते हो युक्ति जमाई॥
नवमा प्रश्न नृप करे सभा के माई।
है कैसा जीव तुम देवो अपना दर्शाई॥

॥द्रोण॥ मुनिराज कहे सुण नृपति इस दरखत का,
महाराज, पत्र कहो कौन हिलावे जी।
नहो देवादिक महाराज पवन इनको कंपावेजी।
क्या पवन चीज सच बोल नृप तू देखे,
महाराज, नजर यह तो नही आवे जी।
तो जीव अरूपी चीज कहो हम कैसे बतावेजी॥

॥चलत॥ अरे अब तो छोड तान, राजा तू है बुद्धिमान।
जीव काया न्यारी मान, बहुत देर भई २॥
प्रश्न करे फिर राय, हाथी कुंथुवा के माय।
जीव सम है या नाय, मुझे कहीजे यई २॥
निश्चय समझ तू राय, हाथी कुंथुवा के माय।
जीव सरीखा गिनाय, कोई फर्क नई २॥
मोटी चीज मुनिराय, कैसे छोटी मे समाय।
कहो नजीर लगाय, मिटे भर्म सई २॥

॥मिलत॥ दी नजीर दीपक भाजन की न्याय पंथ चलने वाले॥६॥
अब तो मान जीव और काया क्यू इतनी तू कहलावे।
तब बोला नरपति पुराणी श्रद्धा नही छोडी जावे॥
लौह वनिया की तरह याद रख अरे नृप तू पछतावे।
मुनि साफ सुनाई छोड मिथ्या श्रद्धा क्यो शरमावे॥

॥शेर॥ लौह वनिया कैसा हुवा, तुम कहो मुझे समझाय जी।
तब मुनि कहै यह भी सुन ले, एक ध्यान धर कर रायजी॥
धनार्थी बहु वाणिया जाता था जगल मांयजी।
एक खान देखी लोहे की, लीना है सब ने उठायजी॥

॥छोटी कड़ी॥ आगे जाता तांवा की खान जब आई।
ले लिया तुर्त तब लोह दिया छिटकाई॥

था एक अनाडी उसने माना नाई।
कर दयादृष्टि सब लोक रया समझाई ॥

॥द्रोण॥ रूपे की खान, सोने की फिर रत्नो की,
महाराज, वज्र हीरो की आईजी।
ले लिया अधिक से अधिक तजा सस्ते कु वहा हीजी ॥
सब लोक कहे ले ले तू भी क्या देखे,
महाराज, मूढ हठ छोडे नाईजी।
मैं बहुत दूर का लिया भार किम दू छिटकाईजी ॥

॥चलत॥ ले ले के धन माल, अति होके खुशहाल,
घर आये सब चाल, अति सुख पावे २ ॥
उस मूरख की बात, अब सुनो नरनाथ,
लिया लोहे कु साथ, बेचन जावे २ ॥
सीधा बाजार मे आया, बेचा लोहा जो लाया,
मूल्य थोडासा आया, मन पछतावे २ ॥
दीनी मैंने जो मिसाल, ऐसा तू है महीपाल,
लीजो अब हो सभाल, मुनि फरमावे २ ॥

॥मिलत॥ साफ साफ मुनिराज कही राजा से नही डरने वाले ॥१०॥
नही बनू लोह वनिया जैसा कहै नृप यो कर जोडी।
मन वच काया से मैंने तो मिथ्या श्रद्धा छोडी छोडी ॥
मान लिया जीवादिक मैंने बहुत करी लम्बी चौड़ी।
दिल मे मत लाना क्यो कि महाराज मेरे मे बुध थोडी ॥

॥शेर॥ अब मुझको धर्म देशना, फरमावो कृपानाथजी।
वैराग्य रग ऐसा चढे, उतरे नही दिन रातजी ॥
मधुर कथा मुनिवर कही, तब जोडी दोनो हाथजी।
श्रद्धया वचन मैंने आपका यू विनवे नरनाथजी ॥

॥छोटी कडी॥ वे धन्य पुरुष जो संयम का व्रत धारे।
ऐसे तो भाव नही है महाराज हमारे ॥
मुझे श्रावक का व्रत दीजे कीजे भव पारे।
बिन ऐसे गुरु के कौन करे निस्तारे ॥

॥द्रोण॥　तब मुनिराज महिपति को व्रत धराया,
महाराज, बहुत उपकार कामायाजी।
गया निज स्थानक महिपाल, खुशी का पार न पायाजी॥
फिर दूजे दिन बहु विधि सज कर असवारी,
महाराज, महिपति वंदन आयाजी।
कर जोड नमाकर शीष सभी अपराध खमायाजी।

॥चलत॥　राजा सुन ले एक सीख, मत होजे अरमणीक,
अरे पालजे तू ठीक, व्रत नेम लिया २।
मेरा जितना है राज, उस राज के महाराज,
कुल चार हिस्से आज, मैंने किया २॥
चौथे हिस्से का आदान, दुखी दुर्बल गिल्यान,
ताकू दूगा मैं दान, कहूँ प्रगट इया २।
पाये सुयश अपार, करके बहु उपकार,
लेकर सतो को लार, मुनि विहार किया २॥

(तर्ज —गुरु निर्ग्रन्थ नही जोया जीव तैंने गुरु निर्ग्रन्थ नही जोया रे)

गुरुजी मिले मुझे ज्ञानी, पुण्य से गुरुजी मिले मुझे ज्ञानी रे ॥टेर॥
कर जोडी राजा परदेशी इण विधि बोले वाणी रे।
मोह नीद से आप जगायो छिटक ज्ञान को पाणी रे।॥
मेट दियो अज्ञान अन्धेरो, दे शिक्षा हित आनी रे।
मैं उपकार कभी नही भूलूं, निश्चय लीजो जानी रे॥२॥
दया करी फिर दर्शन दीजो, मिष्ट सुनाजो वानी रे।
भव दुःख से मुझ आप छुडाजो, भक्त आप को जानी रे॥३॥
दो ठाणा मिल आया रोहतक से, अर्ज भायां की मानी रे।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य गावे, जोड बनाई [१]कानी रे॥४॥

॥मिलत॥ नर नारी गुण बोल रहै नगरी मे सुख करने वाले॥११॥
महिपति भी निज भवन गया श्रावक का व्रत शुद्ध पाले है।
वैराग्य रग से सदा अतिचार दोप को टाले है॥

---

१ एक गाम का नाम।

करके तपस्या पूरब सचित पाप कर्म को गाले है ।
खुद उसी दिन से राज्य काज भी नही सभाले है ।।

॥शेर॥ प्राणवल्लभ रायनी तब सुरीकंता नारजी ।
कोई दिन मन चितवे भर्म्यो है मुझ भरतार जी ।।
निज पुत्र को लिया बुलवायके यो बोले शक निवार जी ।
तुम पिता को अग्नि या विप शस्त्र से दे मार जी ।।

।।छोटी कडी । सब राज्य पाट मैं देऊ गी तुझ ताई ।
इतनी सुन के हा ना भी कहा कछु नाही ।।
फिर वही वात दो तीन दफे फरमाई ।
विन उत्तर दिया गया तत्क्षण कुँवर चलाई ।।

॥द्रोण।॥ तव पाछल बुद्धि नार विचारे मन मे,
महाराज, कीजे अब कौन उपायाजी ।
विष मिश्रित आहार बनाय पति को न्यौत जिमायाजी ।।
एक लेता ग्रास नृप जान गया बुद्धि से,
महाराज राणी पर रोष न लाया जी ।
उठ चला आप सिताप, घर्म स्थानक मे आया जी ।।

। चलत॥ विधि सहित चट पट, किया अणसण झट पट ।
नही काहूँ से लट पट, नृप अडोल रया २ ।।
पूर्व पाप को पखाल, शुद्ध भावो मे भूपाल ।
करके काल समय काल, पहले स्वर्ग गया २ ।।
महा विदेह क्षेत्र माय, अष्ट कर्म को खपाय ।
जासे मुक्ति के माय, जिनराज कया २ ।।
सवत गुन्नीसे छत्तीस, ऊपर अधिक बत्तीस ।
पूरे दिन एक वीश, स्यालकोट रया २ ।।

॥मिलत॥ मेरे गुरु नन्दलालजी मुनि जिनवर से ध्यान धरने वाले ।।१२।।

: ५६ :

टके टके की चार बातें

(तर्ज —जबू कह्यो मान लेरे जाया, मति ले सजम भार)

चतुर नर सांभलो कहूँ बात कथा अनुसार ।।टेर।।
जंबूद्वीप सुद्वीप का जी, भरत क्षेत्र के मांय,
नगरी भली शोभावतीजी, वलवंत नामा राय ।।१।।
चतुरंग सेना सामटीजी, धन का भरया है भडार।
महाराणी सुखमालिकाजी, भोगवे भोग उदार ।।२।।
एक दिन नृप इच्छा हुईजी, हयवर[1] आरूढ होय।
सैर करन ने नीकल्योजी, साथे नौकर नही कोय ।।३।।
चमक्यो हय कोई कारणेजी, धावे जगल मांय।
जिम जिम खैंचे लगामने जी, तिम तिम आघो[2] जाय ।।४।।
भूपति पिण सैंठो[3] रह्योजी, साहस दिल मांही धार।
सहजे ही हय उभो रह्योजी, नृप लीनो पुचकार ।।५।।
पानी को प्यासो थकोजी, घबरायो महाराय।
व्याकुल चित हय फेरियोजी, आण्यो[4] मारग माय ।।६।।
चलता दूरथी देखियोजी, सुग्रीव नामा ग्राम।
तरुवर शीतल छांह मे जी, आय लियो विश्राम ।।७।।
जाट सुतो थको जाणियोजी, पथी को देख दीदार।
खाट बिछायो आपणोजी, बैठाया कर मनुहार ।।८।।
निज नारी ने इम कहेजी, आव आव इहाँ आव।
शीतल जल लोटो भरीजी, पुण्यवंत नर ने पाव ।।९।।
ते कहे तुम ही ऊठनेजी, क्यो नही देवो पिलाय।
किण किण ने पाया करूँजी, कई आवे कई जाय ।।१०।।
बावली मान मेरो कह्योजी, हठ मत कर इणवार।
तुझे टका एक एक नी जी, बात सुणावसुं चार ।।११।।

---

१ घोडा । २ आगे । ३ पक्का ४ लाया ।

तब तो उठ उतावलीजी, दीनो उदक पिलाय।
अब कहो चारो बातडीजी, नृप भी सुणे चित लाय ॥१२॥
१ नारी रक्खें अति पीहर मे जी, २ पर को सौपे निज काम।
३ निर्दय की करै नौकरीजी, ४ धूर्त के धरियो दाम ॥१३॥
चारो ही अयोग्य छेजी, इण मे संशय नाय।
ऋषियो के मुंह साभल्योजी, आखिर ते पछताय ॥१४॥
झटपट उठ्यो भूपतिजी, अश्व हुवो असवार।
निज नगरी मे आवियोजी, हर्ष्यो सहु परिवार ॥१५॥
चट पट लागी चित्त मे जी, खुद ससुराल मे जाय।
राणी की परीक्षा करूजी, भर्म सहु मिट जाय ॥१६॥
तुरत बुलाय दीवाननेजी, राज को काज भोलाय[1]।
प्रजा की करजो पालनाजी, निरपक्ष लेकर न्याय ॥१७॥
वात किहा करजो मतीजी, जाऊं छू मैं ससुराल।
मास दो मास के अंतरेजी, शीघ्र ही आऊ चाल ॥१८॥
मोहरां लीनी डेढ सो जी, फिर लीनी पच लाल।
ब्राह्मण रूप बनायने जी, पहुंच्यो ते ससुराल ॥१६॥
ब्राह्मणी के घर ठेरियोजी, आठो ही पहर निवास।
मोहरा भी थापण रखीजो, जाण अति विश्वास ॥२०॥
नौकरी काजे फिर रह्योजी, करतो बहुत तलास।
फिरता फिरता आवियोजी, राय का रक्षक पास ॥२१॥
इहा करो तुम नौकरीजी, कर ली खुलासा बात।
पाच रुपये महावार के जी, जीमो रसोडे भात ॥२२॥
हुक्को पाणी पिलावणो जी, मौज करो दिन रात।
कर मजूरी रह गयोजो, श्रोता सुणो आगे बात ॥२३॥
राणी इणहिज रायनीजी, रक्षक-घर हर बार।
आवे जावे रामत करेजी, अनुचित भी व्यवहार ॥२४॥
रे निर्लज्ज कुलक्षणी जी, भूल गई कुल जात।
अब मुझ को निश्चय हुओजी, जाट कही सच बात ॥२५॥

---

१ सम्भला कर।

क्षिणक्षिण साम्हू देखतीजी, राणीजी नजर पसार ।
अनुमाने कर [1]ओलख्योजी, यो तो मुझ भरतार ॥२६॥
रोष करी कुलटा कहेजी, नौकर की वदनीत ।
छिद्र रहे नित देखतो जी, तुम को करसी फजीत ॥२७॥
मूल थी एह हणावणोजी, तब मुझ मन संतोप ।
नही तो मुझ हत्या तणोजी, तुम सिर होगा दोष ॥२८॥
शीघ्र [2]सोभाग बुलायनेजी, भृत्य दियो पकडाय ।
प्राण घात इणकी करोजी, जगल मांय ले जाय ॥२९॥
किहा ले जावो मुझ भणीजी, पूछे तब महिपाल ।
ले जावा तुझ मारवाजी, हुकम दियो कोटवाल ॥३०॥
मत मारो करुणा करोजी, तुम आवो मुझ लार ।
मोहरां देऊ डेढ सो जी, मुझ छोड़ो इणवार ॥३१॥
सब मिल आवे पंथ मे जी, मन सोचे नरनाथ ।
निर्दय की बुरी नौकरी जी, जाट कही सच बात ॥३२॥
ब्राह्मणी के घर आवियोजी, वात कहै चुप चाप ।
मोहरा रक्खी थी डेढसौजी, ते सव दो इणको आप ॥३३॥
ब्राह्मणी सुन साम्हे पडीजी, जाय तेरो सत्यानाश ।
रे रे [3]नपूता खोजग्याजी, मोहरां रक्खी किण पास ॥३४॥
कुछ भी बोल नही सक्योजी, मौन रह्यो महिपाल ।
दीधी तुरत सोभागनेजी, पांचो ही लाल निकाल ॥३५॥
आपत्ति सब दूरी टलीजी, मन चिंते नरनाथ ।
धूर्त के थाती न स्थापवोजी, जाट कही सच वात ॥३६॥
धन गया की चिंता नहीजी, वचिया अपना प्रान ।
कोई किसी को सगो नहीजी, सब जग लीनो जान ।३७॥
जावो भाई घर आपणेजी, मैं भी जाऊ निज ठाम ।
एम कही सव चालियाजी, पहुचे निज निज गाम ॥३८॥
आपणो राज सभालियोजी, आनद मे दिन जाय ।
अब मैं जाऊं निज सासरेजी, इम चिंते महाराय ॥३९॥

---

१ पहिचाना । २ सोभाग-चाण्डाल । ३ सत्यानाशी ।

मत्री ने राज भोलावियोजी, आडम्बर लेई लार ।
आयो निज ससुराल मे जी, दियो आवास उतार ।।४०।।
राणी देख विचारियोजी, ते तो हो तो नर और ।
पति जाणी ने मरावियोजी, पाप कियो महाघोर ।।४१।।
कई दिन राख्या पाहुणाजी, कर करके मनुहार ।
अन्त विदा मे दीधो घणोजी, धन वस्त्रादिक सार ।।४२।।
और चहावे सो मागो तुम्हेजी, इम बोले महिपाल ।
एक तो दीजे वो ब्राह्मणीजी, दूजो दीजे कोटवाल ।।४३।।
मु ह मांगा दोही दे दियाजी, निज राणी लई लार ।
चाल्यो नृप ससुराल से जी, करके आप जुहार ।।४४।।
शोभावती नगरी विषेजी, आयो बलवन्त राय ।
आपणो राज सभालियोजी, आनद मे दिन जाय ।।४५।।
एक दिन कोप्यो भूपतिजी, कहे चक्षु कर लाल ।
एक राणी दूजी ब्राह्मणीजी, तीजो आणो कोटवाल ।।४६।।
तीनो खडा किया सामनेजी, रक्षक से पूछे एम ।
उन नौकर को बेगुनाहजी, तुम मरवायो केम ।।४७।।
हुक्को पाणी भर पावतोजी, करतो वक्त व्यतीत ।
इण दुष्टा को केण से जी, क्या समझी बदनीत ।।४८।।
ते कहे हा सब सत्य छै जी, इण मे झूंठ न कोय ।
भूप कहे करणी जैसाजी, अब फल लीजो जोय ।।४९।।
अब राणी ने इम कहेजी, रोष करी महाराय ।
रे निर्लज व्यभिचारणीजी, मर जाती विष खाय ।।५०।।
अपणो शब्द सभाललेजी, किण की है बदनीत ।
आपणो पति छोड के जी, पर नर सेती प्रीत ।।५१।।
इम सुण राणी चिंतवेजी, मैं थी खुद असराप ।
मनुष्य मराव्यो ते सहीजी, प्रगट हुओ ते पाप ।।५२।।
भोगव तू कृत्य आपणोजी, कब हुं न छोडू तोय ।
भृत्य की जो हुई गतिजी, वही गति तुझ होय ।।५३।।
भूप कहे सुन ब्राह्मणीजी, तुझ घर कीधो निवास ।
मोहरा रक्खी थी डेढ सौजी, जाणी अटल विश्वास ।।५४।।

जब आपत्ति के वक्त मे जी, मोहरा मांगी थी आय ।
मातंग को देई आपणाजी, ले सू प्राण बचाय ॥५५॥
श्वानणी जिम साम्हे पडीजी, बोली सो बोल सभाल ।
निर्दय होय दगो दियोजी, कर्म किया थे चंडाल ॥५६॥
तीनो को जेल धरावियाजी फेर होगा सब न्याय ।
मंत्री आय मुजरो कियोजी, तब बोले महाराय ॥५७॥
लाभ खर्च भंडार को जी, दीजे हिसाब बताय ।
इम सुण मंत्री कंपियोजी कीजे कौन उपाय ॥५८॥
जाच परताल पंचा करीजी, एक लियो सत्य पक्ष ।
सर्व हिसाब मिलावताजी, घाटो जच्यो तीन लक्ष ॥५९॥
ये सुन बात दीवान की जी, रोष भरयो महाराय ।
चारो को शूली की सजाजी, आज्ञा दीनी फरमाय ॥६०॥
प्रजा मिल अरजी करेजी आप छो दीन दयाल ।
ये दंड माफ करो तुम्हेजी, दूसरी राह निकाल ॥६१॥
हट खैंची मानी नहीजी, आखिर भूप निकाल ।
चारो का नाक कटायनेजी, दे दियो देश निकाल ॥६२॥
इम राजा मन चिन्तवेजी, पूर्ण करी पहिचान ।
जिसको अपणा जाणिग्रेजी, वो ही करे नुकसान ॥६३॥
अहिंसा धर्म है आपणोजी, सब सुख को दातार ।
चोथो शरणो जिन कह्योजी, जगत मे एक आधार ॥६४॥
सुग्रीव ग्राम का जाटनेजी, बुलवायो तिण वार ।
बात टका टका एक नी जी, तुम्हे कही थी सार ॥६५॥
मैं भी सूतो सुणी खाट पैजी, बात कही जब चार ।
चारो परीक्षा मैं करीजी, सांच कहूं इण वार ॥६६॥
प्राण बचा जीव तो रह्योजी, पायो नवो अवतार ।
राज रिद्ध सब भोगवू जी, सब तेरो उपकार ॥६७॥
भूप खुशी हुवो जाट पै जी, प्रगट्यो प्रेम अथाग ।
दीधो बहुत इनाम मे जी, सहस्र दीनार पोशाक ॥६८॥
जिन धर्म छै साचो सगोजी, और सगो नही कोय ।
आराधन जो कोई करेजी, ते नर सुखिया होय ॥६९॥

उस ही दिन से भूपति जी, पाचो इन्द्रिय वश कीध ।
दानादिक शुभ कार्य मे जी, बहु विध लाहो लीध ॥७०॥
ममत्व नही कोई वस्तु पैजी, समभावे महिपाल ।
स्वर्ग सिधाई आत्माजी, काल समय कर काल ॥७१॥
अष्टमी शुक्ल अषाढ कीजी, दोय हजार के साल ।
खूब कहे ब्यावर विषेजी, सरस बहोतरी ढाल ॥७२॥

: ६०

श्री भरत चक्री सूर्योदय

(तर्ज—ख्याल)

भरतेश्वर राजा, पाया पूरण रिद्ध पूरव पुण्य से ॥टेर॥
जम्बू द्वीप का भरत क्षेत्र मे, तीजा आरा माय ।
देवलोक सम कही विनीता, नगरी श्री जिनराय हो ॥१॥
तिहा भोगवे राज भरतजी, पुरुषोत्तम नरनाथ ।
ऋषभदेवजी तात आपका, सुमगला अगजात हो ॥२॥
चक्र रत्न आय ऊपनो सरे, शस्तर शाला माय ।
आयुध धरियो पुरुष देख कर, दीनी बधाई आय हो ॥३॥
भूपति सुण तिण पुरुप को सरे, कीनो बहुत सतकार ।
चक्र रत्न जाय पूजियो सरे, कर महोत्सव विस्तार ॥४॥
विधि सहित पूज्या थका सरे, उठ्यो आप स्वमेव ।
चन्द्र मडल जिम शोभतो सरे, सहस्र देव करे सेव हो ॥५॥
चउ विध सेना सज करी सरे, भरतेश्वर महाराज ।
गजारूढ हो निकलिया सरे, षट खड साधन काज हो ॥६॥
चक्र रत्न आगे चल्यो सरे, गगन पंथ के माय ।
योजन योजन अंतरे सरे, सुख से वसता जाय हो ॥७॥
मारग मे नृप आण मनाता, लेता भेटणो आप ।
आगे आगे वढता जावे, प्रगटे तेज प्रताप हो ॥८॥
पूर्व दिशा मे चालता सरे, लवण समुद्र पास ।
चक्र रत्न तिहा उतरियो सरे, कीनो आप निवास हो ॥९॥
गज हौदे तरखान[1] रत्न पर, दियो हुक्म प्रकाश ।
पौषध शाला तुरत बनाओ, और एक आवास हो ॥१०॥

---

१ चक्रवर्ती के चौदह रत्न होते हैं । उसमे से एक वढई रत्न ।

देव प्रभावे दोनो चीजाँ, मुहुर्त एक मझार ।
हुक्म होन की देर काम मे, लगे नही कछु वार हो ॥११॥
गज से उतर पधारिया सरे, पौषध शाला माँय ।
मागध नामा देव को सरे, तेलो दीनो ठाय हो ॥१२॥
चौथे दिवस पार कर पौषध, लेकर सेना लार ।
रथ मे बैठ भरतजी चाल्या, लवण समुद्र मझार हो ॥१३॥
द्वादश योजन दूर रहीने, खेंच चलायो बाण ।
मागध नामा देव की सरे, पड्यो सभा मे आण हो ॥१४॥
बाण देख कर कोपियो सरे, बोल्यो होकर लाल ।
नाम बाच तत्क्षण देवता, प्रसन्न हुओ तत्काल हो ॥१५॥
कुंडल मुकुट कडावलि वस्तर, और गला का हार ।
बाण सहित ले भेटणो सरे, आय नम्यो चरणार हो ॥१६॥
लेय भेटणो भरतजी सरे, कर सुर को सम्मान ।
आण मनाय विदा कर दीनो, देव गयो निज स्थान हो ॥१७॥
हुई फतह रथ फेरियो सरे, आया कटक के माय ।
कर तेला को पारणो सरे, बैठा सभा मे जाय हो । १८॥
अट्ठाई महोत्सव कियो सरे, मागध सुर को राय ।
कटक उठाई चालिया सरे, दक्षिण दिशा मे जाय हो ॥१९॥
समुद्र के तट कटक स्थापके, तेलो दीनो ठाय ।
पूर्ववत् वरदाम देव को, दीनी आण मनाय हो ॥२०॥
इम हिज[1] फिर तीजो तेलो कर, साध्यो सुर परभास ।
उत्तर दिशा मे चालतां स कियो, सिंधु तीर निवास हो ॥२१॥
सिंधु देवी साधवा सरे, चतुर्थ तेलो ठायो ।
ततक्षण आसण कपियो सरे, अवधि ज्ञान लगायो हो ॥२२॥
कनक कुंभ मणि रत्न जडित, एक सहस्र अष्ट प्रमाण ।
दो भद्रासन मुघा मोल का, और पूर्ववत् जाण हो ॥२३॥
नजराणो कियो भेट मे सरे, भरत भूप पे आय ।
देवी आण मजूर करीने, आई तिण दिश जाय हो ॥२४॥
अट्ठाई महोत्सव कियो सरे, चाल्या कोण ईशाण ।
पास गिरि वेताड के सरे, कटक स्थापियो आण हो ॥२५॥

---

१ इसी प्रकार ।

गिरि वेताड कुमार देव को, तेलो पचमो ठायो ।
सिंधु देवी की तरह सरे, लेय भेटणो आयो हो ।।२६।।
भरत भेटणो लेय ने सरे, दीनी आण मनाय ।
महोत्सव कर निज कटक उठाई, पश्चिम दिशा मे जाय हो ।।२७।।
तमस गुफा के वारणे सरे, डेरा दीना राय ।
कर तेलो कृतमाल देव को, सुमरचो ध्यान लगाय हो ।।२८।।
चौदश भूषण को भर डाबो, श्री देवी के काज ।
कियो भेटणो आयने सरे, भेट्या श्री महाराज हो ।।२९।।
कर सत्कार विदा कर दीनो, सेनापति बुलाय ।
पश्चिमखड जाय वश करो सरे, हुकम दियो महाराय हो ।।३०।।
सेनापति सुसेण नाम महा, शूरवीर ने धीर ।
चउविध सेना सज्ज कर आयो, सिंधु नदी के तीर हो ।।३१।।
चर्मरत्न जल ऊपर स्थापियो, हुओ नाव आकार ।
सेना सहित बैठ किश्ती मे, उतरया पैली पार हो ।।३२।।
सम विषम ऊची और नीची, सर्व ठिकाणे जाय ।
भरत भूप का नाम की सरे, दीनी आण मनाय हो ।।३३।।
सेनापति के आयो भेट मे, क्रोडा को धन माल ।
पीछो फिर सिंधु नदी के, आयो किनारे चाल हो ।।३४।।
चरमरत्न से वहो विधिकर, पार उतर कर आया ।
जय विजय कर भरत भूप को, सेनापति बधाया हो ।।३५।।
जो जो अर्थ भेट मे आयो, ठव्यो[1] नृप के पास ।
कर सत्कार विदा कर दीनो, आयो निज आवास हो ।।३६।।
कर स्नान भोजन करी सरे, निज तम्बू के माय ।
शब्दादिक सुख भोगवे सरे, आनद मे दिन जाय हो ।।३७।।
कई दिना के अतरे सरे, सेनापति बुलवाय ।
तमस गुफा का खोलो द्वार यो, हुक्म दियो महाराय हो।।३८।।
सेनापति हिये हर्ष धरीने, कियो वचन परमाण ।
तीन दिवस को तेलो करके, रथ मे बैठो आण हो ।।३९।।
लेकर सेना साथ मे सरे, और घणो परिवार ।
आयो गिरि वेताड जहाँ पर, तमस गुफा का द्वार हो ।।४०।।

---

१ रक्खा

प्रथम पुजियो द्वार को सरे, फिर कूडी जल धार।
चदन चर्ची धूप देयकर, पुष्प चढाया सार हो ।।४१।।
रूपा का चावल से माड्याँ, आठ आठ मंगलीक।
पच वर्ण फूला तणा सरे, कियो पुज रमणीक हो ।।४२।।
सात आठ पग पाछो हट कर, दड रत्न ले हाथ।
कर प्रणाम द्वार को कूट्यो, जोर जोर के साथ हो ।।४३।।
तीन दफे कूट्या थका सरे, सररर खुलिया द्वार।
भरत भूप को दीनी बधाई, आकर कटक मझार हो ।।४४।।
कर तेला को पारणो सरे, सेनापति सरदार।
शब्दादिक सुख भोगवे सरे, नाटक का झणकार हो ।।४५।।
कटक उठायकर चालिया सरे, गज पर बैठ नरेश।
तमस गुफा के दक्षिण द्वारे, हुवा आप प्रवेश हो ।।४६।।
मणिरत्न को गज मस्तक पर, मेल्यो होय हुल्लास।
अन्धकार को नाश हुवो जिम, पूनम को प्रकाश हो ।।४७।।
लेय कॉंगणी रत्न नरपति, पूर्व दिशा के मांय।
प्रथम माडलो खैंचियो सरे, सूरज सम दरसाय हो ।।४८।।
लिखता जावे माडला सरे, योजन योजन दूर।
उमगजला मोटी नदी स, तिहा आया श्री हजूर हो ।।४९।।
डेरा दे तरखान रत्न पर, हुक्म दियो महाराय।
स्तम्भ अनेक अचल पुल बाँधी, दीनी आज्ञा भलाय हो ।।५०।।
पुल पर भूप कटक ले निकल्या, होता शब्द का नाद।
निमगजला नदी फिर आई, दो योजन के बाद हो ।।५१।।
तिमहिज ते पिण उतरिया सरे, भरतेश्वर पुण्यवंत।
पहुँच गया दरवाजे जहापर, तमस गुफा को अत हो ।।५२।।
बारह योजन चौड़ाई मे, ऊची योजन आठ।
आर पार लम्बी कही सरे, साठ माय दस घाट हो ।।५३।।
आप ही आप खुल गई गुफा जब, सेना निकली बहार।
देख अमाड चिलायती सरे, सज आव्या तिणवार हो ।।५४।।
भिडचा भरत की फौज सू सरे, दशोदिश दीनी भगाय।
सेनापति चढ अश्व रत्न पर, कर मे खड्ग समाय हो ।।५५।।
लोको के पीछे पड्या सरे, पीछा दिया भगाय।
वस्त्र तज सिंधु की रेत मे, तेला दीना ठाय हो ।।५६।।

मेघ मुख नागकुमार देवता, स्मरिया ध्यान लगाय।
कष्ट तणाँ प्रभाव सूं सरे, हाजिर होगया आय हो ॥५७॥
कहो किण कारण याद किया तव, सब जन वोल्या वाय।
कौन अभागी आवियो सरे, इनको देवो हटाय हो ॥५८॥
देव कहे सुणलो सब लोकाँ, ये भरतेश्वर राय।
सामर्थ्य नही सुरेन्द्र की सरे, इनको देवे हटाय हो ॥५६॥
जतर चले न मंतर इन पर, साफ साफ हम केहवा।
तो पिण तुम्हारी प्रीत निभावा, कुछ उपसर्ग कर देवा हो ॥६०॥
एम कही भरतेश्वर ऊपर, आविया गगन के माय।
गाज बीज बादल पाणी की, दीनी झडी लगाय हो ॥६१॥
चर्म रत्न होगयो चौतरो, छत्र रत्न की छाया।
पसर गया वारह योजन मे, कटक सभी सुख पाया हो ॥६२॥
सात दिवस होगया बरसताँ, कीनो भरत विचार।
कौन अकाल मरण को वछक, छोड रह्यो जल धार हो ॥६३॥
भरतेश्वर महाराज का सरे, सोलह सहस्र सुर जाय।
नागकुमार मेघमुख सुर से, बोल्या इण पर वाय हो ॥६४॥
अहो देव तुम नही जाणो यह, भरतेश्वर महाराज।
रिद्ध समेटो आप की सरे, नही तो परभव आज हो ॥६५॥
बात सुणी सुर धूजिया सरे, लोनी रिद्ध समेट।
आय कहे तिण लोक को सरे, निर्भय रहो नही बैठ हो ॥६६॥
जो सुख चाहो आप को सरे, भरत भूप पा जाय।
मु घा मोल को करो भेटणो, लेवो अपराध क्षमाय हो ॥६७॥
या विधि कह कर देव गया तव, उठ्यो सगलो साथ।
कर स्नान नजराणो लेयकर, भेट्या आय नरनाथ हो ॥६८॥
लेय भेटणो भरतजी सरे, कर पीछो सत्कार।
आण मनाई आपकी सरे, हो रह्या जय जयकार हो ॥६९॥
सेनापति सुसेण बुलाई, हुक्म दियो महाराण।
उत्तर भरत पश्चिम खड साध्यो, तिणविध लीजो जाण हो ॥७०॥
सेना सज कर निकलियो सरे, कर आज्ञा परमाण।
दक्षिण भरत पश्चिमखड साध्यो, तिणविध लीजो जाण हो ॥७१॥
आगे कोण ईशाण मे सरे, चलिया भरत नरेश।
चूल हिमवत पर्वत पासे, कीनो आप प्रवेश हो ॥७२॥
वहा पर फिर पौषध शाला मे, तेलो सातमो ठायो।
चूल हिमवत गिरी देव को, साधन काज सिधायो हो ॥७३॥

पर्वत के नजदीक आय कर, रथ को आप ठहरायो ।
धनुष बाण कर धारने सरे, नभ मे खेंच चलायो हो ॥७४॥
बहत्तर योजन गयो गगन मे, पड्यो सभा मे जाय ।
मागध सुर की तरह भेट कर, आयो तिण दिश जाय हो ॥७५॥
रथ को फेर पधारिया सरे, आया होय हुल्लास ।
नामो लिख निज नाम को सरे, भरतेश्वर जी खास हो ॥७६॥
कर तेला को पारणो सरे, सेना लेय सिधाया ।
दक्षिण दिश बेताढ्य गिरि जहा, डेरा आय लगाया हो ॥७७॥
विद्याधर श्रेणी को नरपति, तेलो आठमो करियो ।
नमि और विनमि नृप को, देव योग मन फिरियो हो ॥७८॥
लेय भेटणो आवियो सरे, भरत भूप के पास ।
नमि नृप कन्या व्याही जो, श्री देवी हुई खास हो ॥७९॥
विनमि कर रत्न भेटणो, दोनो गया निज ठाम ।
गगा कुण्ड के पास आयने, दीना भरत मुकाम हो ॥८०॥
नवमो तेलो कियो आय, तब गंगादेवी आय ।
सिंधुवत सब जाणज्यो सरे, कियो भेटणो लाय हो ॥८१॥
दक्षिण दिशा के मायने सरे, चलिया कटक उठाय ।
खडपरपात गुफा है जहा पर, डेरा दिया लगाय हो ॥८२॥
सेनापति पूर्व खड साधण, भेजियो श्री महाराय हो ।
मुघा मोल को लेय भेटणो, आयो तिण दिश जाय हो ॥८३॥
आराधियो नटमाल देवता, दसमो तेलो ठाय ।
सिंधुवत् कर भेटणो सरे, आयो तिण दिश जाय हो ॥८४॥
खडपरपात गुफा झट खोलो, दीना हुक्म चढाय ।
सेनापति जिम तमस गुफा का, द्वार खोलिया आय हो ॥८५॥
योजन दो पच्चीस की सरे, लम्बी गुफा मझार ।
लिखता गुणपच्चास माडला, हुआ भरतजी पार हो ॥८६॥
दक्षिण भरत के मायने सरे, डेरा दीना लगाय ।
नव निधान को तेलो ठायो, पौषधशाला माय हो ॥८७॥
तुरत सरक पग हेटे आया, रत्न भरिया भरपूर ।
पूर्व जन्म की करी कमाई, सन्मुख हुई हजूर हो ॥८८॥
दक्षिण भरत का पूर्व खड मे, दियो सेनापति भेज ।
आयो आण मनाय ने सरे, करी न वहा पर जेज हो ॥८९॥
साठ सहस्र वर्ष लागिया सरे, पूर्ण करके काज ।
कटक उठाई चालिया सरे, राजनपति महाराज हो ॥९०॥

लाख चौरासी गज रथ घोडा, पैदल छिनवे क्रोड।
राजा सहस्र बत्तीस साथ मे, सेवा करे कर जोड हो ॥६१॥
पंथ लियो वनिता नगरी को, श्री भरतेश्वर राय।
योजन योजन अन्तर सूं, वे सुख से बसता जाय हो ॥६२॥
नही नजदीक नही अति दूरा, सेना दीनी स्थाप।
द्वादशमो वनिता तणो सरे, तेलो कीनो आप हो ॥६३॥
तेलो पार लेय सेना, गज पर होय सवार।
निज नगरी मे चालता सरे, हो रह्या जय जयकार हो ॥६४॥
नव निधान और चारो ही सेना, बाहिर राखी भूप।
नगरी माय पधारिया सरे, निज की छबि अनूप हो ॥६५॥
सब का मुजरा झेलता सरे, राज भवन मे आया।
हर्ष बधावा हो रह्या सरे, धन जननी सुत जाया हो ॥६६॥
सोलह सहस्र देवता और, नृप बत्तीस हजार।
दीनी सीख वली चार रत्न को, कर सब को सत्कार हो ॥६७॥
श्री देवी प्रमुख पटराण्या, परणी चौसठ हजार।
राज पधार्या महल मे सरे, मिलियो सब परिवार हो ॥६८॥
मणि मडप मे मजन करके, पहरी सब पोशाग।
कर तेला को पारणो सरे, विलसे सुख महाभाग हो ॥६९॥
राजतख्त को तेरमो सरे, तेलो कियो तिवार।
सोलह सहस्र देवता सब ही, नृप बत्तीस हजार हो ॥१००॥
सेठ सेनापति सारथवाही, बडे-बडे साहूकार।
कियो राज अभिषेक सभी मिल, जय जय शब्द उचार हो ॥१०१॥
कर शृङ्गार बैठ गज होदे, सिर पर छत्र धराय।
चार चवर होता थका सरे, आया नगरी माय हो ॥१०२॥
भूपति आय सिंहासन बैठा, राज सभा के माय।
सब को आदर मान करी ने, दीनी सीख महाराय हो ॥१०३॥
द्वादश वर्ष [1]दाण और हासल, माफ खुशी के माय।
आज्ञाकारी पुरुष भेज कर, दीनो पडहो बजाय हो ॥१०४॥
कर तेला को पारणो सरे, राज भवन के माय।
करणी का फल भोगवे सरे, आनन्द मे दिन जाय हो ॥१०५॥

---

१ लगान

नव निधान और सोलह सहस्र सुर, रत्न चतुर्दश सार
सहस्र बत्तीस नृप आज्ञा मे, राण्या चौसठ हजार हो ॥१०६॥
बहत्तर सहस्र नगर वलि पाटण, अडतालीस हजार।
छिनवे क्रोड ग्रामो की संख्या, भाषी सूत्र मझार हो। १०७॥
बीस सहस्र सुवर्ण को खानें धन का भर्‍या भडार।
पायदल छिनवे क्रोड चौरासी लक्ष रथ दती, तुखार हो ॥१०८॥
नृत्यक सहस्र बत्तीस तीन सौ साठ रसोईदार।
कवड सहस्र चौवीस वलि, मडप चौवीस हजार हो ॥१०९॥
मरुदेवी दादीजी कहिये, बहुविध साता पाई।
क्रोड पूरब को आयुष्य पाल, गज होदे मुक्ति सिधाई हो ॥११०॥
शूरवीर बाहुवलि आदिक, सौ भाइयो की जोड़।
ब्राह्मी सुन्दरी दोनो बहिने, मुक्ति गई कर्म तोड़ हो।॥१११॥
और घणी है साहबी सरे, लीजो सूत्र सभाल।
मौज करे रंगमहल मे सरे, नाटक ना झणकार हो ॥११२॥
एक दिवस राजन् पति राजा, मजन घर मे आय।
विधि सहित मजन कियो सरे, फिर पोशाक बनाय हो ॥११३।
सिर पर मुकुट कान मे कुण्डल, कर भूषण सब सार।
मणिरत्न को पहन गला मे, चौसठ लडियो हार हो ॥११४।
अलकार चउविध करके, सोले सजे श्रृङ्गार।
काच महल मे आय सिहासन, बैठा निरखे दीदार हो ॥११५।
तन को जान असार भरतजी, ध्यायो निर्मल ध्यान।
अनित्य भावना भावता सरे, पाया केवल ज्ञान हो ॥११६॥
ओघा पात्रा दीना देवता, कर मुनिवर - को वेश।
राजसभा मे आविया सरे, दीनो सत् उपदेश हो ॥११७॥
दश हजार राजा प्रतिबोधी, लीनो संजम भार।
महिमडल मे विचरता सरे, करता पर उपकार हो ॥११८॥
लाख सतंतर पूरबताई, कु वर पद के माय।
चक्रवर्त पद छः लक्ष पूरब को, पालियो श्री महाराय हो ॥११९॥
चारित्र एक लक्ष पूरब को, पाल्यो निर्मल आप।
भव जीवा ने तारतां सरे, मेटी भव दु.ख ताप हो ॥१२०॥
सर्व आयुष्य पाइया सरे, पूरब चौरासी लाख।
ऊग ऊग ने ऊगिया सरे, ठाणायंग नी साख हो ॥१२१॥

अष्टापद पर्वत के ऊपर, दियो सथारो ठाय।
एक मास को अणमण छेदी, गया मोक्ष के माय हो ॥१२२॥
तिणहिज कानमहल के माही, जिम भरतेश्वर राया।
आठ पाट आदित्य जसादिक, तिमहिज केवल पाया हो ॥१२३॥
मनुष्य जन्म दुर्लभ मिल्यो है, जो अपना सुख चाहो।
दया दान तप नेम धर्म को, लीजो तन से लाहो हो ॥१२४॥
उगणीसौ वहत्तर चौमासो, कियो शहर अजमेर।
महा मुनि नन्दलाल गुरु की, है मुझ ऊपर महर हो ॥१२५॥

: ६१ :

द्रौपदी

(तर्ज—ख्याल)

धन सती द्रोपदी, निश्चल मन पाल्यो सावत[1] शील ने ॥टेर॥
अमरकका नगरी भली सरे, धात्रीखड[2] भरत के माय।
राज लीला सुख भोगवे सरे, पदमनाभ तिहा रायजी ॥१॥
सव अन्तेवर सात से सरे, एक दिन भवन मझार।
सिहासन पर वैठ वीच मे, निरख रयो भूपारजी ॥२॥
हस्तनापुर नगर थकी सरे, नारदजी तत्काल।
तिण वेला मे आविया सरे, शीघ्र दूर थी चालजी ॥३॥
पदमनाभ नृप ऊठने सरे, दीनो आदर मान।
कुशल क्षेम परस्पर पूछी, तव बोले राजानजी ॥४॥
कहो नारदजी ऐसी रचना, कही पर देखी तुमने।
सुणवा को अति प्रेम ऊपनो[3], थे सव भाखो मुझनेजी ॥५॥
कहे नारदजी है तू नरपति, कूप दद्दूर[4] समान।
अन्तेवर निज देख अनूपम, फूल रयो धर मानजी ॥६॥
जम्बू द्वीप का भरत मे सरे हस्तनापुर एक स्थान।
पाडुराजा राज करे तस, सुत पंच पाडव जानजी ॥७॥
जिनके घर नारी द्रोपदी, रूप कला गुण सार।
कहा तक करू वयान जिन्हो का, मैं नही पाऊ पारजी ॥८॥

---

१ अखण्ड। २ मध्यलोक के असख्य द्वीपो मे से एक द्वीप। इस जम्बूद्वीप के के वाद लवण समुद्र है और लवणसमुद्र के वाद धातकीखण्ड द्वीप है। वहा भी भरत आदि नाम से ही सात खण्ड है। मगर हैं दो दो। ३ उपजा। ४ दर्दुर, मेढक।

नृपति प्रेम धरी ने पूछे, तदपी कैसा स्वरूप ।
कर विस्तार कहो मुझ आगल, है सुणवा की चू पजी[1] ।।९।।
तुझ अन्तेवर रूप सभी, द्रोपदी नख तुल्य मिलावे ।
दोनूं रूप निज प्रगट देखता, सोवें भाग नही आवेजी ।।१०।।
भूपति मन अचरज हुवो सरे, नारद मुख सुणी वखाण ।
उस नारी से मैं सुख भोगू, जब हो मनुष्य जन्म परमाणजी ।।११।।
पदमनाभ नृप ऊठ के सरे, आयो पौषध साला माय ।
अष्ट भक्त कर देव को सरे, सुमर्यो ध्यान लगायजी ।।।१२।।
कष्ट तणो परभाव प्रगट हो, सुर बोल्यो कर साद ।
इण वेला के मायने सरे, कैसे कियो मुझ यादजी ।।१३।।
जम्बूद्वीप का भरत मे सरे, हस्तनापुर के माय ।
पच पाडव की भारजा सरे मुझ को देवो लायजी ।।१४।।
देव कहे सुण बात हमारी, सती द्रोपदी वाजे ।
मन वचन काया करी स वा, शील कभी नही भाजेजी ।१५।।
तिण ने सुधर्म इन्द्रादिक मिल, चौसठ इन्द्र डिगावे ।
मन करने वछे नही स तूं, मन से क्यो ललचावेजी ।।१६।।
परदारा का लम्पट नरपति, टेक आपणी ताने ।
भात भात समझावियो तदपि, एक वात नही मानेजी ।।१७।।
देव चाल गगन से आया, हस्तनापुर के मांय ।
निद्रा मे छक होय रही थी, लीनी तुरत उठायजी ।।१८।।
शीघ्र चाल लें आवीयो सरे, लवण समुन्दर ठेल ।
पदमनाभ राजा का बाग मे, दीनी द्रोपदो मेलजी ।।१९।।
नरपति ने सुर समाचार कहै, मैं निज स्थानक जासूं ।
कोई दिन मुज ने याद करे तो, फेर कभी नही आसूंजी ।।२०।।
ऐसा कह कर गया देव तव, हुलसा अति भूपाल ।
कर शृ गार अन्तेवर लेईने, आया वाग मे चालजी ।।२१।।
तिण अवसर निद्रा उड़ी सरे, सती विचारे एम ।
हुआ देव प्रयोग शील का, यतन करूंगा केमजी ।।२२।।
इतने भूपति सज सवारी, आयो तिणहीज बाग ।
कहे सती को मत कर चिता, खुलियो थारो भागजी ।।२३।।

---

१ उत्कठा ।

हूँ छूं पति शिर ताज तुम्हारा, बोले मधुरी वाणी ।
सब राण्या के मायने सरे, तुझे करू पटराणीजी ॥२४॥
सती कहै सुण राजन् पनि, अभी लगे मत केडे ।
कोई आवे तो वाट देख लू, छै महिना मत छेडेजी ॥२५॥
हे भोली यहा कुण आसी, लूणसमुन्दर आडो ।
सब ही आशा छोड दे स तू, कोल करे मत गाडोजी ॥२६॥
कृष्ण नरेश्वर त्रिखंड भुक्ता, इसकी आश धरूंगी ।
छे महिना मे नही आवे तो, तुम कहोगा सौ ही करूंगीजी ॥२७॥
भूपति मन समता धरी सरे, नही ताण मे सार ।
कुवारा अन्तेवर माही, मेल दीवी ततकारजी ॥२८॥
सुख मे द्रोपदी विचरे निश दिन, शील का यतन करत ।
बेले वेले पारणा सरे, आमिल करे निरतजी ॥२९॥
हस्तनापुर नगर विषे सरे, हेरो पड्यो तिवार ।
न जाणे कोई देवता सरे, ले गयो पाडव-नारजी ॥३०॥
लोभ बताई द्रव्य को सरे, भूपति पडहो बजायो ।
कीनी बहुत गवेषणा पर, पतो कठे नही पायोजी ॥३१॥
गज हौदे बैठ भूवाजी, पच पाडव की माता ।
नगर द्वारिका आविया सरे, कहेण हरि ने बाताजी ॥३२॥
हरि पूछे कृपा कर मो पर, कैसे हुवो है आवो ।
सभी कारज सिद्ध करू स थे भूवाजी फरमावोजी ॥३३॥
समाचार सब भाखिया सरे, गोविन्द ध्यान लगावे ।
समरथाई[1] थायरी[2] सरे, और नजर नही आवेजी ॥३४॥
गोपाल कहे सुण भूवाजी, चिंता नही कोई बात ।
जहा तहा से लाके द्रौपदी, सूंपसु हाथो हाथजी ॥३५॥
भूवाजी सुण वचन हरि को, फिर हथनापुर आई ।
जाणे द्रौपदी आय मिली जु, सोच फिकर कछु नांईजी ॥३६॥
गोविन्द करी गवेषणा पर, पतो कठे नही पायो ।
इतने राजभवन के माई, नारद ऋषीश्वर आयोजी ॥३७॥
पूछे कृष्णजी कहो नारदजी, कोई राजस्थाने ।
देखी होवे द्रौपदी तो थे पतो बतावो म्हानेजी ॥३८॥

---

१ सामर्थ्य । २ तुम्हारी ।

तब नारद कहै धात्री खंड का, भरत क्षेत्र के मांय।
एकदा कोई समय पाय के, मैं वहा गया चलायजी ॥३९॥
अमरकका नगरी भली सरे, पदमनाभ तिहा राय।
देखी द्रौपदी सारखी वहा, राज भवन के माय जी ॥४०॥
कृष्ण विचारी कहै नारद ने, कर्म तुम्हारा दीसे।
सुण नारदजी उडे गगन मे, हुलसो द्वारकाधीसे जी ॥४१॥
समाचार हस्तनापुर भेज्या, दूत गयो जिम नीर।
पाचो पाडव सज कर आईज्यो, समुन्दर उल्ली[1] तीर जी ॥४२॥
पाडु राजा समाचार पढ, पाडव भेज्या तत्काल।
जोवे वाट समन्दर के तीरे, कब आवे गोपाल जी ॥४३॥
द्वारापति उमेद धरी ने, निकले सज असवारी।
समुद्रतट पाचो पाडव साम्मिल, आय मिले तिणवारीजी ॥४४॥

(तर्जः—भाई तुम लोग हसावे हो)

पाडव मत सरमाओ हो।
वाता कर लो प्रेम की मासु राय मिलाओ हो ॥टेर॥
लूण समुन्दर ठेल ने, धात्री खड सिधावा हो।
हिम्मत राखो पाडवा, सब पार लगावा हो ॥१॥
पदमनाभ कुण नरपति, दो दो हाथ बतावा हो।
युद्ध करा सन्मुख हुई, तेनी शान गमावा हो ॥२॥
चलती वात सुणी हमे, देखा खबर लगावां हो ॥
भुवाजी आय कही कहो तब, केम छिपावा हो ॥३॥
अपणी वस्तु जाण ने, चाहे कौन गमावा हो।
होतव[2] टाल्यो ना टले, नाहक पछतावा हो ॥४॥
सब ही मिल उद्यम करा, पीछी द्रौपदी लावां हो।
महा मुनि नन्दलालजी सुख सम्पति पावा हो ॥५॥

(तर्ज —ख्याल)

तेलो कियो हरि तिण परभावे, लूणसठी सुर आयो।
कहो किणकारण यादकियो मुझ, तबहरि सबफरमायोजी ॥४५॥
पाचो ही पाडव जाणजो सरे, छठा दूत मुझ काज।
धात्री खड मे जावणो सरे, रास्ता देओ आजजी ॥४६॥

---

१ इस पार। २ होनहार।

देव कहे सुण अहो द्वारापति, हुकम मुझे फरमाय।
आप कहो तो द्रौपदी यहाँ, हाजर कर दू लायजी ॥४७॥
आप कहो तो पदमनाभ की, नगरी फौज समेत।
लूण समुन्दर मे लाय डुबोऊ, नही हमारे हेतजी ॥४८॥
कृष्ण कहै या बात न करणी, वचन दियो किम लोपुं।
जहा होगा वहाँ से लाके द्रौपदी, मैं हाथो हाथ लाई सौपुजी ॥४९॥
समुद्र मे रास्तो दियो सरे, सुर कहे वेग पधारो।
धात्री खंड मे हरि आवियो, पच पाडव लेई लारोजी ॥५०॥
दारुण नामा सारथी सरे, भेजो पत्र देई हाथ।
पदमनाभ का सिहासन के, एक मारजे लातजी ॥५१॥
जय विजय कर राज सभा मे, भूपति आय बधायो।
यह भक्ति मुज जाणजो स अब, करू स्वामी फरमायोजी ॥५२॥
अपथिया[1] पथिया इम बोल्यो, रोस करी असराले।
सिहासण के मारी लात झट, पत्र दियो अणी फालेजी ॥५३॥
करूं सामनो द्रौपदी नही दू, काढ्यो बिन सत्कार।
सारथी पाछो आय कृष्ण पै, कहा सभी समाचारजी ॥५४॥
करो सामना समरथ होय तो, पदमनाभ चढ आयो।
पाचो ही पाडव इम कहै सरे, समरथ छे हरि रायोजी ॥५५॥
वह है हम नही, इम कही चढिया, पाचो ही पाडव लार।
हार गया तब आये कृष्ण पै, कहा सभी समाचारजी ॥५६॥
जीतू एम कही चढ्या कृष्णजी, करी सख घुधुकार।
पदमनाभ की सेना भागी, तीजे भाग ततकारजी ॥५७॥
इतने लीनो हाथ मे सरे, करी धनुष टकार।
एक भाग फिर भागियो सरे, एक भाग रयो लारजी ॥५८॥
तत्क्षण भागो नृपति सरे, जडिया नगर दुवार।
कियो हरिजी वैक्रिय[2] सरे, सिह रूप तत्कारजी ॥५९॥
रोस करी पजो मारयो तव, थर थर पृथ्वी धूजी[3]।
कोट कागरा भवन पड्या जिम, नगरी हो गई दूजीजी ॥६०॥

---

१ अप्राथितप्रार्थी, अनिष्ट की कामना करने वाला। २ विक्रिया, मन चाहा रूप बना लेना। ३ कांपी।

पदमनाभ मन चिंतवे सरे, अनरथ हुवा अपार।
प्राण की रक्षा कारणे सरे, कीजे कौन विचारजी ॥६१॥
सती द्रौपदी के शरणे, भूपति पडियो जाय।
बुद्धि उपाई मुज भणी स तू, जीतव दान दिरायजी ॥६२।
सती कहै रे निर्लज तुझ ने, जरा लाज नही आई।
काम अध होई रचो स तू, अबे करे नरमाईजी ॥६३॥
[1]आला कपडा पहेरले स तूं, छोड मर्द का [2]भेक।
रत्नादिक ले भेटणो सरे, और उपाव नही एकजी ॥६४॥
कर आगे मुझ को सौप दे सरे, मन मे मत सरमाजे।
गोविन्द के चरणार नमीने, सब अपराध खमाजे रे ॥६५॥
भलो होय सती थायरो सरे, ठीक उपाय बतायो।
तिमहिज कर त्रिखड नायक से, सब अपरोध खमायोजी ॥६६॥
कृष्ण विचारी समता धारी, भूप त्रिया के रूप।
अभयदान देई मूकियो सरे, गयो द्रौपदी सू पजी ॥६७॥
हाथो हाथ लेई द्रोपदी, पच पाण्डव ने सौपी।
वचन सफल हुवो तेहनो, भुवा की बात नही लोपीजी ॥६८॥
कृष्ण और पांडव रथ सज कर, लेई द्रौपदी लार।
सफल काज कर निकल्या सरे, उतरे समुंदर पारजी । ६९॥
तिण अवसर तिहा चम्पानगरी, मुनि सुव्रत भगवान्।
पूर्ण भद्र बाग के माई, समोसरया पुण्यवान जी ॥७०॥
कम्पिल नामे वासुदेव या, बात सुणी हुलसायो।
बाविशमा जिनराज ने सरे, तुरत वन्दवा आयो जी ॥७१॥
तीन वार वन्दना करी सरे, सन्मुख सारे सेव।
हित उपदेश सुणावियो सरे, श्री तीर्थङ्कर देवजी ॥७२॥
वाणी सुणता समोसरण मे, सुण्यो शंख को नाद।
कम्पिल नामा वासुदेव के, चित्त मे हुओ विपाद जी ॥७३॥
कहै श्री जिनराज कृपा कर, सुण हो त्रिखंडी नाथ।
मेटो मन की भर्मना स या, कभी न होवे वातजी ॥७४॥
नव पदवी मे आदि की सरे, प्रभु चार फरमाई।
दो दो एक समय नही लाधे, एक क्षेत्र के माई जी ॥७५॥

---

१ गीला । २ भेप ।

अहो जिनवर मुझ संशय मेटो, अरज करे कर जोर।
[1]सागे शब्द मुझ शख सरीखो, यहाँ करे कुण और जी ।।७६।
जम्बूद्वीप का भरत को सरे, वासुदेव यहाँ आयो।
ज्यो का त्यो सब माँडने सरे, प्रभु भेद सभलायो जी ।।७७।।
सुणता ही तत्क्षण नरपति, मिलवा मन उमायो।
नजरा देखूं जाय ने स जद, प्रभु एम फरमायो जी ।।७८।।
सुण हो नरपति चार जणा तो, तीन काल के माय।
एक समान पदवीधर वे, मिले न आपस माय जी ।।।७९।।
तदपि वदना करी भूप, गज होदे बैठ सिधाया।
पवन वेग जिम चालता सरे, समुदर के तट आयाजी ।।८०।।
हस्ती पर बैठा थका सरे, लम्बी नजर लगाई।
उडती ध्वजा देख रथ ऊपर, खुशी हुवा मन माही जी ।।८१।।
उत्तम पुरुष मुज सारखा सरे, वासुदेव वे जावे।
सुख से आप पधारजो सरे, ऐसे कही शख पूरावे जी ।।८२।।
सुणियो शब्द कृष्णजी पाछो, शख बजायो आय।
समज गया दोई सेन मे सरे, मन सु कियो मिलाप जी ।।८३।।
कपिल नामा वासुदेव फिर पीछा तुरत सिधाया।
पदमनाभ राजा सु मिलवा, आप शीघ्र चल आयाजी ।।८४।।
पदमनाभ नृप वासुदेव को, आदर कियो अपार।
राज रिद्ध सभी आपकी सरे, करु कांही मनवार जी ।।८५।।
पूछे बात यो त्रिखड नायक, सुण पदमोत्तर राय।
बिगड गई नगरी किण कारण, इसका भेद बताय जी ।।८६।।
जम्बूद्वीप का भरत को सरे, वासुदेव यहाँ आयो।
राज जमावा कारणे सरे, तिण ने धूम मचायो जी ।।८७।।
मैं उमराव [2]राज को बाजू, ऐसो कियो उपाय।
सनमुख होकर करी लडाई, पीछो दियो भगाय जी ।।८८।।
इस कारण से नगरी सारी, विगड गई सुण नाथ।
पूरा पुण्य आपका जिण से, रही चौगुणी बात जी ।।८९।।
सुणता ही श्री वासुदेव यो, रोस करी फरमावे।
लाजहीण [3]लापर मुज आगल, झूठी बात वणावे जी ।।९०।।

---

१ साक्षात्। २ आपका। ३ लापर-वदमाश।

म्हारे सरीखा उत्तम पुरुष वे, निरदोषी शिरदार ।
ज्यामे दोष बतावियो स थारो, मनुष्य जन्म धिक्कार जी ।।९१।।
काढ दियो नगरी सु तिण ने, करणी का फल पाया ।
राज दियो तस पुत्र को सरे, आनद ही आनंद बरतायाजी ।।९२।।
सुणो सयाणा परनारी का, सग करो मत कोय ।
इण भव मे शोभा घणी सरे, परभव मे सुख होय जी ।।९३।।
सागर उतर श्रीकृष्णजी आया, जम्बूद्वीप भरतखंड माँई ।
आगे चलो पाडवाँ स मैं, आऊँ आज्ञा भलाई जी ।।९४।।
तुरत बैठ रथ माँही पॉडव, लेइ द्रौपदी लार ।
गगा नदी तिर गया सरे, मन मे करे विचार जी ।।९५।।
नाव लेई ने कोई मत जावो, इण अवसर के माँय ।
ताकत देखाॅ तेहिनी सरे, किम आवे हरि राय जी ।।९६।।
गोविन्द आज्ञा भलायने सरे, आयो गंगा के तीर ।
पाचो पाडव नाव बिना वे कैसे गए मुज वीरजी ।।९७।।
हरि हिम्मत कर एक हाथ मे, रथ घोडा सग लीन ।
एक हाथ से जल तीरे सरे, शक्ति हुई न हीनजी ।।९८।।
गगा के मध्य भाग मे सरे, घबराणो हरिराय ।
पुण्य प्रभावे तुरत करी आ, गगा देवी सहायजी ।।९९।।
क्षण मात्र विसराम लेई ने, फिर कीनी हुँसियारी ।
भुजा करी नदी तीरी सरे, उतर गयो गिरधारीजी ।।१००।।
पाडव देख विचारियो सरे, ये आया हरिराय ।
हाथ जोड जय विजय करीने, सन्मुख लिया वधायजी ।।१०१।।
कृष्ण कहे सुनो पाडव स थे, पूरा हो बलवान ।
विना नाव निज भुजा करीने, गगा तिरिया महान जी ।।१०२।।
पौरुष चडियां पीछे थें तो, कवहुँ न रहेवो वारया ।
जो ऐसा समर्थ था तो, क्यो पद्मनाभ से हारयाजी ।।१०३।।
साच वात कहूं सुणो नाथजी मैं, किस्ती पर चढ आया ।
फक्त आपको बल देखण ने, वैठ रया तरु छायाजी ।।१०४।।
सुनके वात पाडवा ऊपर, रोस हरिने आयो ।
वल दिखलाऊ आपणो सरे, इम कही वज्र उठायोजी ।।१०५।।

देख द्रौपदी अर्ज करे प्रभु, तुम हो दीन दयाल ।
मुझ अबला पर कृपा कीजे, अपनो विरध[1] सम्भालजी ॥१०६॥
सुन कर दया ऊपनी दिल मे, हरिजी आप विचारयो ।
राख्यो सुहाग द्रौपदी को जब, रथ पर कोप उतारयोजी ॥१०७॥
या काँई कुमति उपनी थाने, कृतघ्न पणो कमायो ।
[2]देशवट्टो है पाडवा स यू, हरि हुक्म फरमायोजी ॥१०८॥
गया द्वारका कृष्णजी सरे, पाडव हस्तनापुर आया ।
मात पिता ने मांडने स सब, बीतक हाल सुनायाजी ॥१०९॥
पाडुराय कहे पांडवा स थाने, भूडो कीनो काम ।
गुण ऊपर अवगुण कियो स थे, जग मे हुवा बदनामजी॥११०॥
सब ही मिल सल्ला[3] करी सरे, गुन्हो करानो माफ ।
गज पर बैठ तुरत भुवाजी, गया द्वारका आपजी ॥१११॥
विनय कर वशीधर पूछे, कैसे हुवो है आवो ।
जो मुझ लायक काम होवे सो, भुवाजी फरमावोजी ॥११२॥
सुन गोविन्द थारी तीन खड मे, आण अखड वरताय ।
कहा जाय पाडव बसे स तू, मुजको राह बतायजी ॥११३॥
मैं तो बोल बदलू नही स थे, भूमी आपने आपी ।
समुद्र पाणी हटाय बसे पाडव, मिले न आय कदापिजी ॥११४॥
काम करी कुन्ता महाराणी, फिर हस्तनापुर आई ।
पाचो पाडव हरि हुकम से, मथुरा जाय बसाईजी ॥११५॥
साधू तपसी भूपति सरे ज्ञानी और धनवान ।
चतुर होवो तो पाँच जणा को, मत करजो अपमानजी ॥११६॥
नेम धर्म तन मन से पालो, भव भव मे सुख दाई ।
सती शील मे दृढ रही तो, निज घर अपने आईजी ॥११७॥
पाडव साथे सती भोगवे, पचेन्द्रिय सुख भोग ।
कितनो क काल निकल्या पीछे, स्थेवरॉ को लागो जोगजी ॥११८॥
वाणी सुण वैराग धरीने, पाचो ही पाडव लार ।
सती द्रौपदी साथ हुई छैऊ, लीनो सयम भारजी ॥११९॥
पाचो ही पाडव करणी करने, आठो ही कर्म खपाय ।
जन्म मरण दुख मेटने सरे, मोक्ष विराजा जायजी ॥१२०॥

---

१ विरुद । २ देशनिकाला । ३ सलाह ।

इम जाणीने सुणो सयाना, शील अखंडित पालो।
नर भव लावो[1] लेयने सरे, मोक्षपुरी झट चालोजी ॥१२१॥
चंदन बाला राजमतीजी, सीता सुभद्रा जान।
शील व्रत मे धृढ रही स ज्याँरा, जिनवर किया बखानजी॥१२२॥
सती द्रौपदी सयम पाली, गई पचमे देवलोक।
तिहा से चव महा विदेह जन्म ले, सती जायगा मोक्षजी ॥१२३॥
उगणीसें सत्तावन वर्षे, चौमासो श्रेयकार।
शहर जावरे जोड बणाई, सूत्र के अनुसारजी ॥१२४॥
महा मुनि नन्दलाल तणा शिष्य, खूबचन्द इम गावे।
शीलवती सतियां का नाम से, मन वछित सुख पावेजी ॥१२५॥

: ६२ .

सुबाहु कुंवर

(तर्ज —ख्याल)

धन कुंवर सुवाहु, सफल कर लीनो नर भव आपणो ॥टेर॥
इण हिज जम्बूद्वीप का सरे भरत क्षेत्र के मांय।
हस्थिशिखर नगर भलो सरे, अदीणशत्रु तिहा रायजी ॥१॥
सहस्र अन्तेवर माय धारणी, राणी है परधान।
तस राणी अगजात सुबाहु, कुवर एक पुण्यवानजी ॥२॥
विनयवत है मात पिता का, पूरण आज्ञाकारी।
यौवन वय मे जान कुंवर को, परणाई पाच सौ नारीजी ॥३॥
सुख भोगे ससार का सरे, तिण अवसर के माँय।
विचरत वीर जिनेश्वर आया, परिषदा वंदन जायजी ॥४॥
खबर हुई तव कुंवर सुबाहु, कीनी तुरत तयारी।
वीर जिनंद को वदन कारण, निकल्यो सज असवारीजी ॥५॥
वंदना कर जिनवर के सन्मुख, बैठा परिषदा मांय।
वाणी सुण आनन्द भयो सरे, कह्यो कहाँ लग जायजी ॥६॥
हाथ जोड यू अरज करे प्रभु, धन्य वो नरभव पाय।
सयम पद धारण करे सरे, ये मुझ शक्ति नायजी ॥७॥
मुझ ने तो कृपा कर प्रभुजी, श्रावक का व्रत दीजे।
वीर कहे जिम सुख हो तिम कर, धर्म मे ढील न कीजेजी ॥८॥
श्रावक का व्रत आदरया सरे, मगन होय मन मांय।
तीन वार वन्दन करी सरे, आयो तिण दिशि जाय जी ॥९॥

---

[1] लाभ।

रूप देख गौतम स्वामी के, मन मे उपनी खंत।
वीर जिनन्द ने पूछियो सरे, पूरव भव विरतन्त जी ॥१०॥
वीर कहे सुन गोयमा सरे, पूरव भव के माँय।
सुमुखनामा गाथापति थो, रिद्धिवन्त कहवाय जी ॥११॥
विचरत विचरत धर्मघोष, स्थेवर आया तिणवार।
तस्य शिष्य है घोर तपस्वी, सुदत्तजी अणगार जी ॥१२॥
आज्ञा ले गुरुदेव की सरे, असणादिक के काज।
मास खमण के पारणे सरे, गया महामुनि राजजी ॥१३॥
फिरता फिरता आया मुनिवर, सुमुख घर तिण वार।
दान दियो शुद्ध भाव से सरे, परत कियो संसार जी ॥१४॥
ये हिज कुंवर सुवाहु प्रत्यक्ष, वहा से चवकर आयो।
दान तणा परभाव से सरे, रूप सम्पदा पायो जी ॥१५॥
हे भगवत ये कुंवर सुबाहु, लेसी सजम भार।
वीर कहे हाँ सजम लेसी, सशय नही लगार जी ॥१६॥
हस्थिशिखर नगर थकी सरे, जिनजी कियो विहार।
भव जीवा ने तारवा सरे, करवा पर उपकार जी ॥१७॥
कुंवर सुवाहु श्रावक सेंठा[1], जीवादिक ना जान[2]।
अस्थिर जान संसार को सरे, पाले जिनवर आन जी ॥१८॥
एक दिवस पौषध शाला मे, तेलो कियो कुंवार।
धर्म जाग्रणा जागता सरे, मन मे कियो विचार जी ॥१९॥
धन्य है गाम नगर पुर पाटण, जहा प्रभु रहे विराज।
धन्य पुरुष जो सयम लेकर, [3]सारे आतम काज जी ॥२०॥
ये संसार समुन्दर भारी जिसका [4]छेय न पार।
जन्म मरण इस जीव ने सरे, किया अनन्ती वार जी ॥२१॥
जो खुद कृपा कर इहा सरे, समोसरे जिनराय।
तो सजम लेनो सही सरे, जन्म मरण मिट जाय जी ॥२२॥
भगवन्त केवल ज्ञान करी ने, जाण्या मन का भाव।
सुखे सुखे प्रभु विचरता सरे, आया तिण प्रस्तावजी ॥२३॥
हस्थि शिखर नगर मे सरे, खबर हुई तिण वार।
सुबाहु कुंवर वन्दन चल्यो सरे, और घणो परिवार जी ॥२४॥
वन्दना कर जिनवर के सन्मुख, बैठा धर अनुराग।
वाणी सुण वीतरागनी सरे, अधिक चढ्यो वैराग जी ॥२५॥

---

१ पक्का। २ ज्ञाता। ३ सिद्ध करे। ४ है।

हाथ जोड ने अर्ज करे प्रभु, यह ससार असार।
मात पिता को पूछने स मैं, लेसु संयम भार जी ॥२६॥
वीर कहे जिम सुख हो तिम कर, वन्दना कर घर आयो।
माता के चरणार नमनकर, सव विरतान्त सुनायो जी ॥२७॥
सयम लेसूं मातजी सरे, आज्ञा दो मुझे आप।
एम सुणी माता मुरछानी, लग्यो वचन को ताप जी ॥२८॥
सावचेत हो माता विलखती, वोले वचन विचार।
सजम मारग दोहिलो सरे, चलणो खाडा-धार जी ॥२९॥
विविध भात समझावियो सरे, एक न मानी वात।
महोत्सव की त्यारी करी सरे, आज्ञा आपी मातजी ॥३०॥
सहस्र पुरुप उठावे ऐसी, [1]सिवका तुरत वनाय।
गोद लेई वैठा माता जी, तरुण्या वीजे वाय जी ॥३१॥
तप सयम मे प्राक्रम करता, तू कायर मत [2]वीजे।
अष्ट कर्म को अन्त करी ने, शिवपुर डेरा दीजे जी ॥३२॥
जा सौंप्या जिनवर के सन्मुख, वोले यू कर जोड।
ये मुझ वल्लभ नानड्यो[3] सरे, संयम ले घर छोडजी ॥३३॥
क्षमावन्त ममता को सागर, घणा गुणां को दरियो।
संयम दीजे नाथजी स यो, जन्म मरण से डरियोजी ॥३४॥
माला मोती खोलिया सरे, खोल्या सव शृंगार।
सनमुख ऊभी मातजी सरे, पड रही आँसू धारजी ॥३५॥
वेस कियो मुनिराज को सरे, कर पंच मुष्टी लोच।
पाप अठारा त्यागिया सरे, मिट गया मन का सोचजी ॥३६॥
जिनवर को निज नंद सौप के, मात ठिकाने आई।
सदा विषय सुख भोगवे सरे, मगन रहे मन मांईजी ॥३७॥
हस्ति शिखर नगर से सरे, प्रभुजी कियो विहार।
साथ रहे सेवा करे सरे, सुवाहु अणगारजी ॥३८॥
शुद्ध सयम पाले शिवपुर की, मन मे वडी उमग।
विनय करी स्थेवरो के पासे, भण्या इग्यारे अगजी[4] ॥३९॥
वहु वर्षों का सयम पाली, टाली आतम दोष।
साठ[5] भक्त अणमण आराधी, गया प्रथम सुरलोकजी ॥४०॥

---

१ शिविका-पालकी। २ डरना। ३ नन्हा। ४ अङ्ग शास्त्र। ५ एक मास का अनशन।

अंग इग्यारमे वीर जिनेश्वर, कर दीनो निस्तार।
पन्द्रह भव करी महा विदेह मे, जासी मोक्ष मझारजी।४१॥
उगणीसे इकसठ के वर्षे, चैत महीनो जान।
शुक्ल पक्ष की छट्ठ बुधवारे, करी जोड परमाणजी॥४२॥
महामुनि नन्दलालजी सरे, ज्ञान तणा दातार।
जिहाँ तिहाँ तस शिष्य के सरे, वरते मंगलाचारजी॥४३॥

: ६३ :

नमि राजऋषि

(तज —पणिहारी)

मिथिला नगरी ना राजवी, नमिराजाजी २,
विदेह देश को नाथ, राजाजी।
सहजे ही मन वैराग्य मे, नमिराजाजी २,
हित परजा के साथ, राजाजी॥१॥
देवलोक सम पाविया, नमिराजाजी २,
अन्तेवर सुख भोग, राजाजी।
एक दिन तस तन ऊपनो, नमिराजाजी २,
सबल दाह ज्वर रोग, राजाजी॥२॥
वनिता मिल चन्दन घिसे, नमिराजाजी २,
पति हितकाज उच्छाव, राजाजी।
खन खन बाजे चूडियाँ, नमिराजाजी २,
शब्द सुहावे नाथ, राजाजी॥३॥
एक एक रखि दूजी सहू, नमिराजाजी २,
दीनी तुरत उतार, राजाजी।
पति परमेश्वर मारखा, नमिराजाजी २,
जो जाने सो पतिव्रता नार, राजाजी॥४॥
पूछे भूपति कहो प्रिया, नमिराजाजी २,
अब नही होत अवाज, राजाजी।
खट खट होवे बहु मिल्या, नमिराजाजी २,
सोचो गरीबनिवाज, राजाजी॥५॥
पर सजोगे दुख हुवे, नमिराजाजी २,
इण मे संशय नही कोय, राजाजी।

रमन करे यो ज्ञान मे, नमिराजाजी २,
फिर दुःख काहे को होय, राजाजी ॥६॥
एकत्व भावना भावता, नमिराजाजी २,
जाति स्मरण पायो ज्ञान, राजाजी।
शीतल चन्दन लेपता, नमिराजाजी २,
मिट गई तन की ताप, राजाजी ॥७॥
भोग रोग सम जाणने, नमिराजाजी २,
दियो पुत्र को राज, राजाजी।
मुनि हुआ ममता तजी, नमिराजाजी २,
केवल मोक्ष के काज, राजाजी ॥८॥
शब्द कोलाहल हो रया, नमिराजाजी २,
उस वक्त नगरी के माय, राजाजी।
शक्रेन्द्र भी आवियो, नमिराजाजी २,
ब्राह्मण रूप बनाय, राजाजी ॥९॥
करण वैराग्य की पारखा, नमिराजाजी २,
यूं बोले वचन विचार, राजाजी।
तुम दीक्षा से महामुनि, नमिराजाजी २,
यह रुदन करे नर नार, राजाजी ॥१०॥
स्वार्थ का सब झूरणा, विप्र व्हालाजी २,
दियो तरु पक्षी को न्याय, व्हालाजी।
जोवो नजर लगाय ने, नमिराजाजी २,
थारा भवन जले महाराय, राजाजी ॥११॥
राज तथा रमणी तजी, विप्र व्हालाजी २,
तज्या पुत्र पोता परिवार, व्हालाजी।
निर्मोही थई ने निकल्यो, विप्र व्हालाजी २,
मैं लीनो संजम भार, व्हालाजी ॥१२॥
मुझ वस्तु कोई नही जले, विप्र व्हालाजी २,
तुम बोलो वचन विचार, व्हालाजी।
रक्षा निमित्त कराय ने, नमिराजाजी २,
गोपुर सहित [१]पागार, राजाजी ॥१३॥

---

१ प्राकार-शहरपनाह।

भीतर फिरणी खाई वारणे, नमिराजाजी २,
बुरजो पर शस्त्र धराय, राजाजी ।
इतनो करने जापतो, नमिराजाजी २,
तुम फिर होजो मुनिराय, राजाजी ॥१४॥

सम्यक श्रद्धा मुझ नगर के, विप्र व्हालाजी २,
क्षमा को दृढ पागार, व्हालाजी ।
त्रण गुप्तिना मैं किया, विप्र व्हालाजी २,
फिरणी खाई और द्वार, व्हालाजी ॥१५॥

शरीर धनुष तप बाण से, विप्र व्हालाजी २,
कर कर्म रिपु को नाश, व्हालाजी ।
रक्षा करी मैं नगर की, विप्र व्हालाजी २,
तुम समझो बुद्ध विकास, व्हालाजी ॥१६॥

भवन करावो वहु भोमिया, नमिराजाजी २,
एक पाणी बीच प्रासाद, राजाजी ।
पीछे तुम्हारे वंश मे, नमिराजाजी २,
कुटुम्ब करेगा याद, राजाजी ॥१७॥

चालता मारग बीच मे, विप्र व्हालाजी २,
लेणो टुक विश्राम, व्हालाजी ।
वह नर घर कहो क्यो करे, विप्र व्हालाजी २,
जिनके करनो मोक्ष मुकाम, व्हालाजी ॥१८॥

चोरादिक ने वश करो, नमिराजाजी २,
देकर दण्ड करूर, राजाजी ।
क्षेम करी निज ग्राम मे, नमिराजाजी २,
फिर लीजो योग जरूर, राजाजी ॥१९॥

छोड के असली चोर कूं, विप्र व्हालाजी २,
नकली कुण पकडे जाय, व्हालाजी ।
असली चोर कु वश कीये, विप्र व्हालाजी २,
जो थे विषय कषाय, व्हालाजी ॥२०॥

आय नम्या नही आपने, नमिराजाजी २,
जो जो सवल सिरदार, राजाजी ।
उनको जीती वश करो, नमिराजाजी २,
तुम फिर होजो अणगार, राजाजी ॥२१॥

शूर कहावे वो जगत मे, विप्र व्हालाजी २,
जो जीते सुभट दश लाख, व्हालाजी ।
जिससे शूरो कौन है, विप्र व्हालाजी २,
थारी सुणता उगड़े आंख, व्हालाजी ॥२२॥

दुर्जय पच इन्द्रिय पुनः, विप्र व्हालाजी २,
सबल क्रोधादिक चार, व्हालाजी ।
जो नर याने जीतियो, विप्र व्हालाजी २,
सो नर जीत्यो सब संसार, व्हालाजी ॥२३॥

मोटो यज्ञ करो तुम्हे, नमिराजाजी २,
विप्र जिमावो स्वाम, राजाजी ।
दीजो कर से दक्षिणा, नमिराजाजी २,
कीजो जगत में नाम, राजाजी ॥२४॥

दान कोई नर दे सके, विप्र व्हालाजी २,
कोई से दियो नही जाय, व्हालाजी ।
दोनो को सयम श्रेय है, विप्र व्हालाजी २,
मुक्ति तणो फल थाय, व्हालाजी ॥२५॥

घोराश्रम को छोड के, नमिराजाजी २,
कियो सोहिला श्रम से प्रेम राजाजी ।
इनसे तो यांही रहेणो सिरे, नमिराजाजी २,
करणो कुछ व्रत नेम, राजाजी ॥२६॥

मास मास तप जो करे, विप्र व्हालाजी २,
कुशाग्र सम अन्न खाय, व्हालाजी ।
सम्यक् श्रद्धा विन जीव को, विप्र व्हालाजी २,
तिरणो हुवे कभी नाय, व्हालाजी ॥२७॥

हिरण सुवर्ण रत्ना करी, नमिराजाजी २,
धन का भरो भण्डार, राजाजी ।
चतुरंग सेना वढ़ायने, नमिराजाजी २,
फिर होवो अणगार, राजाजी ॥२८॥

धन थोड़ो तृष्णा घणी, विप्र व्हालाजी २,
जेम नही आकाश को अंत, व्हालाजी ।
लोभी नर धापे नही, विप्र व्हालाजी २,
अग्नि सिंधु को दृष्टान्त, व्हालाजी ॥२९॥

इण कारण तृष्णा घणी, विप्र व्हालाजी २,
धार लियो संतोष, व्हालाजी ।
तप संयम धन साधु के, विप्र व्हालाजी २,
पूरण भरिया कोष, व्हालाजी ॥३०॥
यह यौवन वय आपकी, नमिराजाजी २
ले रया वैराग्य से योग, राजाजी ।
घर घर जावेगा गोचरी, नमिराजाजी २,
देखोगा गृहस्थी का भोग, राजाजी ॥३१॥
यह सुख राज सभार ने, नमिराजाजी २,
छेदासो मन माय, राजाजी ।
करजो काम विचार ने, नमि राजाजो २,
फिर पश्चात्ताप न थाय, राजाजी ॥३२॥
काम भोग दोऊं लोक मे, विप्र व्हालाजी २,
मैं जाणू जहर समान, व्हालाजी ।
अभिलाषा भी जो करे, विप्र व्हालाजी २,
पावे दुरगति खान, व्हालाजी ॥३३॥
प्रश्न दस पूरा हुवा, नमिराजाजी २,
दृढता देख हर्षाय, राजाजी ।
प्रगट भयो सुर इन्द्र जी, नमिराजाजी २,
ब्राह्मण रूप मिटाय, राजाजी ॥३४॥
कर जोडी स्तुति करे, नमिराजाजी २,
धन तुम नो वैराग्य, राजाजी ।
क्रोधादिक भले जीतिया, नमिराजाजी २,
आप गुणी महा भाग्य, राजाजी ॥ ३५ ॥
उत्तम श्रद्धा आपकी, नमिराजाजी २,
उत्तम बुद्धि निधान, राजाजी ।
शिवसुख पाजो साधु जी, नमिराजाजी २,
लोक मे उत्तम स्थान, राजाजी ॥ ३६ ॥
चरण नमी गुण गावतो, नमिराजाजी २,
इन्द्र गयो निजधाम, राजाजी ।
निर्मल संयम पालने, नमिराजाजी २,
पहुँचे मोक्ष मुकाम, राजाजी ॥ ३७ ॥

चौमासो करी आगरे, नमिराजाजी २,
आया दिल्ली शहर, राजाजी।
मेरे गुरु नन्दलालजी, नमिराजाजी २,
है मुझ ऊपर महेर, राजाजी॥ ३८॥

: ६४ :

अचम्भे का बच्चा

दोहा

प्रथम नमो गुरुदेव ने, गुरु ज्ञान दातार।
गुरु चिन्तामणि सारखा, आपै सुख श्रीकार॥ १॥
शील व्रत मोटो व्रत, भाष्यो सुगुरु दयाल।
सब गुण की रक्षा करे, ज्यू सरवर जल पाल॥२॥

ढाल पहली

(तर्ज —लाल रे चन्देरीपति सू कहै)

पर रमणी सग परहरी, जो सुख चाहो सेण लालरे॥ टेर॥

जम्बूद्वीप का भरत मे, श्रीपुर नगर सुस्थान लालरे।
राज लीला सुख भोगवे, जित शत्रु राजान लालरे॥ १॥
मत्री राज्य धुरंधरु, सुबुद्धि नाम परधान लालरे॥
निर्लोभी न्याई घणो, चारो बुद्धि निधान लालरे॥ २॥
तिण नगरी माही वसे, सागर सेठ विख्यात लालरे।
रिद्धिवन्त अगंजणो, सभी जन मानें वात लालरे॥ ३॥
श्रीमती छे तस भारजा, पति भक्ता मतिमान लालरे।
सुशीला चारुप्रेक्षिणी[1], लज्जावती गुणखान लालरे॥ ४॥
एक दिवस वह श्रीमती, कर सघला सिणगार लालरे।
ऊची चढ आवास पै, जोवे नगर बाजार लालरे॥५॥
भूपति भी निज भवन मे, बैठो गोख मंझार लालरे।
नगर छबी अवलोकता, देखी सा सुन्दर नार लालरे॥ ६॥
मन बिगड्यो महिपति तणो, पूछे मत्री सु बात लालरे।
सो मुझ राह बतलाइए, रति पाऊं इण सात लालरे॥ ७॥

---

१ सुन्दर दृष्टि वाली।

मंत्री कहै महिपति सुणो, बुरो विचारचो काम लालरे ।
क्षण एक सुख के कारणे, होसो तुम बदनाम लालरे ॥ ८ ॥
रावण राज गमावियो, शास्तर को परमाण लालरे ।
पर नारी चित चावतां, कीचक खोया प्राण लालरे ॥ ९ ॥
समझाता समझो नही, दीना वहुविध न्याय लालरे ।
राजा हठ छोडी नही, दी मत्री तब राय लालरे ॥ १० ॥
सागर सेठ बुलायने, दीजे हुक्म फरमाय लालरे ।
जिहाँ मिले तिहाजायने, बच्चो अचम्भा को लाय लालरे ॥११॥
सेठ यहा से गया पछे, तुम मन चिंतित थाय लालरे ।
ऐसी राह बतलावताँ, खुशी हुवा महाराय लालरे ॥ १२ ॥
खूब मुनि कहे साभलो, यह हुई पहली ढाल लालरे ।
तोत रचे अब नरपति, आलस अलगो टाल लालरे ॥ १३ ॥
॥दोहा॥ श्रोतागण मानव तुम्हे, सांभलजो चित्त लाय ।
काम अन्ध हुवो थको, कपट रचे किम राय ॥१॥

ढाल दूसरी

(तर्ज - जिन शासन नायक, मुगति जाने की डिगरी दीजिए)

तुम सम नही दूजो सेठ सिरोमणि, सिरीपुर के माँही ॥ टेर ॥
निज अनुचर को भेज के सरे तुरत सेठ बुलवाय ।
आदर दे आसण के ऊपर, सन्मुख लियो बैठायजी ॥ १ ॥
शेठ कहे कर जोडने सरे, केम बुलायो आज ।
जो मुझ लायक काम हुवे सो, कहो गरीबनवाजजी ॥ २ ॥
अन्तेवर हठ माडियो[1] सरे, वारवार कहेवावे ।
अचम्भा को बच्चो एक महेला मे देखणो चहावेजी ॥ ३ ॥
हुकम कियो सब उमरावा पर, उत्तर दियो नही कोय ।
मैं जान्यो यो काम चतुर को, होय उसी से होयजी ॥ ४ ॥
सुणो सेठजी मिले वहा से, आप जाय खुद लावो ।
खरच पडे जितना रुपैया तुम, चाहो जब ले जावोजी ॥ ५ ॥
छह महिना की अवधि आपी, करजो खूव तलास ।
कारज सिद्ध हुवासे थाने, दू गा फेर साबासजी ॥ ६ ॥
कहै शेठजी सुण महाराजा, घर मे पूछी लेसू ।
जैसा राय होयगा वैसी, आय आप ने केसू जी ॥ ७ ॥

---

१ किया ।

सीख लेई घर आवियो सरे, निज नारी के पास ।
ज्योकी त्यो सब मांडने सरे, कही बात प्रकाशजी ।। ८ ।।
पशु और पक्षी पृथ्वी पर, कई तरह का होय ।
अचम्भा को वच्चो आज तक, सुण्यो न देख्यो कोयजी ।। ९ ।।
नारी कहे सुण नाथजी सरे, दग दृष्टी दो आप ।
शील भग सतियो को करवा, नृप विचारचो पापजी ।। १० ।।
व्यभिचारी की होय खरावी, निडर रहो पतिराज ।
परनारी फिर कभी न वंछे, ऐसो करां इलाजजी ।। ११ ।।
कारीगर बुलवाय ने सरे, युगल होद बनवाया ।
एक होद मे रुई पेल, दूजा मे सेंत[1] भरायाजी ।। १२ ।।
एक वणायो पीजरो सरे, रुई होद के पास ।
खूव मुनि कहे दूजी ढाल मे, आगे रसिक समासजी ।। १३ ।।
।।दोहा।। अज्ञानी अन्धा जिसा, निज हित समझे नाय ।
सिंह सरीखा शूरमा, पड्या पीजरा मांय ।। १ ।।

ढाल तीसरी

(तर्ज —चिंतामणि पार्श्वनाथ, चिंता तो म्हारी चूरजोजी पार्श्वनाथ)

नारी कहे सुण नाथ, विनवो राय ने, हो लाल, विनवो राय ने ।
वच्चो अचम्भा को एक, लावसु जायने, हो लाल, लावसु जायने ।। १ ।।
कहियो सहस्र पचास, खरच पडसी सही, हो लाल, खरच पड़सी सही ।
लागेला खट मास, या मे संदेह नही, हो लाल, या मे संदेह नही ।। २ ।।
इण विधि बात वणाय, नृप ने खुश करो, हो लाल, नृप ने खुश करो ।
नगद रुपैया गीणाय, लाय घर मे धरो, हो लाल, लाय घर मे धरो ।। ३ ।।
जासू कल परदेश, सभी से यह कहो, हो लाल, सभी से यह कहो ।
पीछे हवेली के बहार, छाने सुँ छिप रहो, हो लाल, छानेसु छिप रहो ।। ४ ।।
शेठ सागर सुण बात, जाय नृप ने कयो, हो लाल, जाय नृप ने कयो ।
तिमहिज कर सब काम, छानेसु छिप रहो, हो लाल, छानेसु छिप रहो ।।५।।
बीत्या दिन दो चार, विचारचो रायने, हो लाल, विचारचो राय ने ।
मध्य राते महिपाल, पोशाक वणायने, हो लाल, पोशाक वणायने ।।६।।
सैर करण के काज, आज जासू सही, हो लाल, आज जासू सही ।
आऊँ छूं पाछो सिताव, राणी सू इम कही, हो लाल, राणी सूं इम कही ।।७।।

---

[1] शहद ।

निकल्यो अकेलो राय, पाप मन मे बस्यो, हो लाल, पाप मन मे बस्यो ।
सागर सेठ के ठेठ, भवन मे आ घुस्यो, हो लाल, भवन मे आ घुस्यो ॥८॥
आतो देख नरेन्द्र, विनय कर श्रीमती, हो लाल, विनय कर श्रीमती ।
विलमायो दे विश्वास, शील राखण सती, हो लाल, शील राखण सती ॥९॥
वस्त्र आभूषण खोल, करो मज्जन सही, हो लाल, करो मज्जन सही ।
मान्यो वचन नरेन्द्र, कपट जाण्यो नही, हो लाल, कपट जाण्यो नही ॥१०॥
लज्जा ढांकण काज, पेरचो पट राय ने, हो लाल, पेरचो पट राय ने ।
करत स्नान तिवार, बोल्यो सेठ आयने, हो लाल, बोल्यो सेठ आय ने ॥११॥
खोलो शीघ्र कपाट, कहै [1]हेलो देयने, हो लाल, कहै हेलो देय ने ।
बच्चो अचम्भा को एक, आयो छू लेय ने, हो लाल, आयो छूं लेयने ॥१२॥
यह हुई तीजी ढाल, द्वार खोल्यो नही, हो लाल, द्वार खोल्यो नही ।
'खूब' मुनि कहै नृप, सती से सूं कही, हो लाल, सती से सू कही ॥१३॥

॥दोहा॥ गरज बडी ससार, मे गरजे वणे गुलाम ।
गरज थकी जन नीच ने, ऊ चा करे प्रणाम ॥१॥

ढाल चौथी

(तर्जः वे गुरु म्हारा वे गुरु म्हारा ने कर लोनी थायरा)

पर रमणी पर रमणी को, सग कोई मत करो ॥टेर॥

कर जोडी कहै नरपति, मुज पर कर उपकार, सुणीजे ।
जब लग मैं जीवतो रहूँ, वंछू नही परनार, सुणीजे ॥१॥
कोप करी श्रीमती कहै, यह नही उत्तम रीत, सुणीजे ।
शील सत्याँ को खण्डवा, ऐसी विचारी नीत, सुणीजे ॥२॥
पर रमणी सग लागने, जे नर मान्यो सुख, सुणीजे ।
[2]पाने पड्या यम देव के, नरक मे पावे छे दुःख, सुणीजे ॥३॥
भाग भलो नृप थायरो, पहुँच्यो इणहिज स्थान, सुणीजे ।
अवर जगा जो तू चूकतो, खोय बैठतो जान, सुणीजे ॥४॥
थोडा ही मैं छोडू तुम्हें, छिप जावो इण घर माय, सुणीजे ।
नृप माही जातो पड्यो, सेत का होद के माय, सुणीजे ॥५॥
तन खरड्यो लथपथ थयो, श्रीमती कहै महाराय, सुणीजे ।
इण मे नही इण मे नही, इण घर माही जाय, सुणीजे ॥६॥

---

१ हल्ला करके, आवाज देकर । २ पाले पड़े ।

निकल्यो नृप व्याकुल थको, बीजा घर माही जाय, सुणीजे ।
तिमहिज होद मे जई पड्यो, रुई तन लिपटाय, सुणीजे ॥७॥
सिरीमती कहै सुण नरपति, निडर रहो मन मांय, सुणीजे ।
लघु वारी मांही नीकली, जाली मे वैठो जाय, सुणीजे ॥८॥
वारी माही तन सुकड ने, नीकल्यो नृप घबराय, सुणीजे ।
तिण पिंजरा मांही जाई घुस्यो, कपट जाण्यो कछु नाय, सुणीजे ॥९॥
श्रीमती आय उतावली, तुरत फलक दियो डाल, सुणीजे ।
जोर कछू चाल्यो नही, कवजे हुवो महिपाल, सुणीजे ॥१०॥
द्वार खोल्यो पति आवियो, हँस-हँस पूछे बात, सुणीजे ।
बच्चो अचम्भा को ¹फ़टरो,, मुशकिल आयो हाथ, सुणीजे ॥११॥
निश भर राखो मकान मे, प्रगट हुवा परभात, सुणीजे ।
राज भवन मे ले जावसां, अति उत्सव के सात, सुणीजे ॥१२॥
पिंजरे मे विघ² चितवी, बैठ रयो महिपाल, सुणीजे ।
दम्पति सुख से सो गया, 'खूब' कहे चौथी ढाल, सुणीजे ॥१३॥

॥दोहा॥ गुरु ज्ञान वैराग्य को, असल चढावे रंग ।
भूल चूक करजो मती, परनारी को संग ॥१॥

ढाल पांचमी

(तर्ज :—वीरा म्हारा गज थकी ऊतरो)

यह गति होय कुशील थी, भवियण तुम सुण लीजो रे ॥टेर॥

दिन उगो तब सेठजी, पहुँच्या राजभवन मे रे ।
मत्री से माग लवाजमो, लायो खुश होई मन मे रे ॥१॥
पिंजर काढ्यो वारणे, बाजितर रया वाजी रे ।
बच्चो अचम्भा को देखने, लोक हुवा सब राजी रे ॥२॥
विविध मेवा माही फैंकता, कोई रया चमकाई रे ।
कूदे फुदके उछले, नृप बोले कछु नाई रे ॥३॥
होता खास बाजार मे, पहुँचा महल मुझारो रे ।
राजी हुवा सव देखने, अन्तेवर परिवारो रे ॥४॥
तुरत देखाई महेल मे, शेठ पीछो घर लायो रे ।
पिंजराथी काढ्यो बारणे, विधि से स्नान करायो रे ॥५॥
फिर पोषाक वणायने, नृप पायो चित्त चेनो रे ।
निज मंदिर जातो थको, इण पर वोल्यो वेनो रे ॥६॥

---

१ खूब सूरत । २ भाग्य का विचार करके ।

धन धन तूं मोटी सती, चोखी करी चतुराई रे।
पत राखी थे म्हायरी, गुण भूलू कभी नाई रे ॥७॥
वात किहा करजो मती, मैं सब माफी आपी रे।
ऐसी अनीति आज से, करसूं नाय कदापी रे ॥८॥
इम कही निज मदिर गयो, सबको मन हुलसायो रे।
दिन भर सुन्दर बाग की, सहल करी इहाँ आयो रे ॥९॥
ते दिन थी नृप छोडियो, परनारी नो सगो रे।
श्रीमती पण मोटी सती, राख्यो शील सुचगो रे ॥१०॥
इम सुण मानव जाणजो, पर रमणी निज माता रे।
इज्जत धन वणियो रहे, पावोला सुख साता रे ॥११॥
श्री श्री गुरु नन्दलालजी, ज्ञाननिधि जग माही रे।
तस शिष्य खूब मुनि कहै, शील सदा सुखदायी रे ॥१२॥
गाँव लशाणो मेवाड मे, उगणीसे अस्सी के सालो रे।
फाल्गुण शुदी दिन अष्टमी, पूरण करी पच ढालो रे ॥१३॥

६५

सागर सेठ

(तर्ज —वीरा म्हारा गज थकी ऊतरो)

मानव लोभ निवारिये, लोभ बुरो जग माई रे ॥टेर॥
जबूद्वीप का भरत मे, नगरी पदमपुरी माई रे।
जितशत्रु तिहाँ राजवी, परजा ने सुखदाई रे ॥१॥
सागर सेठ तिहा बसे, द्रव्य घणो घर माई रे।
पुत्र सुचार सुहावणा, कुल दीपक गुणग्राही रे ॥२॥
बेटा नी वहुवा विनीत छे बाजे धर्मण बाई रे।
अल्प आहारी अल्प भाषिणी, सप घणो माहो माई रे ॥३॥
सागर सेठ लोभी घणो, फाटो पहरे लूखो खावे रे।
सुकृत मे समझे नही, दान दिया पछतावे रे ॥४॥
आभूषण वस्तर नवा, पहेरण देवे नाई रे।
पहरे तो तुरत खोलाय ले, मेले मजूप के माई रे ॥५॥
एक दिन फिरतो शहर मे, द्वारे योगीश्वर आया रे।
भूखा था वे तीन दिवस का, भोजन तास जिमाया रे ॥६॥
प्रसन्न हुवो योगी तदा, दीनो मत्र सिखाई रे।
तीन दफे गुणिया थका, चाहे तिहा आवो जाई रे ॥७॥

इतने सुसरोजी आवियो, जीमत देख्यो तेने रे ।
कालो पीलो मन मे थयो,देखो धरम सूझियो ऐने रे ।।८।।
योगी तव चलतो भयो, वहुवा ने ओलम्भो दीधो रे ।
तिण दिन सागर सेठजी, एक दफे अन्न लीधो रे ।।९।।
वहुवां मिलने मतो कियो, कहो आपण [1]सु करवो रे ।
खावण खरचे रुकवो नही, [2]डोसा थी हिवे[3] नही डरवो रे ।।१०।।
मोटो काष्ठ मंगायने, साफ कराय सजावे रे ।
मत्र भणी उपर चढे, जावे तिहां मन भावे रे ।।११।।
वन वाडी पहाड़ा विषे, नदिया सिंधु [4]निवाणे रे ।
मन मानी मौजा करे, सुसरोजी भेद न जाणे रे ।।१२।।
एक दिन सुसरोजी देखियो, भर्म पड्यो, मन मांही रे ।
वहुवा मिल किहा जाय छे, आवे तुरत चलाई रे ।।१३।।
काष्ठ पड्यो हुतो कोण मे, लीनो तिण ने कोराई रे ।
माही सूतो लम्बो थको, डीगरी तास लगाई रे ।।१४।।
पहर निशा वाकी रही, चारो ही मिल कर आई रे ।
सुसरोजी किहा सूता [5]हसे, गुपचुप देवो चलाई रे ।।१५।।
विधि साचव आरूढ हुई, पहुँची गगन मुझारी रे ।
रत्न दीप माही आयने, दीनो काष्ठ उतारी रे ।।१६।।
चारो ही मिल रामत करे, स्वाद लेवे फल मीठा रे ।
डोसो निकल्यो वारणे, विविध रत्न तिण दीठा रे ।।१७।।
रत्न लिया मन मानिया, भरिया काष्ठ मुझारो रे ।
आप सुतो तन सुकड ने, हिवड़े हर्ष अपारोरे ।।१८।।
चारो ही आय उतावली, काष्ठ थई आरूढो रे ।
देर इहाँ करवी नही, बूढो छे अति मूढो रे ।।१९।।
तिम हिज निज घर चालता, देराण्या इम बोले रे ।
भारी थयो दीसे [6]लाकडो, किम चाले होले होले रे ।।२०।।
एक कहे इम चालतां, [7]रखे [8]अवेलो [9]थासे रे ।
सुसरा को डर राखवो, बकसे लोक मुणासे रे ।।२१।।
वीजी कहे कुण देखने, मात पिता परणाई रे ।
सुसरोजी कृपण घणो, सुख देखण दे नाई रे ।।२२।।

---

१ क्या । २ वुड्ढा । ३ अव । ४ जलाशय । ५ होगा । ६ लक्कड । ७ कदाचित् । ८ अवेरा-देरी । ९ होगा ।

तीजी कहै तरु पानडा, पाका थइ थइ खरिया रे ।
रवि ऊगी ऊग [1]आथम्या, सुसराजी अजु नही मरिया रे ॥२३॥
दोप कोई ने देवो नही, चौथी इम समजावे रे ।
कर्म शुभाशुभ जे करे, वे वैसा ही फल पावे रे ॥२४॥
पाट्यो व्यौपारी की जहाजनो, टूट पड्यो जल माई रे ।
उदक हिलोले वहतो थको आतो दियो दरशाई रे ॥२५॥
जैठाणी कहे इण काष्ठ ने, [2]मूको समुन्दर माई रे ।
इण पाट्या का आधार थी, घर पहुँचा क्षण माई रे ॥२६॥
डोसो कहै मूको मती, [3]हूँ छू हूँ छूं इण माही रे ।
भय पामी चारो जणी, तुरत दियो छिटकाई रे ॥२७॥
सागर सेठ समुद्र मे, मर कर नरक सिधायो रे ।
घर मे धन हूँतो घणो, कहो तेने काम सू आयो रे ॥२८॥
तिण पाट्या पर वैठ ने, मत्र थी तुरत चलायो रे ।
वहुवां पहुची निज घरे, मन मान्यो सुख पायो रे ॥२९॥
चारो ही पुत्र पिता भणी, जोयो न लाधो किहाई रे ।
निज निज नारी ने पूछियो, ते कहे होही इहाई रे ॥३०॥
खाती आवी कहै खात थी, मुझ थी काष्ठ कोरायो रे ।
सायत तिण माही होवसी, जोयो तो ते भी नही पायो रे ॥३१॥
गयो हुसी कोई देश मे, इम धीरज मन धरियो रे ।
वाट जोई दिन केतला, जाण्यो आखिर मरियो रे ॥३२॥
शोक मिट्या से चारो जणी, एक मतो कर लीनो रे ।
वैराग्य भावे सतिया कने, सयम धारण कीनो रे ॥३३॥
पदमपुरी का वाग मे, विचरता मुनिवर आया रे ।
सागर सेठ का डोकरा, वदन काज सिधाया रे ॥३४॥
धर्मकथा सुण पूछियो, किहा बसै मुझ तातो रे ।
अतिशय ज्ञानी जिम हुती, तिम माड कही सब बातो रे ॥३५॥
क्रोध मान माया लोभ ये, चारो ससार बढावे रे ।
इनका सग छोड्या थका, भव भव मे सुख पावे रे ॥३६॥

---

१ अस्त हो गया । २ छोडो । ३ मैं हूं ।

सागर सेठ की वारता[1], गुरु मुख से सुण पाई रे।
तिण अनुसारे उमग से, जुगति जोड बनाई रे ॥३७॥
उगणीसे साठ तेवीस मे, पोस विदि दिन पांचे रे।
'खूव' मुनि रतलाम मे, ढाल जोड़ी एक साचे रे ॥३८॥

: ६६ :

ऋषभ भवान्तरी

(तर्ज — भाव धरी जिन वन्दिये)

ऋषभ जिनन्द भगवान् को, तेरा भवाँ को चरित्र सुणीजे ॥टेर॥
जम्बूद्वीप के मध्य मे पश्चिम महाविदेह जान, सुणीजे।
देवपुरी सम शोभतो, नगर [2]सुपईठ वखान, सुणीजे ॥१॥
सुखदाई परजा तणो, प्रियंकर नामा राय, सुणीजे।
अति धनवतो तिहा वसे, धन्नो [3]सारथवाह, सुणीजे ॥२॥
लाभ कमावण कारणे, थयो छे आप तइयार, सुणीजे।
निज नगरी सू निकल्यो, घणा व्यौपारी छे[4]लार, सुणीजे ॥३॥
मारग जातां मानवी, करता जाय मुकाम, सुणीजे।
शीतल छाया देखने, वन मे कियो विश्राम, सुणीजे ॥४॥
तिण वेला ते पड़ाव मे, तपस्वी मोटा मुनिराय, सुणीजे।
चौमासी ने पारणे, फिरतां आया तिण माय, सुणीजे ॥५॥
दूर थी आता देखने, सेठ को हर्ष्यो मन्न, सुणीजे।
सन्मुख जा वन्दन करी, आज [5]दिहाडो धन्न, सुणीजे ॥६॥
और न वस्तु सूझती, सू करीये सन्मान, सुणीजे।
'ना' न कहे मुनि जव लगे, देऊं घृतनो दान, सुणीजे ॥७॥
मुनिवर पातर माँडियो, सुर परीक्षा करी आन, सुणीजे।
'ना' न कह्यो मुनि जव लगे, दीधो घृतनो दान, सुणीजे ॥८॥
पात्र से वाहिर निकलो, जातो हुओ दर्शाय, सुणीजे।
निश्चल मन चिन्ते सेठजी, घृत मुनिवर नो जाय, सुणीजे ॥९॥
या विधि पुण्य सचय करी, नगरी वसंतपुर आय, सुणीजे।
क्रय विक्रय कीनो अति घणो, गहरी[6] टूटी अन्तराय, सुणीजे ॥१०॥

---

१ कथा। २ सुप्रतिष्ठत। ३ सार्थवाह—बड़ा व्यापारी। ४ साथ। ५ दिन। ६ बहुत नफा हुआ।

सेठ तिहाँ से पीछो फिरचो, घर आयो लाभ कमाय, सुणीजे ।
पहलो भव थयो ऋषभ को, आनन्द मे दिन जाय, सुणीजे ।।११।।
दूजे भव जुगल्या हुआ, उत्तर कुरु अवतार, सुणीजे ।
तीजे भव हुआ देवता, पहिला स्वर्ग मुझार, सुणीजे ।।१२।।
विजय भली पुखलावती[1], पूर्व महाविदेह माँय, सुणीजे ।
न्याय निपुण दयानिधि, शतबल नामा राय, सुणीजे ।।१३।।
देव तणी स्थिति भोगने, अनुभव्या सुख अपार, सुणीजे ।
ते सुर चवी तेहनो सुत हुओ, महाबल नाम कुमार, सुणीजे ।।१४।।
बाल अवस्था नीकली, कल बल बुद्धि अनूप, सुणीजे ।
तात ने पाट कालान्तरे, हुओ महाबल भूप, सुणीजे ।।१५।।
रात दिवस रहे महल मे, राज काज तज दीन, सुणीजे ।
नाटक जोवे नव नवा, भोग माही लवलीन, सुणीजे ।।१६।।
इतने आय उतावलो, मत्री करे अरदास, सुणीजे ।
भोग तजी जोग आदरो, आयुष रह्यो एक मास, सुणीजे ।।१७।।
भूप पुछे व्याकुल थको, ते किम जाणी बात, सुणीजे ।
विद्याचारण मुनिवरू, मुझने कह्यो साक्षात, सुणीजे ।।१८।।
आयुप तो एक मास को, इनमे कहो क्या होय, सुणीजे ।
भोग माही नित्य राचने, वक्त दियो सब खोय, सुणीजे ।।१९।।
मत्री कहे एक दिवस को, पाले सजम भार, सुणीजे ।
तिण हिज दिन वैराग्य से, पचख दियो सथार[2], सुणीजे ।।२०।।
बावीस दिन दीक्षा पालने, काल करी मुनिराय, सुणीजे ।
हुआ ललिताग देवता, दूजा स्वर्ग के माय, सुणीजे ।।२१।।
स्वयप्रभा देवी तेहने, तिण सेती राग अपार, सुणीजे ।
क्षण भर जुदा नही रहे, व्यापक विषय विकार, सुणीजे ।।२२।।
आपो तिहाहिज आपदा, इम बोले ससार, सुणीजे ।
देवी चवी तब देवता, आरति करे है अपार, सुणीजे ।।२३।।
मत्री महाबल भूप को, ते भी हुओ तिहा देव, सुणीजे ।
आयो ललिताग देव पै, विनवे यो स्वयमेव, सुणीजे ।।२४।।
इतनी सोच न कीजिये, देवी ते देसु मिलाय, सुणीजे ।
काम सरे उद्यम किया, तेहनो है एक उपाय, सुणीजे ।।२५।।

---

१ पुष्कलावती । २ समाधिमरण अङ्गीकार कर लिया ।

देवी चवी धात्रीखण्ड का, पूर्व महाविदेह माय, सुणीजे ।
पुत्री हुई छे सातमी, विप्र तणा घर जाय सुणीजे ॥२६॥
तात तेहनो नागल हतो, दुखियो है पाप प्रभाव, सुणीजे ।
अन धन से निज कुटुम्ब को, कर सके नही निरभाव, सुणीजे ॥२७॥
घबरायो इम चिन्तवे, जो अब पुत्री होय, सुणीजे ।
चल्यो जासू परदेश मे, घर मे रहूँ नही कोय, सुणीजे ॥२८॥
तस नारी हुई गर्भिणी, विप्र धरे अति द्वेष, सुणीजे ।
पुत्री हुई फिर साभली[1] भाग गयो परदेश, सुणीजे ॥२९॥
प्रेम बिना पाली पुत्रिका, नाग श्री निज मांय, सुणीजे ।
रोष वसे निज पुत्री को, नाम दियो कुछ नाय, सुणीजे ॥३०॥
नाम निनामी लोगा दियो, दुख माही दिन जाय, सुणीजे ।
करती वन्न[2] आजीविका, टंक लावे टंक खाय, सुणीजे ॥३१॥
तिण वन मे एक महामुनि, पाया है केवल ज्ञान, सुणीजे ।
महिमा करन मुनि वदवा, मिलिया सुरासुर आन, सुणीजे ॥३२॥
देख उद्योत तिहां गई, सुणियो तब उपदेश, सुणीजे ।
व्रत धारी हुई श्राविका, हृदय हर्ष विशेष, सुणीजे ॥३३॥
मुनि वंदी गई निज घरे, रहे सतियो के पास, सुणीजे ।
सेवा करे वहु तप तपे, करती ज्ञान अभ्यास, सुणीजे ॥३४॥
शीलवती बाई धर्मिणी, संघ माही जस लीध, सुणीजे ।
आलोचना कर शुद्ध मने, आखिर अनशन कीध, सुणीजे ॥३५॥
इहा से जाय उतावला, दो नियाणो कराय, सुणीजे ।
ललितांग सुर सुन सज थयो, पहुंच्यो तुरत तिहां जाय, सुणीजे ॥३६॥
बात कही सहु माडने, जिम तिम मन ललचाय, सुणीजे ।
ललिताग सुर निज स्थानके, गयो नियाणो कराय, सुणीजे ॥३७॥
ते मर फिर देवी हुई, सुर मन हर्ष अपार, सुणीजे ।
नाटक जोवे नव नवा, भोगवे भोग उदार, सुणीजे ॥३८॥
विजय भली पुखलावती, पूर्व महा विदेह माय, सुणीजे ।
लोहागर नगर भलो, सुवर्ण जग महाराय, सुणीजे ॥३९॥
तिण घर नीको नन्द हुओ, ललितांग सुर को जीव, सुणीजे ।
लक्ष्मी राणी की कुक्ष को, वज्रजग नाम ससीव, सुणीजे ॥४०॥

---

१ सुनकर । २ लकडहारे का धन्धा ।

वलि तिहा षट खण्ड को धणी, वज्रसेन नाम भूपाल, सुणीजे ।
ते देवी मर तिण ने घरे, पुत्री हुई सुखमाल, सुणीजे ॥४१॥
नाम दियो तस श्रीमती, घर मे बहु सुख भोग, सुणीजे ।
रूप कला गुण सोहती, पिण हुई छे वरने योग, सुणीजे ॥४२॥
चक्रवर्ती की जन्म गाठ पै, मिलोया है कई भूपाल, सुणीजे ।
निज नन्दन लेई आवियो, सुवर्ण जग भी चाल, सुणीजे ॥४३॥
तिण वेला ते श्रीमती, जातो देखी सुर विमाण, सुणीजे ।
मन मॉही चिंतित उपन्यो, जाति स्मरण ज्ञान, सुणीजे ॥४४॥
ललिताग सुर तिहा उपनो, पायो मनुष्य अवतार, सुणीजे ।
तेहीज पति शिर धारस्यूं, लीनो अभिग्रह धार, सुणीजे ॥४५॥
निज चित्र लिखियो फलक पै, धरियो भवन के द्वार, सुणीजे ।
देखी स्वयंप्रभा स्वयप्रभा, कहसी ते मुझ भरतार, सुणीजे ॥४६॥
ते वेला मंडप सुर रच्यो, मानो सुर विमाण, सुणीजे ।
ते माही निज आसणे, बैठा है भूपति आण, सुणीजे ॥४७॥
चक्रवर्ती नजराणो ले रह्यो, हो रह्या अतर पान, सुणीजे ।
बाजिन्तर वाजी रह्या, जाचक ने देता दान, सुणीजे ॥४८॥
वर्षी उत्सव मनायने, जलुस जोडी नरनाथ, सुणीजे ।
राजभवन माही आवता, वज्र जग कुँवर भी साथ, सुणीजे ॥४९॥
चित्र देख्यो ते कुंवरजी, हुओ जाति स्मरणवन्त, सुणीजे ।
स्वयप्रभा स्वयप्रभा इम कयो, कु वरी जाणचो निज कत, सुणीजे ॥५०॥
तिणहिज अवसर भूपती, पुत्री ने पूछ्यो विचार, सुणीजे ।
तू कहे तो सगपण करॉं, नही तो स्वयवर धार, सुणीजे ॥५१॥
तब कु वरी का कहन से, स्वयवर मडप कीध, सुणीजे ।
कुवरी वरचो तिण कुँवर ने, हुआ मनोरथ सिद्ध, सुणीजे ॥५२॥
तिण अवसर ते निधिपति, श्रीमती पुत्री प्रधान, सुणीजे ।
तुरत व्याही तिण कुंवर ने, महोत्सव कर मडाण, सुणीजे ॥५३॥
दायजो दीनो अति घणो, अन्त विदा कर दीध, सुणीजे ।
पुत्री पहुँचाई सासरे, बहु विध शिक्षा दीध, सुणीजे ॥५४॥
निकल्यो लेई निज सायबी, सुवर्ण जंग नरेश, सुणीजे ।
रंग विनोद होता थकाँ, आविया आपणे देश, सुणीजे ॥५५॥
कु वर ने राज देई करी, सुवर्ण जग महाराय, सुणीजे ।
संयम ले कर्म काटने, मोक्ष विराज्या जाय, सुणीजे ॥५६॥

राज पाले वज्रजंग हिवे, श्रीमती छे पटनार, सुणीजे ।
निश दिन रहे वैराग्य मे,जाण्यो अनित्य ससार, सुणीजे ॥५७॥
मध्य रात्री राणी प्रत्ये, इम वोले महाराय, सुणीजे ।
सुपना सरीखी साहबी, अवसर वीत्यो जाय, सुणीजे ॥५८॥
जो मन होवे थायरो, प्रगट हुआ प्रभात, सुणीजे ।
राज कुवर ने स्थापने, सयम लेवा साथ, सुणीजे ॥५९॥
राणी कहे सुन रायजी, मुझ भन येही विचार, सुणीजे ।
धर्म मे ढील न कीजिए, निकलो तज ससार, सुणीजे ॥६०॥
इम विचारी ने सो गया, निद्रा मे भरपूर, सुणीजे ।
पलटी नियत निज पुत्र की,ध्यायो ध्यान करूर[1], सणीजे ॥६१॥
जन्म लियो घर नृपति के मिलियो सव सुख साज, सुणीजे ।
तात परलोक हुवे कभी, कब मिलसी मुझ राज, सुणीजे ॥६२॥
ततक्षण उठ आयो तिहा, सोता छे बाप ने माय, सुणीजे ।
लोभ वसे निर्दय थको, दीनी छे अगन लगाय, सुणीजे ॥६३॥
दुष्ट हणिया मा वाप ने, अनर्थ कीदो[2] अपार, सुणीजे ।
दोऊ मरी जुगल्या थया, उत्तर कुरु अवतार, सुणीजे ॥६४॥
देव थया भव आठ मे, पहिला स्वर्ग मझार, सुणीजे ।
पूर्व विदेह नवमे भवे, उपनो वैद्य कुंवार, सुणीजे ॥६५॥
नाम जीवानन्द थापियो, करतो पर उपकार, सुणीजे ।
राजादिक ना सुत भला, मित्र हैं तेहने चार, सुणीजे ॥६६॥
पाचमो मित्र है सेठ को, केशव नाम कु वार, सुणीजे ।
श्रीमति को जीव जाणजो,होसी श्रेयॉस कुंवार,सुणीजे ॥६७॥
इतने तो विचरत आईया, कोढ सहित अणगार, सुणीजे ।
मुनि तन मित्र देखने, उपनी करुणा अपार, सुणीजे ॥६८॥
पाचो मित्र कहे वैद्य ने, येह मुनि को दु.ख टार, सुणीजे ।
इससे मोटो फिर जगत मे, और किसो उपकार,सुणीजे ॥६९॥
ओषधी है सब मुझ कने[3], तीन वस्तु की चाय, सुणीजे ।
तेल चन्दन ने कामली, देसूं रोग मिटाय, सुणीजे ॥७०॥
सेठ ने जाच्यो जायने, वात कही सब खोल, सुणीजे ।
दीनी ते तुरत निकाल के,तीनो ही वस्तु अमोल,सुणीजे ॥७१॥

---

१ क्रूर—दुष्ट—२ किया । ३ पास ।

लक्ष औषधी तेल चोपड्यो, रतन कबल दीनो बीट, सुणीजे ।
साधु ना सर्व शरीर थी, बाहिर निकल्या कीट, सुणीजे ॥७३॥
मुआ कलेवर मायने, कीट सभी घर दीध, सुणीजे ।
बावना चन्दन चर्चीयो, तीन दफे इम कीध, सुणीजे ॥७४॥
वैद जीवानन्द मुनि तणो, कीदो निरोगो तन्न, सुणीजे ।
मोटो लाभ कमावियो, लोग कहे धन्न धन्न, सुणीजे ॥७५॥
छहूँ मित्रो ने साथ मे, लीनो सयम भार, सुणीजे ।
दसमे भव हुवा देवता, बारमा स्वर्ग मुझार, सुणीजे ॥७६॥
विजय भली पुखलावती, पूर्व महाविदेह माय, सुणीजे ।
पु डरीकिणी नगरी भली, वज्रसेण तिहा राय, सुणीजे ॥७७॥
तीर्थङ्कर पद सहित छे, धारिणी तस पटनार, सुणीजे ।
ते सुर चवि तेहनी कूंख मे, पुत्र पणे अवतार, सुणीजे ॥७८॥
वज्रनाभ, बाहू सुबाहू, पीठ महापीठ धीवन्त, सुणीजे ।
ज्येष्ठ पुत्र चक्रवर्त छे, होसी ऋषभ भगवन्त, सुणीजे ॥७९॥
श्रीमती को जीव स्वर्ग से, ते पिण नर अवतार, सुणीजे ।
चक्रवर्त को हुवो सारथी, विलसे सुख ससार, सुणीजे ॥८०॥
वज्रसेण तीर्थङ्करू, ज्येष्ठ पुत्र ने पट थाप, सुणीजे ।
वर्षी दान देई करी, सयम लीनो आप, सुणीजे ॥८१॥
वज्रनाभ षट खण्डपति, निज भार्या साथे प्रेम, सुणीजे ।
सम्पूरण रिद्ध भोगवे, निश दिन वरते क्षेम, सुणीजे ॥८२॥
विचरत आया तिण समे, वज्रसेन जिन राय, सुणीजे ।
चक्रवर्त लेई निज साहबी, जिन पद वद्या आय, सुणीजे ॥८३॥
जिनवर धर्म सुणावियो, जाण्यो अनित्य ससार, सुणीजे ।
चक्रवर्त सयम आदर्यो, पाचो ही बधव लार, सुणीजे ॥८४॥
सारथी पण साथे थयो, चाले गुरुजी की केण, सुणीजे ।
महिमडल माँहि विचरता, सकल जीवा की सेण सुणीजे ॥८५॥
वज्रनाभ मुनिवर भण्या, चवदा पूरव मन रग, सुणीजे ।
उद्यम कर पाचो मुनि, भणिया इग्यारे अग, सुणीजे ॥८६॥
ग्रामादिक मुनि विचरिया, करने धर्म उद्योत, सुणीजे ।
दो[1] दस बोल सेवन करी, बाध्यो तीर्थ कर गोत्र, सुणीजे ॥८७॥

---

१ बीस ।

वाहु सुवाहु दोनो मुनि, आलस्य को तज दीन, सुणीजे ।
पाच सौ मुनि तपस्वी तणी, तन मन व्यावच[1] कीन, सुणीजे ॥८८॥
रात दिवस करे बन्दगी, राजकुली अणगार, सुणीजे ।
चारो ही सघ स्तुति करे, सफल एहनो अवतार, सुणीजे ॥८९॥
पीठ महापीठ मुनि वरू, गुण सुण मुण पावे खेद, सुणीजे ।
द्वेप भाव हिरदे घणो, वाध्यो स्त्री वेद, सुणीजे ॥९०॥
संयम तप धन संचने, आखिर अनशन कीध, सुणीजे ।
काल करी ने छहुँ मुनि, उपना सर्वार्थसिद्ध, सुणीजे ॥९१॥
द्वादसमो भव यह हुवो, रचियो सरस सम्वन्ध, सुणीजे ।
हिवे कहेसू भव तेरमो, सुणताँ चित्त आनन्द, सुणीजे ॥९२॥
जम्वू द्वीप का भरत मे, कोशल नामा देश, सुणीजे ।
तीजे आरे उतरताँ, कुलकर नाभि नरेश, सुणीजे, ॥९३॥
मरुदेवी [2]तस्य भार्य्या, परम सुखी पुण्यवन्त सुणीजे ।
ते जननी की कूख मे, उपन्या श्री भगवन्त, सुणीजे ॥९४॥
चौथ असाढ कृष्ण पक्षे, आया गर्भ मुझार, सुणीजे ।
चैत्र विंदी दिन अष्टमी, आप लियो अवतार, सुणीजे ॥९५॥
छपन कुवारी देवी मिली, मिलिया इन्द्र तमाम, सुणीजे ।
मेरु गिरी महोत्सव कियो, दियो ऋषभ जी नाम, सुणीजे ॥९६॥
लाख चौरासी पूर्व को, आयुष्य पाया आप, सुणीजे ।
तन कंचन सम सोहतो, पूरब पुण्य प्रताप, सुणीजे ॥९७॥
इन्द्र आई नृप पद दियो, ऋषभ थयो महाराय, सुणीजे ।
सर्व विज्ञान सिखावियो, प्रजा के हित काज, सुणीजे ॥९८॥
प्रथम सुमगला परणिया, दूजी सुनन्दा नार, सुणीजे ।
आदि राजा हुआ भरत मे, विलसे सौख्य अपार, सुणीजे ॥९९॥
ते सुर चारो ही चव करी, ऋषभ घरे अवतार, सुणीजे ।
एक एक जनम्यो जोडलो, वेहुं ऋषभ जी की नार, सुणीजे ॥१००॥
भरत अने ब्राह्मी हुआ, दोनो भगिनी भ्रात, सुणीजे ।
बाहुबली अने सुन्दरी, सुनन्दा का अगजात, सुणीजे ॥१०१॥
सुमगला फिर जनमिया, जोड़ला गुण पच्चास, सुणीजे ।
ऋषभ जी के दो बेटियाँ, सव सुत दोय [3]पच्चास, सुणीजे ॥१०२॥

---

१ सेवा । २ तस्य, उसकी । ३ सौ ।

दो दश लाख पूरव लगे, कंवर पदे रया आप, सुणीजे ।
त्रेसठ लाख पूरव लगे, भोगवियो राज प्रताप, सुणीजे ॥१०३॥
लाख पूरब बाकी रया, दियो भरत ने पाट, सुणीजे ।
बाकी निन्याणु पुत्र ने, राज दियो सब बाँट, सुणीजे ॥१०४।
वर्षी दान देई करी, चार सहस्र परिवार, सुणीजे ।
चैत्र विदी नवमी दिने, लीनो सजम भार, सुणीजे ॥१०५॥
वर्ष दिवस ने पारणे, ऋषभ त्रिलोकी नाथ, सुणीजे ।
इखु रस को कियो पारणो, श्रेयाँस कुवरजी के हाथ, सुणीजे ॥१०६॥
सहस्र वर्ष छद्मस्त रया, निश दिन निर्मल ध्यान, सुणीजे ।
फागुण वदि एकादशी, उपनो केवल ज्ञान, सुणीजे ॥१०७॥
केवल महिमा सुर करे, हो रया जय जयकार, सुणीजे ।
दो विधि धर्म बतावियो, थाप्या तीरथ चार, सुणीजे ॥१०८॥
चौरासी सहस्र मुनि हुआ, चौरासी हुवा गणधार, सुणीजे ।
तीन लाख हुई आरज्याँ, केवली बीस हजार, सुणीजे ॥१०९॥
तीन लाख श्रावक हुआ, ऊपर पाँच हजार, सुणीजे ।
पाँच लाख हुई श्राविका, ऊपर [१]चोष्ट हजार, सुणीजे ॥११०॥
चार सहस्र साडा सात सौ, चवदा पूरब का धार, सुणीजे ।
बारा सहस्र छस्सौ पचास, वादी हुआ अणगार, सुणीजे ॥१११॥
बीस सहस्र छ सौ ऊपरे, वैक्रय लब्धि का धार, सुणीजे ।
बारा सहस्र छसौ पचास, विपुल मतीना धार, सुणीजे ॥११२॥
बावीस सहस्र नव सौ मुनि, गया अणुत्तर विमान, सुणीजे ।
साठ सहस्र साधु साधवी, पहुँचा ते निर्वाण, सुणीजे ॥११३॥
महि मडल माँही विचरता, करता पर उपकार, सुणीजे ।
केईक मेल्या मोक्ष मे, केईक स्वर्ग मुझार, सुणीजे ॥११४॥
आदीश्वर आखिर समय, लाख पूरब सयम पार, सुणीजे ।
अष्टा पद गिरि ऊपरे, दस सहस्र मुनिपरिवार, सुणीजे ॥११५॥
पल्यकासण बैठा थका, छै दिन के उपवास, सुणीजे ।
माह विदि तेरस के दिने, मुक्ति मे कीनो निवास, सुणीजे ॥११६॥
पचास लाख क्रोड सागर नो, शासन स्वामी को जाण, सुणीजे ।
पाट असख्य मुगति गया, सूत्र वचन प्रमाण, सुणीजे ॥११७॥

---

२ चौंसठ ।

दान दिया से सुपात्र ने, मिट जावे तस सब दु.ख, सुणीजे ।
आदीश्वरजी की परे, अधिक अधिक पावे सुक्ख, सुणीजे ॥११७॥
साधु सतियादिक से करु, विनती वारम्वार, सुणीजे ।
ओछो अधिको जे हुवे, लीजो आप सुधार, सुणीजे ॥११६॥
श्री श्री गुरु नन्दलालजी, खुश होकर मन मांय, सुणीजे ।
हुक्म दियो तव जावरे, कीनो चौमासो आय, सुणीजे ॥१२०॥
उगणीसे साठ चौवीस मे, ऋषि पंचमी गुरुवार, सुणीजे ।
जोड़ी ऋषभ [1]भवन्तरी, ऋषभ चरित्र अनुसार, सुणीजे ॥१२१॥

: ६७ :

अमरसेन वीरसेन चरित्र

॥ दोहा ॥

पार्श्वनाथ प्रणमू सदा, वामा देवी नन्द ।
नित्य स्मरण करता थकां, पावे चित आनन्द ॥१॥
शरण ग्रही जिनराज का, कहूँ कथा विस्तार ।
अमरसेन वीरसेनजी, किम पाया भव पार ॥२॥
दो थे लड़के ग्वाल के, दुखिया दीन अनाथ ।
हस्तिनापुर मे आविया, दोनो भाई साथ ॥ ३ ॥
उस नगरी के मायने, श्रावक था जिनदास ।
दया भाव कर तेहने, राख्या दे विश्वास ॥ ४ ॥

ढाल पहली

(तर्ज.—चन्दगुपत राजा सुणो)

एक भाई वन के विषे, वाछरू लेई ने जावे रे ।
साथे बांधे सूकडी, सांझ पड्या घर आवे रे ॥ १ ॥
चतुर सनेही साभलो ॥ टेक ॥

दूजो भाई घर रहै, करे [2]भोलायो कामो रे ।
रात दिवस मन नी रली, सुखे रहै आठो यामो रे ॥ २ ॥
श्रावक मात-पिता जैसो, निज गुण माहे वसियो रे ।
साधु तणी सेवा करे, जिनवाणी को रसियो रे ॥ ३ ॥

---

१ भवान्तर । २ सौंपा हुआ ।

कोइक दिन के आतरे, हस्तिनापुर के माही रे।
साधु सुपात्र पधारिया, भद्रिक भाव सहाई रे ॥ ४॥
श्रावक सुन मन हुलसियो, वंदन काज सिधावे रे।
दोनो लडके ग्वाल के, साथ लायो चित चावे रे ॥ ५ ॥
मुनिवर दीनी देशना, भाख्यो तप अधिकार रे।
तपस्या से कर्म क्षय हुवे, विपत नसावन हार रे ॥ ६ ॥
श्रावक सुण उपदेशना, हिवडे हर्ष भरायो रे।
वदना कर मुनिराज ने, सेठ निज घर आयो रे ॥ ७ ॥
दोनो भाई बैठा रया, मन मे एम [1]विमासो रे।
इन्द्र-धनुष तरु-पान ज्यो, है इस तनको तमासो रे ॥ ८ ॥
कर जोडी ऊभा हुवा, आया मुनिवर पास रे।
गुरु मुख से भावे करी, पचक्ख लियो उपवास रे ॥ ९ ॥
श्रावक कहै अरे [2]बालूडा, बहुत लगाई देर रे।
भोजन यह जीमो तुम्हे, हुई अब यो अबेर रे ॥ १० ॥
आज हम हैं उपवासिया, तब सेठ कहै शुद्धभावे रे।
दान दीजो निज हाथ सूं, जो मुनिवर यहा आवे रे ॥ ११ ॥
वाट जोवे दोनो जणा, तिण अवसर मुनिराया रे।
मास खमण के पारणे, फिरता वहा ही आया रे ॥ १२ ॥
एक स्थाने आई मिल्या चित वित, पात्र तीनो रे।
मुनिवर के चाहै जैसा, दान भावे करी दीनो रे ॥ १३ ॥
पडत ससारी दोनो हुवे, दीनी दुरगत टाल रे।
'खूब' मुनि कहे साभलो, यह हुई पहेली ढाल रे ॥ १४ ॥

ढाल दूसरी

(तर्ज – रे जाया तुझ विन घडी रे छह मास)

तिण काले ने तिण समेजी, कपिलपुर के माय।
परजा पालक गुण निलोजी, जयसेण नामे राय ॥ १ ॥
चतुर नर करजो साधु की सेव ॥टेक॥

पटराणी तस प्रेमलाजी, निसदिन करे रे विलाप।
पुत्र नही एक म्हारे जी, काई बाध्यो पाप ॥ २ ॥
दुमण महारानी हुई जी, भूपति पूछे जी एम।
कौन वचन तुम लोपियोजी, आरति आई केम ॥ ३ ॥

---
१ विमर्श-विचार। २ बच्चो।

बात कही सब मांडने जी, तब नृप करेजी उपाय।
नेमित्तिक बुलायने जी, पूछे तब महाराय ॥ ४ ॥
निमितियो कहै साभलोजी, पुत्र होसे जी दोय।
विछवो पडसे मातनोजी, परदेशा सुख होय ॥ ५ ॥
साधु की सुण उपदेशनाजी, होसे महा मुनिराय।
तप सयम शुद्ध पालनेजी, जासे मुक्ति माय ॥ ६ ॥
वे दोनो बालक मरीजी, प्रेमला के कूंखे आय।
पूरे महिना जनमियाजी, महोत्सव कीनो राय ॥ ७ ॥
पांच वर्ष का बाल हुआजी, माता कीनो काल।
सौतेली माता करेजी, दोनो का प्रतिपाल ॥ ८ ॥
अनुक्रमे मोटो हुवेजी, दोनो भाई की जोड।
करे किलोला शहर मे जी, इच्छा हो तिण ठोड़ ॥ ९ ॥
यौवन वय मे आवियाजी, राज कुंवर सुखमाल।
यश महिमा अति विस्तरीजी, चाले कुल की चाल ॥ १० ॥
पटरानी महिपाल की जी, मन मे करे रे विचार।
राज मिले जो एहने जी, कुण पूछे मुझ सार॥ ११ ॥
विष, शस्त्र, मत्र करीजी, मैं मांरू देई त्रास।
पाप लगे पहिलो सहीजी, होय नरक मे वास ॥ १२ ॥
चरित्र रचू कोई एहवोजी, दूं इनके सिर दोप।
परवारो पापो कटेजी, पूरे मुझ मन होस ॥ १३ ॥
'खूब' मुनि कहे साभलोजी, या हुई दूजी ढाल।
बात जँचावे राय ने जी, कुंवर का पुण्य विशाल ॥ १४ ॥

ढाल तीसरी

(तर्ज —यो भव रतन चिन्तामणि सरीखो)

चरित्ताली निज पति भरमावण, साडी फाडी खण्ड कीधा रे।
निज हांता थी अंग विलूरचो, गहेणा विखेरी दीधा रे॥ १ ॥
देखो करम गति दोनो कुवर की ॥टेर'।
मस्तक का फिर खोल्या लटूरचा, चूड्या करी चकचूरो रे।
एकात जाय पलग पर पोढी, चरित्र रच्यो इण पूरो रे ॥ २ ॥
तिण दिन नृपति हर्ष धरीने, महेला माही आयो रे।
पटराणी माम्हो नही जोवे, चिन्ते जब महारायो रे ॥ ३ ॥

राय कहे किण कारण राणी, आरति तुम्हे दिल छाई रे।
बिना कहै मालुम किम होवे, दीजे चौडे दरसाई रे ॥ ४ ।
टपक टपक तेहना आख थी आसु, बर्षे जिम जलधारा रे।
गदगद बोले छाती भरावे, रोवे अति विकरारा रे ॥ ५ ॥
परमेश्वर म्हारी पत राखी होत कौन विचार रे।
कुल ने कलक न लाग्यो सो चोखो, देवी करी मुज सार रे ॥ ६ ॥
दोनो कर माथे धर लीना, कपडा से पूछे आसू रे।
थरथर गात्र धूजे अति कपे, नृपति देख विमासू रे ॥ ७ ॥
भिन्न भिन्न कारण नरपति पूछे, होवे सो कहो मुझ साँची रे।
शका मन मे मूल न राखो, होवेगा सब आछो रे ॥ ८ ॥
ऐसा वचन सुणी महाराणी, कहवे भूपति आगे रे।
साँच कह्या लज्जा मुझ आवे, बात आछी नही लागे रे ॥ ९ ॥
शपथ दिलाई आपणी राजा, तब राणी इम भाखे रे।
मेलवणी सागे कर दीधी, सब साची कर दाखे रे ॥ १० ॥
प्रेमला राणी की कुक्षि का जाया, अमरसेन वीरसेनो रे।
यौवन मे तो कछु नही सूझे, विषय अध सुँ केणो रे ॥ ११ ॥
दोनो श्वान ज्यो दौडी ने आया, तत्क्षण विलग्या आई रे।
तब मे कूक करी अति गाडी, कौन सुने महेल माही रे ॥१२॥
शरम न आई माता केरी, दूजा से किम चूके रे।
इण ने राख्या शोभा नही होवे, कुल मर्यादा मूके रे ॥१३॥
एहवी बाता हुई अणजुगती, मूंढो कैसे बताऊँ रे।
पृथ्वी फटे तो सुणो हो साहब, माही ऊतर जाऊँ रे ॥१४॥
तिण वेला सावधान न होती, तो होती मुझ ख्वारी रे।
मरण भलो पर शील न खण्डू, एहवी दृढता धारी रे ॥१५॥
इणरो तो महेला माही रेणो, यह बाता फिर होसी रे।
तो मुजने जीणो नही जुगतो, भलो मरण हित होसी रे ॥१६॥
भूपति बात सुणी अति कोप्या, कीजे कौन उपायो रे।
इण कु वरा को अब काई करवो, सो मुझ राह बताओ रे ॥१७॥
जो इच्छा हो वही करो साहब, टालो चाहे एह ने पालो रे।
'खूब' मुनि कहै पुण्य कु वर का, या हुई तीजी ढालो रे ॥१८॥

ढाल चौथी

(तर्ज—चेतन मोरा रे)

कोप करी ने आवियो रे, राज सभा मे भूपाल, चेतन मोरा रे ।
चाकर पुरुप पठायने रे, तुरत बुलायो चण्डाल, चेतन मोरा रे ॥१॥
पुण्य सहाय करे तेहनी रे ॥ टेक ॥
निरणो न कीधो नरपति रे, ना कुछ सोची वात, चेतन मोरा रे ।
हुक्म दियो चण्डाल ने रे, छाई अन्धेरी रात, चेतन मोरा रे ॥ २ ॥
अमरसेन वीरसेन ने रे, ले जाओ विपन मझार, चेतन मोरा रे ।
भर्म पड़े नही तेहने रे, दया न आणो लगार, चेतन मोरा रे ॥ ३ ॥
दोनो का शीष उतार ने रे, लाओ हमारे पास, चेतन मोरा रे ।
देखू नजर पसार ने रे, तव मुझ हो विश्वास, चेतन मोरा रे । ४ ॥
वात सुणी चण्डाल नी रे, थर थर कम्पी काय, चेतन मोरा रे ।
निर्णय किया बिन नरपति रे, कैसो करे अन्याय चेतन मोरा रे ॥ ५ ॥
भूपति आज्ञा जाण ने रे, कियो वचन प्रमाण, चेतन मोरा रे ।
अमरसेन वीरसेन ने रे, तुरत लिया वाको ताण, चेतन मोरा रे ॥ ६ ॥
कुंवर कहै कारग कहो रे करो भाई तुम वात, चेतन मोरा रे ।
कहां ले जाओ हम भणी रे, कैसे ग्रह्यो मुझ हाथ, चेतन मोरा रे ॥ ७ ॥
श्वपच कहै कु वर ने रे, नहीं छे मारो दोष, चेतन मोरा रे ।
कुण जाणे कारण किसो रे, राजा कियो है रोप, चेतन मोरा रे ॥ ८ ॥
खेंचाताण करता थका रे, ले गया वन के मांय, चेतन मोरा रे ।
कुंवर कहै मांरा तातजी रे, होये यह कैसा अन्याय, चेतन मोरा रे ॥ ६ ॥
कु वर कहै चण्डालने रे, तुम वनो जीतव्य दातार, चेतन मोरा रे ।
हुकम वजावागा थांयरो रे, भूलां नही उपकार, चेतन मोरा रे ॥१०॥
आंसू पडे तेहनी आंख थीरे, उपजी दया की रेस, चेतन मोरा रे ।
जीवता राखू तुम भणी रे, जाना पड़े तुम्हे परदेश, चेतन मोरा रे ॥११॥
धीरज दीनी तेहने रे, मत करो सोच लगार, चेतन मोरा रे ।
वालूडां कहै कर जोड़ने रे, नया जन्मका तुम दातार, चेतन मोरा रे ॥१२॥
दिनकर ने रजनीपतिना रे, शपथ दिलाई स्वयमेव, चेतन मोरा रे ।
कोल वचन गाडो कियो रे, घर लायो तत्क्षेव, चेतन मोरा रे ॥१३॥
तिण वेला माटी तणा रे, शीप वणाया दोय, चेतन मोरा रे ।
'खूब' कहे चौथी ढाल मे रे, नृप ने वताया सोय, चेतन मोरा रे ॥१४॥

ढाल पांचवी

(तर्ज —राजविया ने राज पियारो)

एक सरीखा मस्तक नीका, ऊपर रग लगायो रे।
रासडी पोई ने कर माही लीना,श्वपच निशा मे लायो रे ।। १ ।।
देखो करम गति दोनो कु वर की ।।टेक।।
रात समय नृप बैठा झरोखे, दोनो मस्तक लाई रे।
चन्द्र प्रकाश मे ऊभो रह कर, नजरे दीना दिखाई रे ।। २ ।।
मस्तक देखी नृप विशेखी, पूछे बात जबानी रे।
जाय कही सब पद्मण आगे, खुशी हुई महाराणी रे ।। ३ ।।
महेतर पाछो निज घर आयो, दोनो कु वर के पास रे।
पहर निशा रही दोनो ने काढ्या, दीनो अति विश्वास रे ।। ४ ।।
कम्पिलपुर थी दोनो चाल्या, वन खण्ड जोता जावे रे।
साथे और कोई नही दूजो, हिवडो भर भर आवे रे ।। ५ ।।
दोनो भाई आपणा मन मे, करता जाय विचारो रे।
कहा जावा ने कौन पिछाणे, कोण करेगा सारो रे ।। ६ ।।
वीरसेन कहे अमरसेन ने, भाई तू मत रोवे रे।
कर्म कमाया भोग्या छूटे, होनहार सो ही होवे रे ।। ७ ।।
हेतु जुगत कर गाढ बधायो, चिन्ता न करणी भाई रे।
सुख न रहा तो दुख किम रहसी, सोचो तुम मन माई रे ।। ८ ।।
इम करता वन माही जाता, आम्बो देख्यो भारी रे।
विश्रामो लेवण ने काजे, दोनो भ्रात विचारी रे ।। ६ ।।
अम्बतले दोनो भाई बैठा, मनसूवो एम विचारी रे।
बारी बारी को पहेरो देता, रात वितावा सारी रे ।। १० ।।
वीरसेन जी पहेला सूता, अमरसेन जी जागे रे।
आप सुतो ने भाई जगायो, दूजो पहर जव लागे रे ।। ११ ।।
वीरसेन जी पहरा देता, मन मे एम विचारो रे।
तातजी हुक्म दियो मारण को कीनो नही निस्तारो रे ।। १२ ।।
कौन गति होसे अब आगे, परदेशां के माई रे।
अमरसेन की करे रखवाली, आरति तस मन माई रे ।। १३ ।।
तिण दरखत पर पक्षी बैठो, तम छायो अर्घ रेनी रे।
'खूब' मुनि कहे पचमी ढाले, इच्छा पूरण हो तेहनी रे । १४ ।।

ढाल छठी

(तर्ज —धन धन तपसीजी हो मुनिवर धर्मरुचि अणगार)

अम्ब कोचर [1]मे सुवो सुवटी, हो के भवियण, बोले एहवी बात।
परदेशी ये बापडा, होके भवियण, रया विपिन मे रात के ॥१॥
सुख की सम्पत्ति, होके भवियण, सुवटे दीनी लाय ॥ टेक ॥
इनके मन चिंता घणी, होके भवियण, तेहनो कौन विचार।
सुवो कहै सुण एहना, होके भवियण, दुख नो छेह न पार के ॥२॥
तोती कहै अब एहनो, होके भवियण, दुख को दूर निवार।
पंखी को भव पाय के, होके भवियण, सफल करो अवतार के ।३॥
सुवो सुण उठ कर गयो, होके भवियण, तिणहिज वन के माय।
गुठली दो तरुवर तणी, होके भवियण, लायो तत्क्षण जाय के ॥४॥
सुवटे गुठली प्रेम से, होके भवियण, दी वीरसेन ने आय।
एक एक गुठली दोनो जणा, होके भवियण, लीजो उर गट काय के ॥५॥
गुण है यह पहली तणो, होके भवियण, लहे दिन सात मे राज।
प्रत्यक्ष गुण दूजो तणो, होके भवियण, सुधरे मन के काज के ॥६॥
सूर्योदय मुह धोवता, होके भवियण, कुल्लो करे तिणवार।
जब देखें तब पाचसौ, होके भवियण, प्रगटे सुवर्ण दिनार के ॥७॥
गुठली ले सुवटा थकी, होके भवियण, राखी अपने पास।
तुरत जगायो भ्रात ने, होके भवियण, हुवो अति प्रकाश के ॥८॥
भाई ये गुठली भली, होके भवियण, सुवटे दी मुझ लाय।
प्रत्यक्ष गुण है यह थकी, होके भवियण, इण मे सशय नाय के ॥९॥
एक एक गुठली निगलने, होके भवियण, मारग की सुध नाय।
अटवी गहन उजाड थी, होके भवियण, निकल्या बाहर जाय के ॥१०॥
भ्रात कहे हु थाकियो, होके भवियण, कीजै कौन उपाय।
विश्रामो लेवा भणी, होके भवियण, बैठा मारग माय के ॥११॥
रवि आयो मध्य भाग मे, होके भवियण, तृषा भूख अपार।
कोमल मुख कुमलावियो, होके भवियण, जोवे दृष्टि पसार के ॥१२॥
क्षेत्रपाल सुर तेहने, होके भवियण, लीना तुरन्त उठाय।
सिंगलपुर की सीमा मे, होके भवियण, मेल्या गम कछु नाय के ॥१३॥
नगरी का तरु देखिया, होके भवियण, देख तलाव विशाल।
'खूब' मुनि कहै पूर्ण हुई, होके भवियण, छट्ठी ढाल रसाल के ॥१४॥

---

१ कोटर, खोतर।

ढाल सातवीं

(तर्ज धन धन मेतारज मुनि)

अमर सेन वीरसेनजी, बैठा सरवर-पाल ।
भाई भूख लागी घणी, करिये भोजन थाल ॥१॥
भाई थे भक्ति करो ॥टेक॥

वीरसेन मुख धोवता, कीधो कुल्लो तिवार ।
ढेर पड्यो मुख आगले, गीणी पाचसौ दिनार ॥२॥
प्रत्यक्ष परिचय देखियो, सुण सुण बधव आज ।
आज थकी दिन सात मे निश्चय मिलसीजी राज ॥३॥
जल्दी जावो शहर मे लावो भोजन पाक ।
पेठा पकोडी पूडिया, चोखी लाजोजी शाक ॥४॥
चौकस कर कर शहर मे, लाजो ताजाजी माल ।
बिन मौके विलमो मती, आजो फिर तत्काल ॥५॥
वीरसेन इम साभली, लीनी हाथ मे दाम ।
चाल्यो आप सिताप सूं, भाई रयो तिण ठाम ॥६॥
नगरी माँहे पेसता, मिली एक वेश्या नार ।
परदेशी नर देखने, कीनो मन मे विचार ॥७॥
इण ने लेजाऊ निज घरे, विलसु सुख अपार ।
विनती कर वीरसेण ने, मोह लियो तत्कार ॥८॥
यह मन्दिर यह मालिया, तुम छो मुझ भरतार ।
शरम न राखो साहिबा, मैं हूं तुम घर नार ॥९॥
महेर करो मुझ ऊपरे, मानो दासी की अरदास ।
घर मडन शोभा घरणी, रखो दृढ विश्वास ॥१०॥
पीगल्यो मन वीरसेणनो, लेइ चाली आवास ।
गठडी देखी पास मे, बोली एम विमास ॥११॥
कपट करी महोरा सहु, लीनी अपने पास ।
अपनो धन्न वतावियो, उपजाव्यो विश्वास ॥१२॥
कुरलो करता पाचसौ, प्रगटे पुंज दिनार ।
वेश्या ने सौंपे सहू मागे जब हरवार ॥१३॥
वेश्या विचारे नर भलो, कल्पवृक्ष समान ।
'खूब' कहे ढाल सातमी, पावे बहु सन्मान ॥१४॥

ढाल आठवीं

(तर्ज—रे जीवा जिन धर्म कीजिए)

अमरसेन तीर ऊपरे, बैठो करत विचार।
भाई किम आयो नही, क्यो लागी अवार ॥१॥
मोह वडो रे संसार मे ॥टेर॥

के तो मारग भूलियो, के कोई उपनो काम।
के कोई सेंधो[1] मिल गयो, के कोई खोयो दाम ॥२॥
सिंगलपुर इण शहर मे, काई देखतो होय।
कहाँ मिले मैं ढूंढू कहा, चहुं दिशि रयो छे जोय ॥३॥
मात पिता वैरी हुवा, रक्षा की थी चडाल।
आज भाई वैरी हुओ, अब होसी कांई हाल ॥४॥
छाती भर भर रोवतो, आंसु वहे परनाल।
आरति मन मे अति घणी, फिरे सरवर पाल ॥५॥
इम करता सझा पड़ी, जोई वाट अथाग।
रात गई तब केतली, आयो नृप के बाग ॥६॥
सयन कियो तिण बाग मे, सूर्य उग्यो ते भाल।
उठ कर शीघ्र सिधावियो, आयो सरवर पाल ॥७॥
फल खाई दिन काढिया, वीत्या इम दिन सात।
राज मीले इण अवसरे, सुणजो अजरज बात ॥८॥
सिंगलपुर को नरपति, राज भोगवे सार।
कर्म योगे गाढी वेदना, व्यापी अग मझार ॥९॥
वेदना दूर निवारवा, आव्या वेद अनूप।
कोई दवा लागी नही, मृत्यु पायो भूप ॥१०॥
भूप केई भेला हुवा, किण ने दीजिए राज।
सब ही चहावे सपति, सीझे कहो किम काज ॥११॥
सब ही मिल मतो कियो, मतगज सज तत्काल।
कुम्भ कलश मस्तक ठव्यो, सू ड ग्रही पुष्प माल ॥१२॥
वाजितर वहु वाजता, लोक हुआ बहु लार।
सिंगलपुर मे होता थका, आया बाग मझार ॥१३॥

---

१ परिचित।

गज आयो अति मलपतो, सूतो कुंवर ते ठाम ।
सूंड करीने जगावियो, देखे खलक तमाम ।।१४।।
कुंवर जागी लागो भागवा, लोका ग्रह्यो तत्काल ।
राज देवा मैं तुझ भणी, गला मे डाली पुष्पमाल ।।१५।।
महोत्सव कर मडाण थी, दीनो कुंवर ने राज ।
'खूब' कहै ढाल आठमी, सीद्धा वछित काज ।।१६।

ढाल नौवीं

(तर्ज—हरषी हरषी हरषी प्रभुजी का दर्शन निरखीजी)

अमरसेन तो राज भोगवे, वीरसेन मोहो रागी ।
दोनो भाई एक शहर मे, चिंता गई सहु भागी ।।१।।
गणिका अर्ज करे छे एम, मोमु प्रपञ्च राखो केम ।।टेर।।
वेश्या एक दिन वीरसेन ने, बोले अमृत वाणी ।
परमेश्वर मुझ महेर करी सो, मिलिया उत्तम प्राणी ।।२।।
साहिब मुझ ने साच कहो तो, बात पूछूं एक थाने ।
जब मागू तब महोर पाचसौं, किहा थकी तुम आने ।।३।।
वात न दूजी थाके माके, गुपत पणो किम राखो ।
सुणवा की अभिलासा मुजने, जिम होवे तिम भाखो ।।४।।
वीरसेन तो भोलो ढालो, भेद कछु नही पायो ।
इणने तो जिमही तिम कहैणो, सुख पायो चित चायो ।।५।।
वीरसेन वेश्या से बोले, कहुँ बात सब थाने ।
वन मे एक पक्षी कृपा कर, गुठली दीनी म्हाने ।।६।।
तिण गुठली पर भाव करीने, मुख से महोरा पड़ती ।
जब लग गुठली रहै पेट मे, तब लग बाजी चढती ।।७।।
गणिका बोली सुण हो प्रीतम, बात कही मुज सारी ।
ईं बाता मत कहीजो किण ने, कपट भरी छे नारी ।।८।।
वेश्या मन मे एम विचारे, यह गुठली मुझ लेणी ।
आस सहू मन वछित पूरी, सीख अणी ने देणी ।।९।।
दुष्ट भाव वेश्या मन आण्यो, वीरसेन सू बोली ।
श्वान पीठ को प्यालो भरने, पायो शक्कर घोली ।।१०।।
वीरसेन ने वमन हुवो तब, गुठली निकली बारे ।
तत्क्षण गुठली लीनो वेश्या, ते कहो केम निहारे ।।११।।

वेश्या बोली सुण हो साहिब, फिकर लग्यो अब मुज ने ।
कौन दुष्ट की नजर लगी सो, वमन हुवो छे तुमने ॥१२॥
चूरण गोली अजमो लाकर, दियो खूब सतोषी ।
मनको भर्म मिट्यो नही सायत, करामात और होसी ॥१३॥
अहो निश राख्या मालूम पड़से, हिवड़ा सीख न दीजे ।
'खूब' मुनि कहै नवमी ढाले, यत्न एहना कीजे ॥१४॥

ढाल दसवीं

(तर्ज —जिनन्द माय दीठा हो स्वप्ना सार)

दिन ऊगा मुख धोवता जी, प्रगटी नही दिनार ।
आज जरूरत है घणी जी, बोली वेश्या नार ॥१॥
चतुर नर वेश्या को, सग निवार ॥टेक॥
कुंवर कहै अब काई करू जी, गुठली नही उर मांय ।
छेय न दीजे मुज भणीजी, सरण पड्यो तुज आय ॥२॥
वेश्या टटकीने इम कहैजी, नही हमारे काम ।
मागू तब आपो सदा तो, बैठा रहो इण ठाम ॥३॥
दया न आणी दुष्टणीजी, दीनो बाहर निकाल ।
आसु झरे जिम बादलीजी, आयो सरवर पाल ॥४॥
रे बंधव तू किहां गयो रे, काई होसी मुझ सूल ।
वेश्या मोह्यो मुझ भणीजी, तुझने गयो मैं भूल ॥५॥
इम चिंता करता थकाजी, गई है आधी रात ।
मन धारचा फिर किम हुवेजी, सुणजो भवियण वात ॥६॥
चार चोर तिण समयजी, लाया चोरी माल ।
बेचन काजे आवियाजी, तिण सरवर नी पाल ॥७॥
कंथा, लकुटने पावड्याजी, मिल कर खोली गाँठ ।
चार वस्तु जो होवतीजी, एक एक लेता वाट ॥८।
कलह करे चारो जणाजी, शब्द पड्या तस कान ।
वीरसेन झट उठनेजी, शामिल होगया आन ॥९॥
कलह निवारण थायरोजी, आव्यो छूं तत्क्षेव ।
कैसी वस्तु है तुम कनेजी, समझाऊं स्वयमेव ॥१०॥

कंथा[1] लकुट[2] ने पावड्याजी[3], तीन्हो ही चीज अमोल ।
दीनी सुर ऋषिराजनेजी, लाया झोरी खोल ॥११॥
तस्कर पूछे तू कौन छे जी, साँच कहो मुझ बात ।
परदेशी हूँ मानवीजी, निर्धन दीन अनाथ ॥१२॥
क्या गुण है वस्तु माँहीजी, तस्कर कहै कर गरूर ।
कथा थकी महोरा झरेजी, लकुट थी अरिजन दूर ॥१३॥
पावडिया पग पहेरनेजी, जाय गगन तत्काल ।
'खूब' कहै लक्ष्मी मिलेजी, यह हुई दशमो ढाल ॥१४॥

ढाल इग्यारहवीं

तर्ज — हु रे अनाथी निग्रंथ)

वीरसेन इम विनवे रे, चतुराई से चूप ।
भेष करू तुम निरखवारे, कैसो खुले मुझ रूप ॥१॥
चतुर नर पायो वस्तु अमोल ॥टेक॥

चोर कहे सुन मानवी रे, मन मे राखे केम ।
वस्तु दीनी तेहने रे, नही जाण्यो कछु बहेम ॥२॥
कथा ओढी अंग पै रे, घोटो लीनो हाथ ।
पावडिया पग पहेरने रे, उडियो गगन मे जात ॥ ३ ॥
चोर मन मे चितवे रे, खोई वस्तु अमोल ।
भाग बिना ठहरे नही रे, ले गयो शिर पपोल ॥ ४ ॥
वीरसेन नीचे उतरयो रे, चोर गया निज ठाम ।
आयो सिंगलपुर शहर मे रे, जहाँ वेश्या को मुकाम ॥५॥
वेश्या देखी चिंतवे रे, काइक है इण तीर ।
पास आय ने विनवे रे, फलियो मुझ तकदीर ॥ ६ ॥
कहा गया तुम साहिबा रे, मैं देखी तुम वाट ।
मन्दिर सूनो तुम बिना रे, भोगवो पुण्य का ठाट ॥ ७ ॥
वीरसेन मन चितवे रे, या कपटण है नार ।
नीची नजर लगायने रे, बोल्यो नही लगार ॥ ८ ॥
भर्म तुम्हारे मन मे जो है, सो दाखु सुण पीव ।
मदिरा पीधी तेहथी रे, छकियो नशा मे जीव ॥ ९ ॥

---

१ गुदडी २ लकुट-लकडी ३ खडाऊ ।

मुझ ने तो कुछ गम नही रे, जो कोई जाणो दोप।
माफ करो सब मुझ भणी रे, मत आणो मन रोस ॥१०॥
वीर सेन मन चिन्तवे रे, साची वात को सार।
वेश्या कहै सो सत्य है, दोप न इणरो लगार ॥११॥
तत्क्षण उठने चालियो रे, हुवो चित वेश्या मे लीन।
पंचेन्द्रिय सुख भोगवे रे, ज्यो वारि मे मीन ॥१२॥
महोरा मागे वेश्या जद, वहला देवे तत्क्षेव।
गणिका पूछे वालमा रे, कहां से आणो स्वयमेव ॥१३॥
पावड़िया पग पहेरने रे, उड़ जाऊँ असमान।
'खूब' कहै ढाल ग्यारमी रे, सौंपूँ तुझ ने आन ॥१४॥

ढाल बारहवी

(तर्ज - चन्देरी पति सू कहै)

एक दिन गणिका इम कहै, सुण हो प्रीतम वात पिउडा।
आप गया मुझ छोड ने, तिण रो सुण अवदात पिउड़ा ॥ १ ॥
वेग चालो करो मानता ॥टेक॥

समुद्र मे देवी पूरणा, जिनको वडो प्रभाव पिउडा।
वहु जन आवे जातरी, केइ रंक केई राव पिउडा ॥ २ ॥
मैं भी लोनी मानता, जो मुझ मिल जावे कन्त पिउड़ा।
तो हम दोनो आय ने, करागां पूजा हरषत पिउड़ा ॥ ३ ॥
प्रत्यक्ष परिचय तेहनो, इन कारण से आप पिउड़ा।
शीघ्र यहां से चालिये, पावड़ियां प्रताप पिउडा ॥ ४ ॥
वीरसेन इम बोलियो, इण कामे नही देर पिउड़ा।
दिन ऊगा चालां सही, वनी रहै सब खैर पिउड़ा ॥ ५ ॥
वीरसेन वेश्या दोनो, चालिया समुद्र मांय पिउडा।
पूरणा देवी के मन्दिर मे, उतरे दोनो आय पिउड़ा ॥ ६ ॥
वेश्या कहे सुनो वालमा, निर्मल मन वच काय पिउड़ा।
इन देवी ने पूज लो, त्रिया भेटे नाय पिउडा ॥ ७ ॥
वीरसेन खोल पावड़ी, गयो मन्दिर के मांय पिउड़ा।
पूरणा देवी के सामने, ऊभो शीप नमाय पिउड़ा ॥ ८ ॥
सविधि पूजा करी तेहनी, धूप रयो है क्षेव पिउड़ा।
हाथ जोड़ ने इम कहै, तू देवी स्वयमेव पिउड़ा ॥ ९ ॥

शीष नमायो तिण समय, वेश्या देख्यो रग पिउडा ।
पहेर पावडिया पाव मे, घर आई समुद्र उलंग पिउडा ॥१०॥
पूजा कर देवी तणी, चरणे शीश नमाय पिउडा ।
वीरसेण आयो बारणे, वेश्या ने देखे नाय पिउडा ॥११॥
पावडियाँ भी दीसे नही, कदाचित कीनी [1]रोल पिउडा ।
हेलो पुकारे तेह ने, कहाँ गया तुम बोल पिउडा ॥१२॥
ढूंढी पण पाई नही, कुंवर हुवो दिलगीर पिउडा ।
रे दुष्टन यह काई कियो, नेणा छूटो नीर पिउडा ॥१३॥
इतने विद्याधर एक आवियो, बाध से पूरण प्रेम पिउडा ।
ढाल हुई यह द्वादसमी, 'खूब' मुनि कहे ऐम पिउडा ॥१४॥

ढाल तेरहवी

(तर्ज—भाव धरी जिन वन्दिए)

विद्याधर विमान मे, बैठा है सुखदाई रे ।
ऊपर होकर निकल्यो, जानो महाविदेह माई रे ॥ १ ॥
श्री मन्दिर स्वामी वन्दिए ॥टेक॥

कुंवर का कष्ट प्रभाव से, विमाण थम्यो गगन मे रे ।
तत्क्षण नीचे उतरयो, प्रभुजी बसे तेहना मन मे रे ॥२॥
कुवर से मिलियो आय ने, पूछ्या सहु समाचारो रे ।
वीरसेन सब दाखियो, कर्म को दोष हमारो रे ॥३॥
दु.ख से काढो स्वामीजी, कर मुझ पर उपकारो रे ।
गुण नही भूलूं थाहरो, नया जन्म दातारो रे ॥४॥
विद्याधर इम बोलियो, विदेह क्षत्र मे जासु रे ।
मन मे धीरज धारजे, पन्द्रह दिन मे आशुं रे ॥५॥
वीरसेन इम वीनवे, बात कहो मुझ सागे रे ।
जावो हो दर्शन कारणे, इतना दिन किम लागे रे ॥६॥
श्री मन्दिर स्वामी पास मे, यशोधर नृप नन्दो रे ।
सहस्र पुरुष संग आदरे, सयम भार उमगो रे ॥७॥
जो मन होवे थाहरो, चाल हमारे सग रे ।
जिनवाणी प्रभु दर्शन से, होवे पवित्र अग रे ॥८॥

---

१ हँसी ।

कुंवर कहै आऊ नही, जोऊगा वाट तुम्हारी रे।
आय के वेग सभालजो, मत ना जाओ विसारी रे ।।६।।
विद्याधर यो कह गयो, इन तरु नीचे मत जाजो रे।
उन तरु का फल खावजो, आर्त ध्यान मिटाजो रे ।।१०।।
शीघ्र विद्याधर आइयो, महा विदेह क्षेत्र के मांई रे।
जिनवर को कर वन्दना, बैठा परिषद मे जाई रे ।।११।।
पन्द्रह दिन महोत्सव देखने, विद्याधर पाछो चलियो रे।
तिण हिज द्वीप मे आयके, वीरसेन कुवर से मिलियो रे ।।१२।।
दिन दस तो भेला रया, जावण की हुई त्यारी रे।
इतने वीरसेन पूछियो, देवो इस तरु की शका निवारी रे ।।१३।।
इणने सूंघ्या खर हुवे, मैं वरजा इण काजा रे।
इण तरुना फल सूंघता, पीछो नर होवे ताजा रे ।।१४।।
दोनो ही फूल ले साथ मे, तुरत विमान चलायो रे।
'खूब' कहे ढाल तेरमी, कुंवर सिंगलपुर आयो रे ।।१५।।

ढाल चौदहवी

(तर्ज - हरषी हरखी हरषी रे प्रभुजी का दर्शन निरखी जी)

विद्याधर तो बाग मे मेली, पाछो तुरत सिधायो।
वीरसेन तत्क्षण ऊठी ने, सिंगलपुर मे आयो ।।१।।
वेश्या अर्ज करे छे ऐम, मासु मौन करी छे केम ।।टेक।।
एक वणिक की हाटे बैठो, [1]चऊ दिश कानी नाहरे।
इतने काम तणे प्रयोगे, वेश्या निकली बाहरे ।।२।।
वेश्या देखी मन विचारे, यहा कैसे यह आया।
मैं तो छोड आई समुद्र मे, है यह आश्चर्य सवाया ।।३।।
इसके पास कोई जडी हुवेगा, जाय करूं नरमाई।
वीरसेन के सन्मुख आकर, ऊभी शीष नमाई ।।४।।
पिऊजी मासूं मुखड़े बोलो, कैसे वने हो रोसी।
मैं तो निश दिन याद करती, तो भी समझो मुजको दोसी ।।५।।
अन्न पाणी अगे नही लागो, चित म्हारो तुम माई।
फूल समान या कोमल काया, तुम बिन रही कुम्हलाई ।।६।।
घूघट काढ कुंवर मुख आगल, नेणा आसू नाके।
सांची वात अब कह दो साहिब, मन मे भर्म कांई थाके ।।७।।

---

१ चारो दिशाओ मे इधर उधर निहारता है।

सायत थे इम जाणता [1]होलां, पावडिया ले आई।
मस्तक ऊपर राम विराजे, करूं केम कपटाई ॥८॥
आप गया देवी पूजन को, मैं ऊभी थी एक किनारे।
इतने एक विद्याधर आयो, पावडिया पर दृष्टि डारे ॥६॥
मैं जाण्यो शायद ले जासी, कीनी कर सु आगी।
तदपि झपटी ने वह भागो, मैं तस केडे लागी ॥१०॥
शीघ्र चाल समुदर मे उडीयो, मैं पण हिम्मत राखी।
सिंगलपुर ऊपर होई जाता, पापी मुजने नाखी ॥११॥
तुम बिन मदिर सूना लागे, जिम बिन दीवे बाती।
पखी जिम पाखा होती तो, तुरत उडीने आती ॥१२॥
इण कारण ये साची साहिब, झूठ रती मत जाणो।
इण बाता मे झूठ होवे तो, सोगन मुझ ने खाणो ॥१३॥
उठी चालो महेल आपणे, वीरसेण तब हरख्यो।
'खूब' सुनि कहे ढाल चवदमी, वेश्या घर मे राख्यो ॥१४॥

ढाल पन्द्रहवीं

(तर्ज—चन्देरी पति सु कहै)

दिन कितना एक निकल्या, एक दिन वेश्या नार, भवियण।
देखी वस्त्र की गाठडी, कीनो मनहिं विचार, भवियण ॥१॥
पिऊजी प्रीत निभाइये ॥टेक॥
वीरसेन को पूछियो, साहिब चतुर सूजान, भवियण।
मैं प्रच्छन्न राखू नही, आप कपट की खान, भवियण ॥२॥
गाठ बधी छे वस्त्र की, मुझको बताई नाय, भवियण।
काई वस्तु है इण माइ, साच कहो मुझ वाय, भवियण ॥३॥
वनिता उतावल मत करो, लायो छुं तुम काज, भवियण।
इतना दिन भूली गयो, चौड़े वताऊ आज, भवियण ॥४॥
फूल बतायो खर तणो, वेश्या प्रसन्न भई देख, भवियण।
क्या गुण है इस पुष्प मे, मुझ ने बताओ विशेष, भवियण ॥५॥
वीरसेन इम बोलियो, इण मे बहु गुण दर्शाय, भवियण।
जरा कभी आवे नही, नित्य योवन वय रहाय, भवियण ॥६॥

---

१ होगे।

इण ने सूघूं साहिवा, भली करी मुझ महेर, भवियण ।
सूंघो एकात जायने, मती लगाजो देर, भवियण ॥७॥
वेश्या सूंघ्यो फूल ने, खरी वनी तत्काल, भवियण ।
लेकर घोटो हाथ मे, कुंवर आयो तिहा चाल, भवियण ॥८॥
दे दे मार काढी बाहरणे, लायो खास वजार, भवियण ।
कौतूहल देखन कारणे, भेला हुवा नर नार, भवियण ॥९॥
निर्दय यह कुण मानवी, कूटे छे इण ठोड, भवियण ।
दूजी वेश्या मिल दरबार मे, अर्ज करी कर जोड, भवियण ॥१०॥
परदेशी कोई मानवी, कीनो जवर अन्याय, भवियण ।
मुझ मालिका हुई रासभी, चौडे कूट्या जाय, भवियण ॥११॥
भूप कहै कोतवाल ने, कौन पुरुष ग्रहो आज, भवियण ।
राज सभा मे लावजो, दुष्ट करे छे अकाज, भवियण ॥१२॥
कोतवाल चल आवियो, लोक करे वहु सोर, भवियण ।
घोटा थी दूर खडो रयो, काई न चाल्यो जोर, भवियण ॥१३॥
कोतवाल पाछो गयो, कह्यो भूप ने जाय, भवियण ।
ढाल पन्नरमी यह हुई 'खूब' कहै दर्शाय, भवियण ॥१४॥

ढाल सौलहवी

(तर्ज — चन्देरी पति सु कहे)

अमरसेन नृप इम कहे, तूं नाम को हुवो कोतवाल, भवियण ।
तिण ने जाय पकड़्यो नही, मैं लाऊ जजीर डाल, भवियण ॥१॥
विछड़िया व्हाला मिल्या ॥टेक॥

भूप उठी चलियो सही, आयो मध्य बाजार, भवियण ।
रोष धरीने आकरो, साथे बहु नर नार, भवियण ॥२॥
दूर से देख्या नैन से, मुझ बधव वीरसेन, भवियण ।
वीरसेन भी ओलख्यो, चित मे पायो चेन, भवियण ॥३॥
तत्क्षण छोडी रासभी, मिल्यो वांह पसार, भवियण ।
हर्ष न मावे अंग मे, देख रया नर नार, भवियण ॥४॥
यो काई लागे भूप के, दुनिया करे वहु बात, भवियण ।
तुरत मंगाई पालखी, बैठा दोनो साथ, भवियण ॥५॥
छत्र चवर होता हुवा, फहराता ऊंचा निशाण, भवियण ।
घर घर हर्ष वधावणा, जाचक पाता दान, भवियण ॥६॥

नजराणे आये बहु, ठौर ठौर अतर पान, भवियण ।
आज भलो दिन उगियो, भाई मिलियो आन, भवियण ॥७॥
इतने वेश्या सब मिली, अर्ज करी कर जोड, भवियण ।
कृपा कर मुझ नाथजी, करो मनुष्यणी इण ठोड, भवियण ॥८॥
अमरसेन की कहैन से, सुघायो दूजो फूल, भवियण ।
रासभी मिट वेश्या बनी, तब करी मजूर सब भूल, भवियण ॥९॥
पावडियाँ गुठली दोनो, तुरत मगाई भूप, भवियण ।
जीवन प्यारो जगत मे, वेश्या दीनी सौंप, भवियण ॥१०॥
पुर मे पसगी वारता, पूरे मन के कोड, भवियण ।
सुख सम्पति अति विलसे, दोनो भाई की जोड, भवियण ॥११॥
अमरसेन नृप एकदा, भाई से करियो विचार, भवियण ।
माता पिता ने बुलावणा, उनका है उपकार, भवियण ॥१२॥
पत्र लिख्यो कर ओपमा, जयसेन राजा का पूत, भवियण ।
पत्र देकर भेजियो, तुरत सिधायो दूत, भवियण ॥१३॥
कपिलपुर आयो चली, पत्र दियो नृप हाथ, भवियण ।
'खूब' कहै ढाल सोलवी, हर्ष थयो नृप गात, भवियण ॥१४॥

ढाल सतरहवी

(तर्ज—जिनन्द माय दीठा हो सुपना सार)

दी बधाई दूत ने जी, विदा किया महिपाल ।
पत्रमे यो लिख दियोजी, आवा सिंगलपुर चाल ॥१॥
चतुर नर सफल हुवा सब काज ॥टेक॥
दूत आयो सिंगलपुरी, पत्र दियो नृप हाथ ।
समाचार जो पिता लिख्याजी, बाच्या पृथ्वीनाथ ॥ २ ॥
शुभ मुहूर्त्त देख्यो खरोजी, जयसेन नामे राय ।
चतुरगी सेन्या सजी जी, मारग जोता जाय ॥ ३ ॥
दिन लाग्या बहु चालता जी, आया सिंगलपुर सीम ।
पुत्र दोनो सन्मुख आविया जी, प्यासो सरवर जीम ॥ ४ ॥
मात पिता से आई मिल्याजी, चरण नमायो शीश ।
आज भलो दिन उगियोजी, पूरी मन की जगीश ॥ ५ ॥
दोनु पुत्र माता पिताजी, [1]वारण हो असवार ।
छत्र चवर होता हुआजी, होता मध्य वजार ॥ ६ ॥

---

१ हाथी ।

राज भवन आईयाजी, मात पिता पुत्र दोय।
पचेन्द्रिय सुख भोगवेजी, मिली पुन्य की सोय ॥ ७ ॥
एक दिन भूपति इम कहेजी, दोनो पुत्र ने भ्रात।
लाल दोष नही माहरोजी, कर्म कमाया तुझ मात ॥ ८ ॥
पुत्र कहै यो तात से जी, भलो दियो मुझ साज।
जो कारण मिलतो नहीजी, कैसे पातो राज ॥ ९ ॥
मात पिता चडाल का जी, भलो हुवो पृथ्वीनाथ।
भलो हुवो पक्षीतणो जी, गुठली दी मध्य रात ॥१०॥
समोसरया तिण अवसरेजी, सुमति सागर अणगार।
वदना कारण निकल्याजी, राजादिक नर नार ॥११॥
मुनिवर दीनी देशनाजी, सब जीवा सुखदाय।
वाणी सुण परिषदा गईजी, अर्ज करे दोनो भाय ॥१२॥
कर जोडी हम वीनवेजी, सुनो हो गरीब निवाज।
संयम लेवा तुम कनेजी, पूछ मात पिता से आज ॥१३॥
मुनिवर कहे जिम सुख होवेजी, करिये नही परमाद ॥
आज्ञा ले पित्तु मात की जी, हुवे दोनो भाई साथ ॥१४॥
मुनि धरम शुद्ध पालनेजी, तपस्या करी भरपूर।
केवल पाया निर्मलोजी, घन घातिक कर्म किया दूर ॥१५॥
महि मंडल मे विचरनेजी, घणो कियो उपकार।
मास सथारो कर मुनीश्वरोजी, पहुंचा मोक्ष मुझार ॥१६॥
उगणीसे पचास के जी, ऊपर छ के साल।
मालव देश मन्दसोर मे जी, चौमासो सुखे गाल ॥१७॥
मुनि नन्दलालजी दीपताजी, गुरुजी महा गुणवन्त।
हुक्म दियो तव शहर मे जी, सुखे रया तीन संत ॥१८॥
'खूब' कहे तुम साभलोजी, ये हुई सतरा ढाल।
सुणे सुणावे प्रेमसे जी, वरते मगल माल ॥१९॥

६८

मनुष्य जन्म की दुर्लभता पर दस दृष्टान्त

(तर्ज —अरणक मुनिवर चाल्या गोचरी)

दस दृष्टाते रे नर भव [1]दोहिलो, ऐसो जिन फरमायो रे।
दस दृष्टाते रे नर भव दोहिलो ॥टेर॥

---

१ दुर्लभ।

कम्पिलपुर मे रे ब्रह्म नरेश नो, चूलणी को अंग जातो रे ।
बारमो चक्री रे राज करे तिहां, ब्रह्मदत्त नाम विख्यातो रे ।। १ ।।
पिता तेहनो रे मुओ उस समैं, ब्रह्मदत्त छोटो सो बालो रे ।
बारी थापी ने चार महिपति, करता राज संभालो रे ।। २ ।।
चूलणी राची रे द्दग नरेश से, पुत्र लख रोष भरायो रे ।
काक मराली रे उनके पास मे, वे नृप को समझायो रे ।। ३ ।।
जाणी जननी ने सुत चाह्यो मारवा, काष्ठ को महल बनायो रे ।
कपट करी ने सुत बधू दोनो को, महल मे सयन करायो रे ।। ४ ।।
निर्दय होई ने आधी रात मे, अगन पलीतो लगायो रे ।
पहिले मन्त्रीश्वर सुरग बनावियो, तिण मे ही कु वर सिधायो रे ।। ५।।
मत्री अपनो रे सुत साथे दियो, अश्व पै आरूढ होई रे ।
कुंवर सिधायो रे दूर देशान्तरे, मिल जुल रेहवे दोई रे ।। ६ ।।
फिरता वन मे रे कष्ट उठावता, एक दिन प्यास सतायो रे ।
व्याकुल देखी ने कोइक विप्र ने, शीतल नीर पिलायो रे ।। ७ ।।
जब मैं होउं कम्पिलपुर-पति, तू आजे मुझ पासो रे ।
जो मुख मागेगा सो तुझे देव सु ं, दीनो वचन हुलासो रे ।। ८ ।।
चक्री हुओ रे कुंवर कालान्तरे, कम्पिलपुर नो वह नाथो रे ।
स्वर्ग सरीखी रे भोगे साहिबी, दस दिश हुओ विख्यातो रे ।। ९ ।।
वचन दियो थो रे वन मे विप्र ने, मुसीबत बकत के मायो रे ।
आश धरी ने रे नरपति पास मे, विप्र तुरन्त चल आयो रे ।।१०।।
महिपति तूठो रे तब तिण मागियो, और न मुझ दरकारो रे ।
तुम घर सेती रे जीमु ं घर घरे, एक एक भेट दीनारो रे ।।११।।
हुकम हुआ से रे जीमे घर घरे, ब्राह्मण मन मे विमासे रे ।
फिर कब जीमूं रे चक्रवरत घरे, एहवो दिन कब आसे रे ।।१२।।
सायत तेतो रे भोजन मिल सके सशय नहीं लिगारो रे ।
मनुष्य जमारो रे हारयो नही मिले, काल अनन्त मझारो रे ।।१३।।

: २ :

चाणक मन्त्री रे थो एक भूप के, भर सोनैया की थालो रे ।
एक एक सोनैयो मेले दाव पै, फिर यह पासो डालो रे ।।१४।।
तीनो वेला रे मानव साभलो, वही जो आवेलो अको रे ।
यह सब मोहरे मैं दूं गा तुम भणी, राजा हो चाहे रको रे ।।१५।।

जो नर आवे वो जाये हारने, कठियारो एक आयो रे ।
दाव लगायो रे ते पिण हारियो, मन मे बहु पछतायो रे ॥१६॥
सायत तेतो रे मोहरे वह मिल सके, सशय नही लिगारो रे ।
मनुष्य जमारो रे हारचो नही मिले, काल अनन्त मझारो रे ॥१७॥

· ३ ·

देवता कोई रे जम्बूद्वीप नो, जौ आदिक सव धानो रे ।
भेलो करने रे सव हिल मिल करे, ढेर करी एक स्थानो रे ॥१८॥
बुढिया मेली रे अस्सी वर्ष नी, करमे सूप सुजानो रे ।
इण भव मांही रे कहो किम कर सके, पृथक्-पृथक् सव धानो रे ॥१६॥
सायत तेतो रे भिन्न-भिन्न कर सके, सशय नही लिगारो रे ।
मनुष्य जमारो रे हारचो नही मिले, काल अनन्त मझारो रे ॥२०॥

. ४ :

कोई नृप के रे सुत अरि हो रहै, रायनी चावे ते घातो रे ।
महिपत जाणी रे सुत सहु तेडिया, राय कहै इम बातो रे ॥२१॥
राज सभा मे है खभे इतने, इक सत ने वली आठो रे ।
खंभे खभे रे धारा जाणजो, अडतालीस और साठो रे ॥२२॥
यह लो पासा रे बेटा हाथ मे, जिण नो आवेला दावो रे ।
नृप पद देऊगा मैं खुद तेहने, निज निज होश बतावो रे ॥२३॥
फिर फिर आवे रे तेहीज आकडो, एक सय आठ वारो रे ।
खम्भे खम्भे रे इम हीज जाणजो, यह है कोल करारो रे ॥२४॥
सायत तेतो रे दाव मीलि सके, संशय नही लिगारो रे ।
मनुष्य जमारो रे हारचो नही मिले, काल अनन्त मझारो रे ॥२५॥

· ५ ·

एक वणिक के रे मेहगा मोलना, रतन घणा घर माही रे ।
दाव जमी मे रे तिण ने उपरे, सोवे पलग विछाई रे ॥२६॥
भेद न देवे रे कोई पुत्र ने, अविश्वास है पूरो रे ।
सब जन वोले रे बिन व्यौपार के, मनुष्य जनम तुम धूरो रे ॥२७॥
कागज आयो रे बांच सगा तणो, चलियो साज सजाई रे ।
जाण भरोसो रे छोटा पुत्र ने, दीना रतन बताई रे ॥२८॥
सुत घर आई ने सब ही भ्रात ने, भेद वताई दीधो रे ।
खोद जमी को रे रतन निकालिया, काम हुआ सहु सीधो रे ॥२६॥

मारग चलतो रे तिण हीज शहर मे, आयो लखि वणजारो रे ।
रतन देई ने रे माल खरीदियो, कीनो हाट पसारो रे ।।३०।।
तात पीछो घर आयो गाव से, रतन तिहा नही पावे रे ।
सुत ने पूछ्यो रे भेद सहु कह्यो, क्षण क्षण ते पछतावे रे ।।३१।।
सायत तेतो रे रतन मिली सके, सशय नही लिगारो रे ।
मनुष्य जमारो रे हारयो नही मिले, काल अनन्त मझारो रे ।।३२।।

: ६ ·

पाटलीपुर नो रे राजा जित शत्रु, तिण नो एक कुमारो रे ।
नित्य द्रव्य हारे रे जुआ खेल मे, लोपी निज कुल कारो रे ।।३३।।
भूपति सुत ने रे पास बुलाय ने, समझावे वहु भातो रे ।
कोमल करडा रे वचन कई कह्या, नही मानी एक बातो रे ।।३४।।
कोपित नृप होय सुत ने काढियो, रोवत तुरन्त सिधायो रे ।
भूखे मरतो रे कष्ट उठावतो, नगर वेनातट आयो रे ।।३५।।
बैठो सोचे रे देवल स्थान मे, पूरब बात चितारी रे ।
वणीमग सूतो रे उनके पास मे, दोनो निद्रा मझारो रे ।।३६।।
सुपनो देख्यो रे मिश्रित नीद मे, निर्मल पूनम चन्दो रे ।
तत्क्षण जागिया दोनो साथ मे, पावे अति आनन्दो रे ।।३७।।
वणीमग बैठो रे निज मन सेती, स्वप्न अरथ इम कीधो रे ।
रोटी मिलसी रे घी मे गचगची, वैसो ही फल लीधो रे ।।३८।।
कुमर सिधायो रे पण्डित ने घरे, पूछ्यो शीश नमाई रे ।
पुन्यवन्त जाणी ने ज्योतिषी ज्ञान मे, निज पुत्री परणाई रे ।।३९।।
खास जवाई रे हुओ तद् पीछे, कह्यो अरथ हुलासो रे ।
सात दिवस मे रे तुम इण नगर नो, निश्चे ही भूपति थासो रे ।।४०।।
भूप अपुत्रियो मरण ते पामियो, इम बोले उमरावो रे ।
गज-गल माला रे डाले तेहने, अपनो नाथ बनावो रे ।।४१।।
सब हा कीधो रे तिण हीज कुमर ने, माला गल बीच ठाई रे ।
बाजा वाजे रे बहु आडम्बरे, दीनो राज बिठाई रे ।।४२।।
वणीमग देखियो ते सुख भूपनो, मन मे तब पछतावे रे ।
मैं पिण पाऊ रे एहवी साहबी, फिर सुपनो कब आवे रे ।।४३।।
सायत तेतो रे सुपनो ले सके, सशय नही लिगारो रे ।
मनुष्य जमारो रे हारचो नही मिले, काल अनन्त मझारो रे ।।४४।।

: ७ :

मथुरा नगरी मे राज करे तिहा, जित शत्रु राजानी रे।
है एक पुत्री रे सुगुणी तेहने, वल्लभ प्राण समानी रे ॥४५॥
प्रेम धरी ने नरवर पूछियो, बाई कहे इण वारो रे।
कहे तो मैं देखि सगपण करू', या स्वयवर धारो रे ॥४६॥
जो मुझ व्याहे रे क्षत्री वशनो, साधे राधावेधो रे।
नही तो रहसु मैं ब्रह्मचारिणी, मुझ मन यही उम्मीदो रे ॥४७॥
लिख लिख भेजी कुम्कुम् पत्रिका, सब राजन सरदारो रे।
स्वयवर मंडप है मुझ बाई नो, कृपा करके पधारो रे ॥४८॥
जो जो राजन आये तेहने, बहु विध कर सन्मानो रे।
बनायो मंडप एक मनोहर, जैसे स्वर्ग विमानो रे ॥४९॥
शुभ दिन मुहूर्त आदि देखने, तेडीया सब राजानो रे।
मडप माही रे मीलिया भूपति, बैठा निज निज स्थानो रे ॥५०॥
मज्जन करने रे कुंवरी महल मे, सजके सब शृगारो रे।
निकली महल से रे सखियाँ साथ मे, बाजीन्तर धुन्कारो रे ॥५१॥
मडप माही रे कुँवरी आय ने, बीच मे स्तम्भ रोपायो रे।
ऊपर स्थापी रे काष्ठ की पुतली बीच मे चक्र चलायो रे ॥५२॥
लोह कढाई रे नीचे ऊकले, तेल भरी भरपूरो रे।
विनय करी ने रे कुवरी विनवे, है कोई राजन सूरो रे ॥५३॥
रजमो धारी ने आवे ऊठने, तेल मे नजर लगावो रे।
वाण चलावो रे भेदी चक्र ने, ते पुतली तक जावे रे ॥५४॥
फिर पुतली के रे बाया नेत्र ने, बीन्दे जे नर कोई रे।
जननी जायो रे जग मे सूरमो, व्याहेगा मुझे वोही रे ॥५५॥
जे जे आवे रे भूपति देखने, मान करी स्वयमेवो रे।
ते विंध करने रे सर सधि रह्या, डाव मिले नही एहवो रे ॥५६॥
सायत ते तो रे डाव मिल सके सगय नही लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे हारचो नही मिले, काल अनन्त मझारो ॥५७॥

: ८ :

कोइक द्रह मे रे कच्छ मच्छ है घणा, निर्मल भर्यो है नीरो रे।
पट्ट अष्ट छाया रे हरित सेवालना, चौकोना सम तीरो रे ॥५८॥
तरु फल तूटी रे द्रह भीतर पड्यो, छिद्र हुवो तिण वारो रे।
कछुओ निकल्यो रे देख्यो चन्द्रमा, विस्मय पायो अपारो रे ॥५९॥

कछुओ पहुँच्यो रे कही निज कुटुम्ब् ने, चरित्र बतावण लावे रे।
आयो जितने रे वह छिद्र ढक गयो, चन्द्र दरश कब पावे रे ॥६०॥
सायत तेतो रे दरशन मिल सके, सशय नही लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे, हारचो नही मिले, काल अनन्त मझारो रे ॥६१॥

: ६ :

सुवर्ण स्तंभो रतन जडाव को, कोई सुर खंड खंड कीधो रे।
चूरण करी ने मेरु गिरी सेती, सर्व उडाई ते दीधो रे ॥६२॥
ते परमाणु रे सब भेला करे, फर्क रखे कछु नाही रे।
मुश्किल एहवो रे जग मे मानवी, देवे स्थभ बनाई रे ॥६३॥
सायत तेतो स्थंभ बनी सके, सशय नही लिगारो रे।
मनुष्य जमारो रे हारचो नही मिले, काल अनन्त मझारो रे ॥६४॥

: १० :

पृथ्वी पाणी रे तेउ वायु मे, बसियो काल असंखो रे।
काल अनन्तो रे तरुगण मे रयो, शास्त्र वचन निसखो रे ॥६५॥
एक एक लोक प्रदेश के ऊपर, अनन्त अनन्त भव कीधा रे।
परवस प्राणी रे जनम मरण किया, विश्व सहु भर दीधा रे ॥६६॥
अशुभ कर्म गये शुद्ध हुई आतमा, जोग भलो वरतायो रे।
भद्र आदि यह शुभ गुण सेविया, मनुष्य जनम जब पायो रे ॥६७॥
नित्य गुरु मुख से रे शास्त्र साभलो, श्रद्धा शुद्ध आराधो रे।
प्राक्रम करजो रे सयम धर्म मे, यह शुभ अवसर लाधो रे ॥६८॥
कोइक मोटो रे नगर सुहामणो, तिण ने एक ही द्वारो रे।
कोपित सुर होई अग्नि लगायदी, जनता निकसे है वहारो रे ॥६९॥
वणीमग अधो रे फिरतो शहर मे, ते बोल्यो तत्कारो रे।
प्रथम निकालो रे मुजने वाहिरे, जाणी पर-उपकारो रे ॥ ७०॥
एक दयालु रे नगर दीवार के, दीनो हाथ लगाई रे।
इणरे सहारे तू जा निकलजे, तिण दरवाजा के माई रे ॥७१॥
वणीमग चाल्यो रे द्वार ते आवियो, तत्क्षण छोडी दीवारो रे।
खाज को खणतो रे आगे निकल्यो, फिर कब आवे ते द्वारो रे ॥७२॥
नगर सरीखो रे यह ससार है, जन्म मरण की है आगो रे।
मनुष्य जमारो रे द्वार है मोक्ष नो, इम भाख्यो वीतरागो रे ॥७३॥

जग सहु जाणो रे स्वार्थ नो सगो, उपकारी शुद्ध साधो रे।
दुख से डरने सेवो धर्म ने, मत करज्यो परमादो रे ।।७४।
जो हलु कर्मी रे चाहु मोक्षना, सुण जो ध्यान लगाई रे।
सांचो शरणो रे लीज्यो धर्म नो, भव भव मे सुखदाई रे ।।७५।।
श्री जिन आगम उत्तराध्येन मे, तीजा अध्ययन मझारो रे।
देख कथा से रे यह कविता करी, अल्प बुद्धि अनुसारो रे ।।७६।।
शास्त्रवेत्तारे गुरु नन्दलालजी, है स्थविर भगवन्तो रे।
परम दयालु रे दाता बोधना, रवि जिम तेज दिपन्तो रे ।।७७।।
संवत दससो रे नवसो उपरे, साल सततर सातो रे (१६८४)।
रचना कीनी रे खूब मुनि जावरे, मालव देस विख्यातो रे ।।७८।।
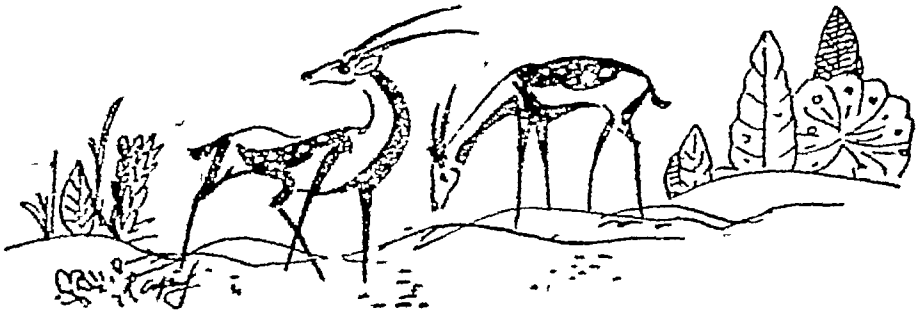
४

विविध विषय

१ :

दोहा

अरिहन्त सिद्ध आचार्यजी, उपाध्याय अणगार।
'खूब' कहे सुमरो सदा, हो जावो भव पार ।। १ ।।
'खूब' गुरु उपदेश से, हो अज्ञान का नाश।
रहे अधेरा जिम नही, सविता[1] केर प्रकाश ।। २ ।।
सत्य शील निर्लोभता, दया क्षमा भरपूर।
'खूब' कहे उस सन्त की, सेवा करो जरूर ।। ३ ।।
गुरु वैद्य माता पिता, और भूप के पास।
'खूब' कहे पूछे तभी, दीजे साफ प्रकाश ।। ४ ।।
शूर पुरुष देखे नही, सकुन योग तिथि वार।
'खूब' सदा ही निडरता, ताकू कहा विचार ।। ५ ।।
सिर मुण्डाय साधु हुवे, काम दाम तज धाम।
'खूब' कहे उस सत को, कहा दाम से काम ।। ६ ।।
साधु सेठ और वैद्य के, अवश्य [2]मुलामी होय।
'खूब' कहे इन तीन की, शोभा करे सब कोय ।। ७ ।।
दुनिया मे दाता घणा, आशा हित दे दान।
'खूब' मोक्ष के हेत दे, वे विरला नर जान ।। ८ ।।
खूब साज दीयो वक्त पै, आखिर अपनो जान।
नुगरो ते गुण भूल के, निकल्यो डास समान ।। ९ ।।
'खूब' दान चौडे करे, अपनी महिमा काज।
टुकडा भी देवे नही, द्वार खड़ा मोहताज ।।१०।।
दुखी वियोगी वावरो, क्रोधी शठ इन्सान।
'खूब' बोलता पाच को, रहे नही कुछ भान ।।११।।
पक्ष नही पैसो नही, खाली जणावे जोर।
'खूव' कहै वो मानवी, सीग पूछ विन ढोर ।।१२।।
उद्यम कबहु न छोड़िये, यद्यपि कष्ट पडत।
'खूब' कहे उद्यम किया, कीडी शिखर चढंत ।।१३।।

---

१ सूरज, २ नरमाई।

पर उपकारी ना हुवो, वडो होय जग माय।
'खूब' कहे किस काम का, जैसे तरु बिन छाय ॥१४॥
'खूब' कभी ना कीजिए, [१]लापर वचन प्रमान।
जहा नीर भरियो कहै, मिले न कीच निशान ॥१५॥
माता से लडतो रहे, परणी को करे पक्ष।
'खूब' कहे वा पुरुष को, कोई कहे न दक्ष ॥१६॥
आम वृक्ष को छोड़ के, जाय एरण्ड के पास।
'खूब' कहे वा पुरुप की, कैसे सफल हो आस ॥१७॥
'खूब' वस्तु जैसी हुवे, वैसी श्रद्धे कोय।
मुह से भी वैसी कहे, जे समदृष्टि होय ॥१८॥
यौवन भाषा जो समय, वहता पानी जाय।
'खूब' कहै ये चार ही, मुड कर आवे नाय ॥१९॥
भाई भाई के देखिया, जहाँ तहाँ कुसम्प।
'खूब' कहे कोइक जगह सायत होगा सम्प ॥२०॥
कवि वैद्य तपसी मुनि, [२]भेदु भूप [३]भटियार।
'खूब' कहे इन सात से, नही करना तकरार ॥२१॥
वैद्य और राजा मुनि, मुखिया पंच कहाय।
ये चारो [४]जूना भला, 'खूब' कहे समभाय ॥२२॥
मूर्ख वैद्य लोभी गुरु, न्यायहीन सरकार।
'खूब' कहे इन तीन से, कभी न होय सुधार। २३॥
मू जी धन कण कीडिया, संचय कर मर जाय।
'खूब' कहे दोनो कभी, नही खरचे नही खाय ॥२४॥
पापी जन की जगत मे, 'खूब' कहे पहिचान।
दया दान भक्ति नही, अगे अति अभिमान ॥२५॥
'खूब' कहै पुन्यवान की, जग मे यह पहिचान।
दया दान भक्ति वसे, अगे र्नाह अभिमान ॥२६॥
मेघ मुनि नृप देवता, दाता होय दयाल।
'खूब' मुदित पाचो हुवे, छिन मे करे निहाल ॥२७॥
पाप [५]थकी पीछो रहे, धर्म मांह अगवान।
'खूब' कहे वह मानवी, सद्गति का महमान ॥२८॥

---

१ लापर-झूठ वोलने वाला। २ गुप्त वात जानने वाला। ३ रसोइया।
४ पुराने, वृद्ध। ५ से।

धर्म थकी पीछो रहे, पाप माहि अगवान ।
'खूब' कहे वह मानवी, दुर्गति का महमान ॥२९॥

लज्जा को गिरवे धरी, लोपी कुल की कार ।
'खूब' कहे मोटा थई, डोले सरे बाजार ॥३०॥

सुनी बात माने सही, निर्णय काढे नाय ।
'खूब' कहे या जगत मे, लोग भेड [1]परवाय ॥३१॥

हाकिम रिस्वत खात है, साधु सत्य के बहार ।
'खूब' कहे कानून से, दोनों ही गुन्हेगार ॥३२॥

ओछा नर के साथ मे, लट पट होना नाय ।
[2]ढब से काम निकालनो, 'खूब' कहे समझाय ।३३॥

सुसरा की लज्जा करे, पितु ने देवे गाल ।
कलियुग आता देखिया, ऐसे [3]निवडे बाल ॥३४॥

बालक [4]बेंडो बान्दरो, राजा श्वान भुजंग ।
'खूब' कहे इन छहो को, अति भलो नही सग ॥३५॥

'खूब' कैंची दो दो करे, ते धरती टकराय ।
सुई करावे एकता, चढे शीश पर जाय ॥३६॥

'खूब' पाय सुख सम्पदा, तज दीजे अभिमान ।
सदा वक्त नही एक सा, मान मान नर मान ॥३७॥

हो तो गुणी के गुण करो, अवगुण तज दो यार ।
'खूब' नही तो चुप रहो, यही समझ को सार ॥३८॥

ऊग्यो टुग्यो गिर पड्यो, चोर जुंआरी पांच ।
'खूब' पूछता तुरत ही, कभी न बोले साच ॥३९॥

'खूब' कहे साधु सती, बिन टाइम बिन काम ।
फिरे डोलता घर घरे, क्यो न होय बदनाम ॥४०॥

एक इन्द्रिय के वश पडे, प्राण तजे तत्काल ।
'खूब' पाच के वश पडे, उनका कौन हवाल ॥४१॥

'खूब' कहे जो मानवी, कर्म किया अति नीच ।
लोग बतावे आँगुली, धिग् जीव्यो जग बीच ॥४२॥

---

१ प्रवाह । २ तरकीब से । ३ हुए । ४ पागल ।

'खूब' ऊँच के सग से, बधे तेज परताप ।
नीचे की संगत किया, उल्टी जावे आब ।।४३।।

'खूब' देख पर-सम्पदा, दुष्ट भाव मत लाय ।
जो जैसी करणी करे, वैसा ही फल पाय ।।४४।।

स्वारथ को संसार है, विन स्वारथ नही कोय ।
ज्यो पण्डित की पत्रिका, वर्ष लग आदर होय ।।४५।।

तन बुद्धि मुंह प्रकृति, अरु भाषा भाग्य विचार ।
'खूब' कहै सब मनुष्य मे, मिले नही इक सार ।।४६।।

अधो वाय खांसी हसी, छीक उवासी डकार ।
'खूब' कहै सब मनुष्य मे, मिलती है इकसार ।।४७।।

'खूब' मीन सज्जन मुनि, ना किसको कुछ केत ।
तांको विन अपराध ही, दुर्जन जन दुख देत ।।४८।।

'खूब' योग्य नर जाण के, शरण लहै कोई आय ।
आप निभावे जन्म भर, पिछले को कह जाय ।।४९।।

नारी नारी एक है, सकल जगत भरपूर ।
भगनी भार्या सोच कर, चतुर पुरुष रहै दूर ।।५०।।

'खूव' पात्र अन्न वस्त्र के, पग ठोकर दे जेय ।
मैं तो वडो के मुंह सुनी, अशुभ जानजे ऐय ।।५१।।

मिष्ट बोल कर जो लहै, हर्षित खूब अपार ।
जब वो आवे मागवा, लडवा हो तैयार ।।५२।।

विना काम विन पूंछिया, रे मानव मत बोल ।
'खूव' मौन कर रीजिये, तजिए हसी कितोल ।।५३।।

'खूब' देख कुछ जाति का, कर लेते उनमान ।
अब तो हुवे बहु रुपीया, होती नही पहिचान ।।५४।।

भाषण देवे जोश का, मिस्टर बाबू सहाब ।
'खूव' लोग माने नही, उनके ढंग खराब ।।५५।।

'खूव' पेट मे कपट है, दीखत के नर नेक ।
नारंगी फल सारिखा, भीतर फाक अनेक ।।५६।।

'खूव' तुरत समझे सभी, ते खरबूज समान ।
दीखत फाक अनेक है, भीतर एक ही जान ।।५७।।

'खूब' मान जग मे बुरो, मान वहा अपमान ।
न्याय [1]दशारण भूप को, लीजो समझ सुजान ॥५८॥
मास्टर दुर्व्यसनी हुवे, उनकी संगति माय ।
बिगड़े क्यो न विद्यार्थी, 'खूब' कहै समझाय ॥५९॥
दो विभाग एक खेत के, बोयो बीज दोई वीर ।
'खूब' साख का निपजना, है अपनी तगदीर ॥६०॥
'खूब' बात देखी सुनी, कहन योग नहि होय ।
राखी पूर्ण गम्भीरता, प्रकट करो मत कोय ॥६१॥
चूक देख शिक्षा करे, कठिन शब्द मे कोय ।
'खूब' कहै हित मानिये, आगे पर गुण होय ॥६२॥
सेवा तपस्या सरलता, सूत्र - पठन वैराग ।
इन बातो पै अब कहा, 'खूब' पूर्ण अनुराग ॥६३॥
'खूब' बड़ो की प्रेम से, करो सेव नर कोय ।
गुणी बने ज्ञानी बने, सर्व कार्य सिद्ध होय ॥६४॥
मेवाड का मानी घणा, अधिक मान को धीग ।
जोखम मोखम जीमणो, बडो हुकम ने सीग ॥६५॥
चितहरणी घरणी मिली, भृत्यक चतुरङ्ग सेन ।
राजविभव सुत मित्र है, जब लग खुले दो नैन ॥६६॥
सुसरा के घर नित को रेणो, माग परायो पहिरे गेणो ।
छतो पईसो राखे देणो, इन तीनो को मूरख केणो ॥६७॥
खुशी मनाई राख्यो बेटो, थोडा दिना मे माड्यो खेटो ।
घर को फूट फजीतो कीदो, बेची नीद ओजको लीदो ॥६८॥
जोडी प्रीत पेट मे आँट्या, भेरा खाय गोट मे बाट्यॉ ।
निर्लज होय लडे ज्यो हाट्या, दे धिक्कार पडोसी डाट्या ॥६९॥
घणी दवा से बिगडे तन्त्र, परधन देखी बिगडे मन्त्र ।
बिना भावतो खावे अन्न, ये तीनो ही मूरख जन्न ॥७०॥

---

१ दशार्ण राजा—तीर्थंकर भगवान महावीर के आगमन पर राजा दशार्णभद्र ने बहुत तैयारियाँ की। अपनी समस्त सेना सुन्दर ढग से सजाई। सम्पूर्ण वैभव के साथ वह दर्शनार्थ चला। मगर उसे अभिमान आगया कि आज तक किसी भी राजा ने ऐसी तैयारी नही की होगी, जैसी मैंने की है। इन्द्र ने राजा के इस अभिमान को दूर करने के लिए उसकी अपेक्षा और अधिक वैभव प्रदर्शित किया। इन्द्र के वैभव के सामने राजा का वैभव फीका पड गया।

गली बीच की तीन लाख, बारह लाख बजार की ।
चुगलखोर के मुँह ऊपर, पन्द्रह लाख पेजार की ॥७१॥

आँधा लूला लँगड़ा परणे, धोला चमके केसा मे ।
'खूब' कहे बहिरा भी परणे, करामात है पैसा मे ॥७२॥

घणाँ पटेला बिगडे गाम, घणाँ भोपां से उठे धाम ।
चडया कचेरी खूट्या दाम, पूत कपूता उठ्यो नाम ॥७३॥

बिना काम को परघर जाणो, बिना भूख को भोजन खाणो ।
विना अवसर को गायन गाणो, विना लाभ को खर्च वढाणो ॥
इन चारो को मूरख जाणो ॥७४॥

नीची नजर मयूर सी वोली, कर मे रहे सुमरणी ।
बाहिर सत सरीखा दर्शे, भीतर बहे कतरणी ॥
खूब मुनि कहे जो नर ऐसा, उनसे बचते रहो हमेशा ॥७५॥

कोई ऊंघे कोई पोथी पढे, बात करे धन धाम की ।
कोई चित चंचल दूरा बैठा, कोई माला फेरे प्रभु नाम की ॥
'खूब' कहे ऐवा श्रोता के सामने, कथा करी कही काम की ॥७६॥

पहेलियां

प्रश्न—एक ऋषि डडे पर डटा, खूब शीश पर लम्बी जटा ।
नीलाम्बरी माला नही फेरे, वृद्ध होय जब धोला पहिरे ॥१॥
उ० भुट्टा

प्र० लम्ब पयोधर पतली काय, उगो कमल नाभि के माय ।
खून मास तन ऊपर नाय, खूब नशा चौडे दरशाय ॥२॥
उ० तराजू (तकडी)

प्र० पांव विना डुँगर चढे, बिना मुखे खज खाय
खूव पसरे वायु लगे, जल पाया मर जाय ॥३॥
उ० अग्नि (आग)

प्र० पय पाया पीवे घणो, जरे नही उर माय ।
नर पूठे सूती रहे, खूव बिछात विछाय ॥४॥
उ० मशक

प्र० खूव नार पग पांच की, तीन नेत्र से भाले ।
एक पांव ऊचो रखे, चार पाव से चाले ॥५॥
उ० मोटर

प्र० पाप कर्म करते "रहो", जो सुख चाहो सेण ।
'खूब' कहे मानो सही, ये सत गुरु के वेण ।।६।।
उ० ठहरो

प्र० सुता मात सासू बहू, ननंद भोजाइ आय ।
खूब कहे छे पूडिया, कितनी कितनो खाय ।।७।।
उ० २-२ माता, बहु, बेटी, ये तीन थी

प्र० पिता पुत्र सालो बहनोई, मामो भाणेज और नही कोई ।
खूब कहे नव घेवर लाये, कितने कितने सबने खाये ।।८।।
उ० ३-३-पिता, पुत्र, साला, तीन थे

प्र० रहे पयोधर लटकता, पतलो तास शरीर ।
खूब उठाया नर फिरे, के घर के जल तीर ।।९।।
उ० कावड

प्र० वन मे देखी 'कोकिला', थे शिर, पर, दो पाय ।
खूब कहे मानो सही, इण मे सशय नाय ।।१०।।
उ० पदच्छेद करके पढो

प्र० नो से "कागज" लावजो, भूपति आज्ञा दीन ।
खूब कहे एक पाद के, अर्थ होत हैं तीन ।।११।।
उ० कागज, गजलावजो, कागजलावजो

प्र० जो मिलिया सो दोय मे, एक मे मिले न कोय ।
जो एक मे जा मिले, दो मे मिले न कोय ।।
उ० जंगम, स्थावर-सिद्ध मे,

कुछ तुक्के

रास्ता को आम १ फायदा को काम २ ।
जागीरी को गाम ३ घर बैंडा दाम ४ मुफ्त मे नाम ५ ।।१।।
खर लडे लाता से १ मूर्ख लड हाथा से २ ।
पण्डित लडे बाता से ३ श्वान लडे दाता से ४ ।।२।।
मिलणो वीरा को १ व्यापार हीरा को २ ।
जीमणो सीरा को ३ बगार जीरा को ४ ।।३।।
एको नायाँ को १ वैर भायाँ को २ ।
गाणो बायाँ को ३, दूध गायाँ को ४ ।।४।।

भोजन मे राड १ रास्ता मे खाड़ २ नदी मे झाड ३ ।।५।।

किमाड की कील १ जंगल मे भील २ ।
आकाश मे चील ३ राज मे वकील ४ ।।६।।

बैल बिना गाडी १ लाड़े बिना लाड़ी २ ।
फूल विना वाडी ३ जगल विना झाड़ी ४
रग विना साडी ५ भैंस विना पाड़ी ६ ।।७।।

सोना सेजो का १ बैठना मेजो का २ मरना हेजो का ३ ।।८।।

कर्मों के लिहाज नही १ नागा के लाज नही २ ।
रक के राज नही ३ मन के पाज नही ४ ।।९।।

कुबद कांणा की १ समझ स्याणा की १ करामात नाणा की ३ ।।१०।।

राड हाट्याँ की १ गोट वाट्याँ की २ लडाई लाट्याँ की ३ ।।११।।

गद्धा के ज्ञान नही १ दातरा के म्यान नही २ बेडां के शान नही ३।।१२।।

सभा सोहे राजा से १ व्याह सोहे वाजा से २ महल सोहे छाजा से ३।।१३।।

जल मे कभी न लागे आग १ आग मे कभी न लागे बाग २
गूँगो कभी न गावे राग ३ धोया उज्ज्वल होवे न काग ४
ऐता होय तो मोटा भाग ५ ।।१४।।

हाकमी गर्म की १ साहूकारी भर्म की २ वहू वेटी शर्म की ३
दुकानदारी नर्म की ४ ।।१५।।

गाडी को भय टुट्टण को १ काया को भय कुट्टण को २ माया को भय लुट्टण को ३ बुड्ढा को भय उट्ठण को ४ साधु को भय झुँठण को ५।।१६।।

करजे लडाई तो बोलजे आडो १ करजे खेती तो राखजे गाडो २
राखजे भैंस तो बान्धजे वाडो ३ ।।१७।।

ताण मे टेकी १ धर्म में द्वेषी २ जोबन मे शेखी ३ ।।१८।।

पच राणा १ पंच स्याणा २ पच काणा ३
पच धूल खाणा ४ पच खेंचा ताणा ५ ।।१९।।

देवाणं मसाण १ सेठाण गथाण २ राजाण हुकमाण ३
गोलाण गप्पाणं ४ ।।२०।।

करे सो भरे १ फूटा सो झरे २ झूठा सो डरे ३ पाका सो खरे ४
जन्मे सो मरे ५ ।।२१।।

कुत्ता बिना गाम कहा १ गुण विना नाम कहा २
पाणी बिना कूप कहा ३ न्याय बिना भूप कहा ४ ॥२२॥

आवाज आन्धा की १ मरोड बान्दा की २ लडाई चादां की ३
वास कादा की ४ हाय मादा की ५ ॥२३॥

झूंठ १ फूट १ लूट ३ माथा कूट ४ ॥२४॥

अरिहन्त स्तुति

— कवित्त —

पहले पद अर्हन्त, चारो कर्म किया अन्त,
लिया है मुगति पंथ, केवल के धारी है।
चौतीस [1]अतिशै पुन, मोटा है द्वादश गुण,
तीन लोक मांही प्रभु कीरति पसारी है॥
अनत बली है जाके, नही है गुणाँ को पार,
सूत्र विस्तार प्रभु घोर ब्रह्मचारी है।
'खूबचन्द' कहै कर जोड के नमाऊ शीश,
ऐसे अरिहन्त ताको वन्दना हमारी है॥ १॥

सिद्ध स्तुति

दूजे पद सिरी सिद्ध हुआ है पन्दरा भेद,
मैंने भी उम्मीद तोरे दर्शनो की धारी है।
आठो ही करम ठेल, पाया है मुगति महल,
अनंत सुखो की टहल, जान रह्या सारी है॥
रग रूप कर्म काया, मोह ने ममत माया,
दु ख ने दरिद्र रोग सोग सेन्या टारी है।
'खूबचन्द' कहै कर जोड के नमाऊं शीश,
ऐसे सिद्ध राज ताको वन्दना हमारी है॥ २॥

आचार्य स्तुति

आचारज तीजे पद, छाड दिया आठ मद,
करत करम रद, बहु गुणधारी है।

---

१ विशिष्टताए।

छत्तीस गुण सोहन्त, शरीर स्वरूप कन्त,
सघ में सोहन्त, तेतो पर उपकारी है ॥
छः काया के प्रतिपाल, ऐसा है दयाल,
जिन वचन रसाल, जामे चित रम्यो भारी है ।
'खूबचन्द' कहे कर जोड़ के नमाऊं शीश,
ऐसे आचारज ताको वन्दना हमारी है ॥ ३ ॥

उपाध्याय स्तुति

चौथे पद उवज्झाय, पच्चीस गुणा के वाय
नमूं नित पाय, जाने प्रगन्या पसारी है ।
चवदा पूरव अंग, इग्यारह उपांग वारह,
भणे ते भणावे आप ऐसा उपकारी है ॥
रुचि है नगन, ज्ञान ध्यान मे मगन,
शिवपुर की लगन, लग रही अति भारी है ।
'खूबचन्द' कहे कर जोड के नमाऊं शीश,
ऐसे उपाध्याय, ताको वन्दना हमारी है ॥ ४ ॥

साधु स्तुति

सुन के जिनन्द वाणी, अन्तर वैराग्य आणी,
संसार अनित्य जाणी, हुआ व्रतधारी है ।
गुण हैं अठारे नव, वोलत मधुर रव,
सुधारे मनुष्य भव, सुमति विचारी है ॥
दिपावे श्री जिन धर्म, तोडे आठो कर्म,
पद पावे है परम, सदा जांकी वलिहारी है ।
'खूबचन्द' कहे कर जोड के नमाऊं शीप,
ऐसे मुनिराज ताको, वन्दना हमारी है ॥ ५ ॥

परमेष्ठी गुण

अरिहन्त देवजी विराजमान वारे गुण,
सिद्धजी विराजमान अष्ट गुणधारी है ।
आचारज दो अठारह[1] गुणो से विराजमान,
दश आठ सात[2] से उपाध्याय शुद्धाचारी है ॥

---

१ छतीस । २ दस, आठ, सात अर्थात् पच्चीस ।

सत्ताविश गुणां करी साधुजी विराजमान,
मोक्ष अभिलाषी जग जाल को निवारी है।
'खूबचन्द्र' कहे कर जोड़ के नमाऊँ शीष,
ऐसे पाँचो पद ताको वन्दना हमारी है ॥ ६ ॥

गुरु प्रशंसा

राजा जो प्रसन्न होय गामादि बखशीश करे,
सेठजी प्रसन्न होय नौकरी बढाय दे।
मा पितु प्रसन्न होय बतावे गुपत वित्त,
पति जो प्रसन्न होय जेवर घडाय दे ॥
देवता प्रसन्न होय पुत्र और धन देत,
उस्ताद प्रसन्न होय इलम पढाय दे।
'खूबचन्द' कहे गुरु देव जो प्रसन्न होय,
जनम मरण भव दु:ख से छुड़ाय दे ॥ ७ ॥

गुरु की अप्रसन्नता

राजा जो कुपित होय फाँसी शूली कैद करे,
सेठजी कुपित होय घर से निकास दे।
मा पितु कुपित होय धन से निराश करे,
पति जो कुपित होय मार ताड त्रास दे ॥
देवता कुपित होय पुत्र जोरु धन हरे,
शिक्षक कुपित होय पद बदमाश दे।
'खूबचन्द' कहे गुरुदेव जो कुपित होय,
आग नाग वाघ जैसे छिन मे विनाश दे ॥ ८ ॥

गुण बिना नाम

नाम तो शीतलदास छेड्या सेती क्रोध करे,
नैनचन्द नाम पण जनम को अन्ध है।
दयाचन्द नाम दिल दया की रहस्य नाही,
ज्ञानचन्द नाम नित करे खोटा धन्ध है ॥
नाम तो अमरचन्द जीव्यो है अलप काल,
सदासुख नाम पण दु:ख को सम्बन्ध है।

'खूबचन्द' कहे अणी दृष्टात सुजान नर,
गुण बिना नाम जैसे श्वान पै सुगन्ध है ।। ६ ।।
नाम तो लक्ष्मीवाई छाणा विणे वन मांही,
रूपावाई नाम रूप काग से सवायो है ।
दयावाई नाम पण जूआ लीखा मारे नित
स्यांणीवाई नाम जन्म राड मे गँवायो है ।।
नाम तो जडाववाई तांवे को न तार पास,
राजीवाई नाम राखे थोवडो चढायो है ।
'खूबचन्द' कहे ऐसे गुण बिना नाम जैसे,
मोतियो का हार मानो भैस ने पहिनायो है ।।१०।।

रुचि बिना

रुचि बिना ज्ञान ध्यान रुचि बिना दान मान,
रुचि बिना खान पान कैसे वण आवे रे ।
रुचि बिना दया सत्य शील ने सन्तोष वलि,
रुचि बिना वणज व्योपार नही थावे रे ।
रुचि बिना जप तप रुचि बिना करे खप,
रुचि बिना धर्म कथा कान न सुहावे रे ।
'खूबचन्द' कहे [1]अणी दृष्टात सुजान नर,
अन्तस की रुचि हुवे फेर काई चावे रे ।।११।।

पाप को घड़ो

सेर की हाडी मे मूढ दो सेर घालन लागो,
ज्ञानी कहे देख भाई एतो न समायगो ।
दो दिन को प्यासो भूखो नीठकर मिली तोकू,
भूख तो घणी छे ऐती खीचडी न खायगो ।।
मूरख न मानी साच लगाई अगनी आंच,
ढकण ढक्यो छे पण पीछे पछतायगो ।
'खूबचन्द' कहे अणी दृष्टांत सुजान नर,
पाप को घडो तो कोई दिन फूट जायगो ।।१२।।

---

१ इस ।

लालची कुत्ता

श्वान एक अति भूखो, जाको वासी लूखो सूको,
नीठकर मिल्यो टूको, मूढ नही खावे रे।
मुँह मे लेइने[1] हाल्यो, नदी के किनारे चाल्यो,
आपको आकर जल माही दरशवे रे ॥
दूसरो रोटी को टूको, जाणी ने लेवण [2]ढूको,
मूल ही को खोयो, पीछो नजर न आवे रे।
'खूबचन्द' कहे अणी दृष्टात सुजान नर।
लालच करे सो निज गाठ को गमावे रे ॥१३॥

बिल्लियों का न्याय

दो विल्ली को एक रोटी, मिली तव सलाह घोटी,
वन्दर के पास जाय, हिसाब करावे रे।
छोटा मोटा टूक करी, तराजू के माही धरी,
नमे जिसे कपि रोटी, ज्यादा तोडी खावे रे ॥
सूपो थें तो रोटी म्हारी, न्याय न करावा मैं तो,
कपि सव खा गयो तब विल्ल्या पछतावे रे।
'खूबचन्द' कहे अणी दृष्टात सुजान नर,
कपटी के पास जाय न्याय क्यो करावे रे ॥१४॥

बन्दर की मूर्खता

तरखान नदी के तीर, लक्कड रह्यो तो चीर,
अधूरो छोडी ने फादो घाली घर आयो है।
इतने तुरत तिहा वन्दर आई ने बैठो,
दोनो चीर वीच निज पूछ ने फसायो है ॥
चचल स्वभावी फादो, पकड हिलायो तब,
निकल गयो छे माही पूछ पकडायो है।
'खूबचन्द' कहै अणी, दृष्टान्त सुजान नर,
परको विगाड्यो काज ते ही दुख पायो है ॥१५॥

---

१ रवाना हुआ। २ चला।

भेड़ का न्याय

मीठी दाख तणी वेल, ऊंची गई जमी को ठेल,
तरु पै रही थी फैल, तिहां वन मांही रे।
भेडा चरे चार कोडी, तिण मे से एक मोडी,
हौंस कर दौड़ी पण मुंह पूगो नांही रे॥
मोडी पीछी फिरी [1]तद्द, दूजी भेड्या पूछो [2]जद्द,
मुह को विगाड वेल, कडवी वताई रे।
'खूबचन्द' कहै इतो स्वारथ न पूगे जब,
अवगुण वतावे मूढ गुणीजन माई रे॥१६॥

बया और बन्दर का न्याय

वियो कहै वन्दर [3]भणी, मौसम वरसात तणी,
उद्यम करे नी मूढ, वैठो रेवे कांई रे।
मानुष सी देह थांरे, दुख मे क्यो दिन गारे,
[4]रेवण के काज घर लेवे नी वणाई रे॥
हितकारी देता सीख, क्रोध मे हुओ अधिक,
वन्दर वियो को घर, तोड नाख्यो आई रे।
'खूबचन्द' कहै अणी दृष्टात सुजान नर,
ऐसे मूढ जन ताको सीख दीजे नांई रे॥१७॥

काग हंस का न्याय

काग हस अष्ट पहेर, दोनो जणा रहे लेर,
कागलो कुबुद्धि लायो हस ने उडाय रे।
नृप घवराय वन मांही सूतो तरु छॉह,
तेहनी डाल उपर वैठा दोनो आय रे॥
काग हड्डी लायो ऊठ, मु ह थकी गई छूट
भूपति पै गिरि काग भागी दूर जाय रे।
'खूबचन्द' कहै ऐती नीच की सगति सेती,
नृप मार्‌यो वाण दियो हस ने पोढाय रे॥१८॥

---

१ तव। २ जव। ३ मे। ४ रहने।

काग तोते का न्याय

काग सुवा दोनो मिल बाग माही रहे नित,
फल फूल खावे तिहा माने अति सुख रे।
काग कहै सुण सुवा अठे घणा दिन हुआ,
चालो म्हारे वन बिला खाया भागे भूख रे ॥
लारे आयो सुवो बिला देखी ने चकित हुओ,
खाता भागी चोच तब करे अति कूक रे।
'खूबचन्द' कहै अणी दृष्टात सुजान नर,
मूढ की सगत मत कीजे भूल चूक रे ॥१६॥

रंक का न्याय

रक एक वन माही सूतो तब नीद आई,
सुपना मे हुओ जैसे पृथिवी को नाथ रे।
छतर धरावे शीश उमराव सोला वत्तीस,
खमा खमा करे केई जोडी दोनो हाथ रे ॥
याचका ने देवे दान घुरे है निशान वलि,
रतन सिहासन बैठो हुकम चलात रे।
'खूबचन्द' कहै अणी दृष्टात सुजान नर,
सुपना सी सम्पति मे क्यो राचे दिनरात रे ॥२०॥

बजाज का न्याय

लाभोजी बजाज, परदेश मे कमावा काज,
चाल्यो कर मिजाज, त्रिया कहे झट आवजो।
कमाई हुवा से म्हारे, बीदी बीछ्या बाजू झेला,
हार माला नथ चूप घडाई ने लावजो ॥
ओढन के काज एक, लावजो रेशमी चीर,
नव ही रकम आप भूल मत जावजो।
'खूबचन्द' नारी धुतारी यू बोली नाही,
आगरा को पेचो एक थांके लेता आवजो ॥२१॥

सप्त व्यसन का न्याय

प्रथम व्यसन सतगुरु की करीजे सेव,
दूजो यो व्यसन जीव दया नित्त कीजिये।
तीजो यो व्यसन सत्य वचन धारण कर,
चोथो यो व्यसन तू शील मे दृढ रीजिये ॥
पाचमो व्यसन नित्य नियम धारण कर,
छटो यो व्यसन तू सुपात्र दान दीजिये।
सातमो व्यसन मन सन्तोष धारण कर,
'खूब' मुनी कहे इम शिवपुर लीजिये ॥२२॥

कुछ काम नहीं आवे

सोनारा के पावणो आवे तो घडे सोनो चादी,
कुम्भार के आवे तासु हाडला घडावे रे।
दरजी के आवे तासुं वस्त्र सिवावे और,
छीपा के आवे तासु चुंदडी वधावे रे ॥
खाती के आवे तासुं लक्कड़ घडावे और,
किसान के आवे तासुं हल ने हकावे रे।
'खूबचन्द' कहै सत सुनो हो विवेकवंत,
वाणिया का पावणा न काम कुछ आवे रे ॥२३॥

पिता पुत्र का न्याय

पिता ले पुत्र के तांई, व्याहन आयो चलाई,
सगो रूस गयो तब रुपैया गिणावे रे।
एते बीद आई नीद पिता कहै शीघ्र आई,
उठ बेटा फेरा ले ले, सगो परणावे रे ॥
जान्या है वहुत लेरा, जाने तूं देई दे फेरा,
मीठी मीठी नीद आवे मोने क्यो जगावे रे।
'खूबचन्द' कहे अणी दृष्टात सुजाण नर,
धर्म मे प्रमाद किया पार किम पावे रे ॥२४॥

झूठा बोला नर

धनवन्त नर जाँके झूंठ को नही है डर,
हासी में कहत, धावो धावो चोर आया है ।
तुरत सुणी ने कई सुभट दौडी ने आवे,
ताको कहे मैं तो यूंही वचन सुनाया है ॥
ऐसे ही करत ताके, एक दिन चोर आया,
दौडो दौडो कहे पण कोई न सिधाया है ।
'खूबचन्द' कहे सत, प्रतीत उठावो मत,
प्रतीत उठाई जाने प्राण ही गमाया है ॥२५॥

कौन काम की

राज महाराज पायो, घोडा गज राज पायो,
खजाना अखूट फिरे आण निज नाम की ।
कुटुम्ब संयोग पायो, उत्तम सुभोग पायो,
शरीर निरोग है, अत्यन्त छबि चाम की ॥
ऊंचा सा आवास पायो, दासी अने दास पायो,
बुद्धि को प्रकाश निगरानी सब काम की ।
'खूबचन्द' कहे भाई, सब ही सपति पाई,
दया धर्म बिना जिन्दगानी कौन काम की ॥२६॥

गूजरी मेवाड़ की

नन्दजी के लाल, थारो नाम गऊपाल,
तू तो गऊआँ चरावे, बैठो रहे छाया झाड़ की ।
दौड़्यो दौड़्यो आवे नेडे, म्हाके क्यो लग्यो है केडे,
गरीबा ने छेडे थारी फूटी हिया नाड की ॥
इच्छा व्हे तो मान कान, दूध ने दही को दान,
दागा[1] थने आवे जद मौसम असाड की ।
'खूबचन्द' कहे कानो देखत ही रह गयो,
जबाब देई ने गई गूजरी मेवाड की ॥२७॥

---

१ देंगी ।

मारवाड़ी साधुओं का कहना

मेवाड़ मालवा माही माँकण घणां छे भाई,
वटका भरे छे पूरी नीद नही आवे रे ।
मच्छर मकोडा वटे घणा पाड़े फोडा,
और डाँस माँस सभी चटा चट चटकावें रे ।।
उत्तराध्येन सूत्र का दूसरा अध्येन माही,
पाचमो परीसो सहतां दोहिलो वतावे रे ।
'खूबचन्द' कहे इम वोले मारवाडी साधु,
मेवाड मालवा माही किण विध आवे रे ।।२८।।

बिना चतुराई वाली औरत

माथा ऊपर टाट ठाठ, जुँआँ को छटके,
गूगा भरिया नाक, आख मे कीचड़ लटके ।
सेडो[1] निकले वाहर, लार मुडा से पटके,
'खूव' सूगली नार, देख मारुजी मटके ।।२९।।

चौमासो करावनो

चारो ही मास वखाण करे, सम भाव से सूत्र सुणावणो है ।
चौपी रसीली हो कठ कला, मालु राग मल्हार को गावणो है ।।
कोडी को खर्च भी नाय पडे, वस धर्म की ज्योत दिपावणो है ।
खूव कहे ऐसे सत मिले तव, क्योनी चोमासो करावणो है ।।३०।।

खुशी है

गाज आवाज मयूर सुनी खुश, चन्द्र को देख चकोर खुशी है ।
मात को देख के पुत्र खुशी, और ज्यू चकवो रवि देख खुशी है ।।
फ़ूल सुगधित देख अली[2] खुश, चातक मेघ को देख खुशी है ।
या विध 'खूव' कहे निशिवासर, धर्मी को देख के धर्मी खुशी है ।।३१।।

सुधारे

ज्यो दरजी पट सार अमोलक, वेंत करी कटका कर डारे ।
ज्यो तरखान[3] करौत वसूले से, काष्ठ को फाड के छोड़ उतारे ।।

---

१ रेंट, नाक का श्लेष्म । २ भौंरा । ३ वढई ।

ज्यों कुम्भकार मिटी-वरभाजन, लेकर थापक थापक मारे।
या विध 'खूब' कहे गुरु देव भी सच्ची सुनाय के जन्म सुधारे ॥३२॥

पंजाब की बोल चाल की भाषा

असी[१]-असी तुसी[२]-तुसी साडे[३]-साड़े सानु[४]-सानु,
काली[५]-काली कोल[६]-कोल कुडी[७]-कुडी काम मे।
जेडा[८]-जेड़ा केडा[९]-केड़ा लोड[१०]-लोड़ चगा[११]-चंगा,
तिमि[१२]-तिमि रोला[१३]-रोला गल[१४]-गल गाम मे ॥
चुक[१५]-चुक टुरो[१६]-टुरो काकी[१७]-काकी काको[१८]-काको,
आखो[१९]-आखो मुँडो[२०]-मुँडो नीको[२१]-नीको नाम मे।
'खूबचन्द' कहे स्याणा, झूठी होतो पूछ लेणा,
सुणी-सुणी कहूँ ऐसी बोली है पंजाब मे ॥३३॥

पहेलियां

एक बगीचे मे पुत्र पिता अरु, तीजो सालो अने[२२] चौथो बहनोई।
पांचमो मामो ने छट्टो भाणेज है, याँ के सिवा बस और न कोई ॥
दो दो लड्डू लेके एक ही थाल मे, जीम लिये बस शामिल होई।
'खूब' कहे लड्डू थे कितने, जो जोड बतावे सो पडित सोई ॥३४॥
(उ०—लड्डू ६ थे। जीमने वाले पुत्र, पिता, और साला, ये तीन थे)

मुनिराज

इण जिन शासन मे केइ मुनिराज हुवे,
ज्ञान के भडार जिनमारग दीपावे रे।
तिरन तारन जहाज, सारे आत्मा का काज,
ऐसे मुनिराज नित्य मिथ्यात्त्व उड़ावे रे ॥
कोई मे क्षम्या का गुण, कोई मे विनय का गुण,
व्यावच[२३] का गुण केई स्वर्ग सिधावे रे।
'खूबचन्द' कहे मेरे गुरु नन्दलालजी के,
चरण नम्याँ से भव भव सुख पावे रे ॥३५॥

---

१ हम। २ तुम। ३ हमारे। ४ मुझे। ५ जल्दी। ६ नजदीक। ७ लडकी। ८ जौन सा। ९ कौन सा। १० चाह। ११ अच्छा। १२ औरते। १३ जौर का शब्द। १४ वात। १५ उठा ली। १६ चलो। १७ छोटी लडकी। १८ छोटा लड़का। १९ बोलो। २० बड़ा लडका। २१ छोटा लड़का। २२ और। २३ वैयावच्च-सेवा।

पंचम आरे का बयान

(तर्ज —महला मे वैठी राणी कमलावती)

साभल हो गौतम, दुखमो आरो तो होसी पाचमो ।
भाखे सिरी वीर जिनन्द ।।टेर।।

मोटा नगर तो होसी गामडा, गाम जो होवेला मसाण ।
उत्तम कुल ना तो छोरा छोकरी, दीसेला दास समान ।।१।।
राजा तो होसी जम्म[1] सारिखा, लालची होसी परधान[2] ।
रूडा[3] तो कुल नी केही कामण्या,[4] होवेला गणिका समान ।।२।।
पूतर पोता ने छांदे चालसी, शिष्य गुरूना वोलेगा अपवाद ।
मोटा तो कुलनी के ही अस्तरया[5], लज्जा शरम देसी छांड ।।३।।
हिंसक अनारज सुखिया होवसी, दुखीया होवेला शाहजन लोक ।
काल दुकाल तो पड़सी अति घणा, उंदर सर्पादिक होसी थोक ।।४।।
ब्राह्मण तो होसी धन ना लोभीया, हिंसा मे कहेला वहु धर्म ।
घणा मिथ्याती होसी मानवी, मुश्किल निकलेगा जांको भर्म ।।५।।
रस मे सरसाई थोड़ी होवसी, आयु वल पावेलो पूरा नाय ।
चौमासा लायक क्षेतर साधु ने, थोड़ा मिलेगा भरत मांय ।।६।।
साधु श्रावक नी पडिमा विच्छेदसी, शिष्य गुरूना होवेला अविनीत ।
गुरू शिष्य ने पूरा नही भणावसी, मुश्किल मिलेगा जांको चित्त ।।७।।
कुमाणस क्लेशी होसे मोकला, अल्प होवेला न्यायवन्त ।
हिन्दु राजा तो हेटा होवसी, मलेच्छ होवेला जाके महंत ।।८।।
उत्तम कुलना तो राजा वाजसी,करसी केही खोटा खोटा न्याय ।
जेहना तो घर मे लोढो लाधसी, ते धनवन्त कहे वाय ।।९।।
इत्यादिक केही कारण जाणजो, भाख्यो श्री वीर जिनन्द ।
मुनि नन्दलाल तणा शिष्य धर्म से, पावेला अधिक आनन्द ।।१०।।

---

१ यम २ प्रधान-दीवान ३ उत्तम ४ कामनिया ५ स्त्रियां ।

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१४	सुणो	सुने
१५	१२	गरु	गुरु
२३	१८	तरी	तेरी
२७	२४	आस्ता६	आस्ता३
२६	११	जोवन	जोबन
३१	२१	जोवन	जोबन
३१	२७	पसठ	पैसठ
३२	६	गासा	गासा२
३२	२२	पासाँ	पासाँ२
३८	२१	वास	वास
३६	११	की	सी
४१	१	पूरव	पूरब
४१	२२	काची काया	काचीकाया२
४४	१७	का	को
४५	२१	लगाय	लगार
५२	१८	फेरा	फेरा
६१	१६	ऐसे	ऐसो
६३	१७	दत	दत
६५	१८	अपूरव	अपूरब
६८	१४	ाशा	आशा
७०	३	वहीहे	वही हैं देव
७५	५	करक	करके
७८	८	छोड दु	छोड दे
८०	१	ानत	नित

		निहार	नाल
८१	२५	शुध्र	शुद्ध
८५	१२	तने	तेने
८६	१८	गये,	गये,तेरी
८७	२४	हल्की	हल्की गाली
८८	२	सताप	सत्ताप
६३	१३	ताल	तोल
६३	१४	वालो	वोलो
६३	१४	वाल	वोल
६३	१५		॥ ३ ॥
६४	४	,, ,,	
६४	८	तजा	तजो
६४	१७	जमाराजा	जमाराजी
६४	२३	या	यो
६५	२६	जा	जी
६६	२	वोल	वोल
६६	४	धीर	वीर
६७	१	११८	११६
१०२	१२	उछल	उछल २
१०४	५	जाओ	आजो
१०४	७	वार	वाट
१०४	२५	वनडा	वनडा
१०५	८	की देख	की छवि देख
१०५	८	देख छवि	+
१०५	८	सुर नर	सुर नर मन
१०५	१६	वांधा	वाधा
१०६	४	हुई	हुई, काई
१०८	३	ही	हो
१०८	१२	वली	वलि
१०८	२६	सेवा	सेना
१०६	२५	पावो	पायो
११२	२५	आराधना	आराधता
११२	२६	कह	कहे

११३	२	वरसे	वरसे
११४	१६	पूरव	पूरव
११५	२१	वाद्या	वाद्या
११७	२	तुझ	तुझे
११८	६	अडोल	अडोल के
११८	२५	ऐवो	ऐमो
११६	६	वरसाया	वरसाया
१२०	२१	कपिल	कपिल
१२१	६	बधायो	वधायो
१२२	२०	नन्दला	नन्दलाल
१२४	६	जडया	जड्या
१२४	१६	जमुना	जमुनाजी
१३१	१२	वरसे	वरसे
१३२	१८	वारम्वार	वारम्वार
१३३	८	क़ुरार	मुरार
१३३	२४	न	ना
१३५	६	वहु	चहु
१३६	२	वरसाया	वरसाया
१३६	६	कपिल	कपिल
१३८	५	कठ	कठ
१४०	६	आय	आप
१४२	१४	सुमिति	सुमति
१४६	५	मघवाजी	मघव जी
१४६	२०	आय	आप
१४७	१६	वस्ती	वस्नी
१४६	१२	पूरव	पूरव
१५३	२४	दीजे	दीजे सभी
१५४	१३	परवरया	परवरया
१५५	२८	पूरव	पूरव
१५८	१	कान्त	गत
१५६	१०	पसरयो	पसरयो
१५६	२४	गयी	गया
१६०	१६	आपनो	आपने

१६१	२१	वीद	वीद
१६४	५	,,	॥ टेर ॥
१६४	१४	करजोडी	करजोड
१६५	१२	कहलावेजी	कहावेजी
१६६	६	चूनरी	चूमरी
१६६	१४	ल,	लो
१६८	६	नरपति	तरपति
१६८	१६	प्रति	प्रीति
१७१	२५	फूली	खिली
१८१	४	जवाव	जवाव
१८१	२८	ठार	ठौड
१८४	३	पूरी	पुनी
१८६	२४	आय	आप
१८७	१०	मुठ	मुढ
१६६	२	कामायाजी	कमायाजी
१६७	२५	नन्दलालजी	नन्दलाल
१६६	४	२	३
२०६	४	पच	पच
२१०	१०	पूरव	पूरव
२१०	२७	पूरव	पूरव
२१०	२८	पूरव	पूरव
२१०	२६	पूरव	पूरव
२१७	१५	आय	आप
२१८	४	वरतायाजी	वरतायाजी
२२७	२०	ब्राह्मण	ब्राह्मण
२३०	२६	रहो	रयो
२३०	२६	रहो	रयो
२३०	२८	वणायने	वणायने
२३१	१०	छ	छू
२३१	२५	चूकतो,	चूकतो, तो
२३३	१३	लशाणा	लशाणी
२३४	२६	कुण	कुल
२३५	१६	हो ही	हो सी

२३६	२	उमग	उमग
२३८	२	तणा	तणो
२३८	६	चल्यो	चाल्यो
२३८	२१	दो	दी जे
२४१	१९	भार्या	भाया
२४१	२७	रग	रग
२४२	१३	तस्यभार्ज्या	तसभार्या
२४४	३	वारम्वार	वारम्वार
२४८	८	विपन	विपिन
२४८	१८	मारो	हमारो
२५२	२१	अग	अग
२५७	२२	क्षत्र	क्षेत्र
२५८	१	आऊ	आऊ
२६०	१	साहिवा	साहिबा
२६३	४	वारी	वारी
२६३	१९	वकत	वक्त
२६३	२३	ब्राह्मण	ब्राह्मण
२६३	१९	मीलि	मील
२६४	५	मीलि	मील
२६५	१	राजानीरे	राजानोरे
२६६	२	समानीरे	समानोरे
२७२	४	कीच	कीच
२७२	१२	खुब	खूब
२७५	१५	मान	मान
२७८	७	हे जो	हे जो
२८२	३	लक्ष्मीवाई	लक्ष्मीवाई